WHITE BOOK

COACH UP IAS
YOUR SELECTION Is OUR BUSINESS

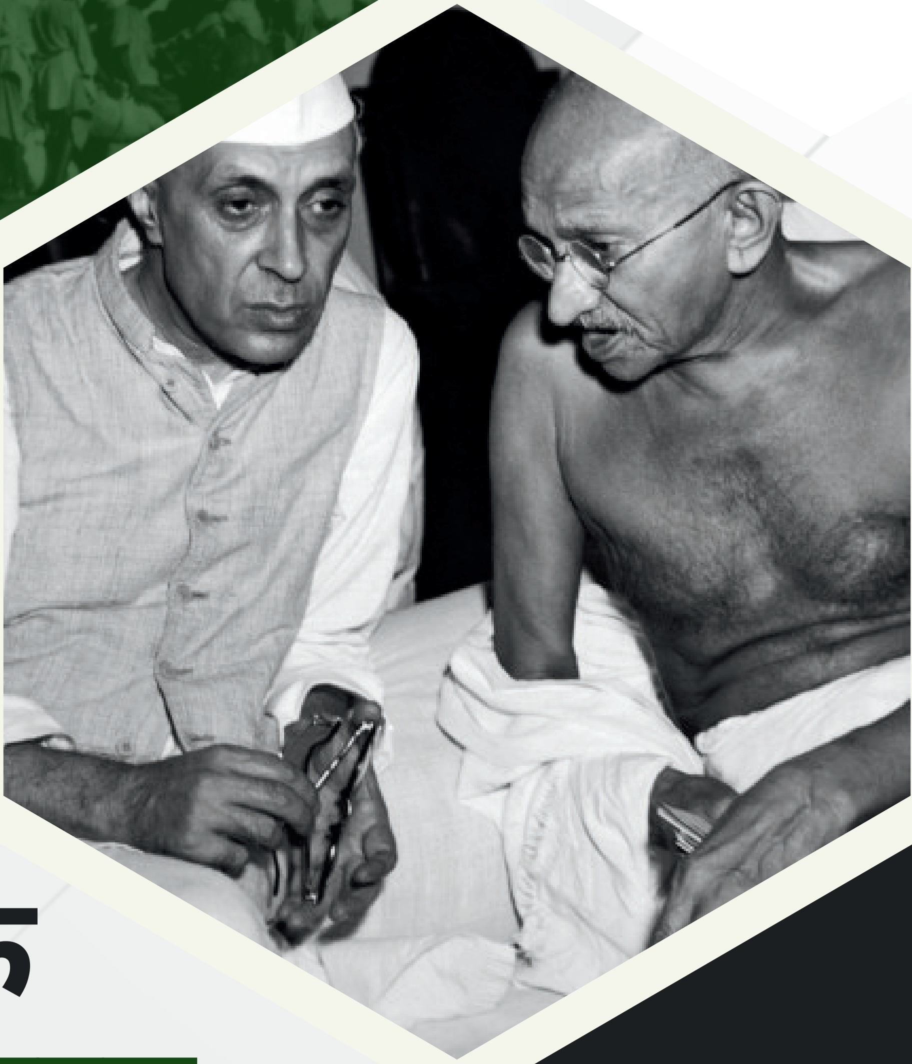

स्वतंत्रता के बाद का भारत

सिविल सेवा परीक्षा के लिए

IAS COACH ASHUTOSH SRIVASTAVA

IAS COACH MANISH SHUKLA

Contact Us.

8009803231 / 9236569979

Saarthi

THE COACH

1 : 1 MENTORSHIP BEYOND THE CLASSES

- **Diagnosis** of candidates based on background, level of preparation and task completed.
- **Customized solution** based on Diagnosis.
- One to One **Mentorship.**
- Personalized schedule **planning.**
- Regular **Progress tracking.**
- **One to One classes** for Needed subjects along with online access of all the subjects.
- Topic wise **Notes Making sessions**.
- One Pager **(1 Topic 1 page)** Notes session.
- **PYQ** (Previous year questions) Drafting session.
- **Thematic charts** Making session.
- **Answer-writing** Guidance Program.
- **MOCK Test** with comprehensive & swift assessment & feedback.

Ashutosh Srivastava

(B.E. , MBA, Gold Medalist)

Mentored 250+ Successful Aspirants over a period of 12+ years for Civil Services & Judicial Services Exams at both the Centre and state levels.

Manish Shukla

Mentored 100+ Successful Aspirants over a period of 9+ years for Civil Services Exams at both the Centre and state levels.

1 स्वतंत्रता के बाद भारत का राजनीतिक इतिहास

स्वतंत्रता के बाद के राजनीतिक घटनाक्रम

स्वतंत्रता के बाद के राजनीतिक घटनाक्रम

एक दलीय शासन (1947-1964) → विपक्ष का उद्भव → नेहरू युग का पतन → कांग्रेस का पुनरुत्थान → गठबंधन और क्षेत्रीय राजनीति का उदय → राजीव गांधी युग → आपातकाल और उसके परिणाम

1. **एक दलीय शासन (1947-1964):** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रमुख नेता जवाहरलाल नेहरू, स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री थे। नेहरू का सपना एक धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी और लोकतांत्रिक गणराज्य का निर्माण करना था। इसी अवधि के दौरान भारत ने अपना संविधान (1950) लागू किया, प्रमुख विकास परियोजनाओं को प्रारंभ किया और उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थापना की।
2. **विपक्षी दलों का उदय (1947-1964):** कांग्रेस के प्रभुत्व के बावजूद भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, भारतीय जनसंघ (भाजपा का पूर्ववर्ती) और अन्य विपक्षी दलों का उदय होना शुरू हो गया।
3. **नेहरू-युग की समाप्ति और परिवर्तन:** वर्ष 1964 में नेहरू की मृत्यु के बाद, लाल बहादुर शास्त्री ने कुछ समय के लिए पदभार संभाला। हालाँकि, वर्ष 1966 में उनकी आकस्मिक मृत्यु के बाद, नेहरू की बेटी, इंदिरा गांधी ने सत्ता संभाली। उनकी दृढ़ नेतृत्व शैली और लोकलुभावन उपायों ने नेहरूवादी युग से एक अलग बदलाव को निरूपित किया।
4. **कांग्रेस का पुनरुत्थान (1969-1973):** इंदिरा गांधी का कार्यकाल सत्ता के केंद्रीकरण और बैंकों के राष्ट्रीयकरण तथा प्रिवी पर्स के उन्मूलन जैसी लोकलुभावन नीतियों के लिए जाना जाता है।
5. **आपातकाल एवं प्रभाव (1975-1977):** इंदिरा गांधी द्वारा घोषित आपातकाल जो भारत के राजनीतिक इतिहास में एक निर्णायक अवधि थी, ने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को स्थगित कर दिया। इसके बाद जनता पार्टी के नेतृत्व में केंद्र में पहली गैर-कांग्रेसी सरकार का गठन हुआ।
6. **राजीव गांधी युग:** इंदिरा गांधी की हत्या के बाद, उनके पुत्र राजीव गांधी प्रधानमंत्री पद पर आसीन हुए, जिसने भारत के राजनीतिक इतिहास में एक नए चरण की शुरुआत की।
7. **1990 का दशक और नई सहस्राब्दी में राजनीतिक परिवर्तन:** इस अवधि की विशेषता राष्ट्रीय स्तर पर गठबंधन की राजनीति और क्षेत्रीय दलों का उदय था, जिसकी परिणति वर्ष 1999, 2014 और 2019 में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) सरकार के गठन के रूप में हुई।

स्वतंत्र भारत के प्रथम चुनाव

संविधान को अंतिम रूप दिए जाने के बाद जनवरी, 1950 में भारत निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई, जिसके प्रथम मुख्य निर्वाचन आयुक्त सुकुमार सेन थे।

प्रथम चुनाव के आयोजन में निर्वाचन आयोग के समक्ष उपस्थित प्रमुख चुनौतियाँ

- **निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन:** भारत के भौगोलिक आकार को देखते हुए, चुनावी सीमाओं का निर्धारण एक बहुत वृहत कार्य था।
- **मतदाता सूची तैयार करना:** यह प्रक्रिया अनेक समस्याओं से भरी हुई थी; उदाहरण के लिए, लगभग चार मिलियन महिलाओं के नाम दर्ज नहीं हो पाए तथा वे किसी विशेष व्यक्ति की पत्नी या पुत्री के रूप में ही दर्ज थीं।
- **चुनावों का स्तर:** ये इतने बड़े पैमाने के पहले चुनाव थे, जिसमें 170 मिलियन पात्र मतदाता 489 संसद सदस्यों और 3,200 विधायकों का चुनाव करने वाले थे।
- **निरक्षरता:** केवल 15% मतदाता ही साक्षर थे, इसलिए चुनाव आयोग को सर्वहित के अनुसार मतदान पद्धति अपनानी पड़ी।
- **सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार:** भारत ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार का विकल्प चुना, जिसके तहत सभी वयस्कों को मताधिकार प्रदान किया गया, हालाँकि, उस समय तक कई यूरोपीय देशों ने भी ऐसा कदम नहीं उठाया था।

जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950: अप्रैल, 1950 में संसद में जनप्रतिनिधित्व अधिनियम पारित किया गया, जो मतदाताओं की अहर्ताओं, मतदाता सूची तैयार करने, निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करने, संसद और राज्य विधानसभाओं में सीटों का आवंटन , भ्रष्ट आचरण के तहत सीटों की अयोग्यता आदि से संबंधित प्रावधान करता है।

चुनावी प्रक्रिया का परिणाम:

- **मतदान:** कुल **पात्र मतदाताओं में से 46.6% ने** मतदान किया, जिसने लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भारतीय नागरिकों की गहन भागीदारी को दर्शाया।
- **प्रतिस्पर्द्धी चुनाव:** प्रत्येक सीट पर **औसतन चार उम्मीदवार थे। इससे लोकतंत्र की शुरुआत से ही, भारतीय राजनीतिक परिदृश्य की प्रतिस्पर्द्धी प्रकृति का पता चलता है।**
- **परिणामों की स्वीकृति: चुनाव के नतीजों को व्यापक रूप से निष्पक्ष माना गया, यहाँ तक कि उन लोगों द्वारा इसे स्वीकृत किया गया जो जीत नहीं पाए।** इस स्वीकार्यता ने भारत की चुनावी प्रक्रिया की मजबूती और भारत की लोकतांत्रिक संस्थाओं की वैधता को रेखांकित किया।

इस अवधि के प्रमुख मुद्दे

पार्टी नेतृत्व और सरकार संबंधी विवाद

- स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस पार्टी के नेतृत्व ने पार्टी के नेताओं और सरकार के मध्य संबंधों पर बहस छेड़ दी।
- जहाँ जे.बी. कृपलानी के नेतृत्व वाले एक गुट ने पार्टी अध्यक्ष के लिए नीति-निर्माण में प्रत्यक्ष भूमिका का प्रस्ताव रखा, वहीं नेहरू और सरदार पटेल के नेतृत्व वाले दूसरे गुट ने सरकार की जवाबदेही पार्टी के प्रति न होकर विधायिका के प्रति रखने की वकालत की।
- यह विवाद अंततः नेहरू के पक्ष में रहते हुए सुलझ गया जब पार्टी सर्वोच्चता के समर्थक पुरुषोत्तम दास टंडन ने कांग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे दिया, जिससे नेहरू के अध्यक्ष बनने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

नेहरू-पटेल मतभेद

विरोधाभास के बिंदु	नेहरू	पटेल
आर्थिक नीति	नेहरू ने योजना आयोग और पंचवर्षीय योजनाओं के सोवियत मॉडल का अनुसरण करते हुए एक समाजवादी भारत की कल्पना की, जिससे निजी क्षेत्र का दायरा सीमित हो गया।	• दूसरी ओर, पटेल सामाजिक समृद्धि को बढ़ावा देने के लिए धन सृजन को एक महत्त्वपूर्ण कारक मानते थे।
विदेश नीति	• इजराइल को मान्यता देने का विरोध किया। • संभावित सुरक्षा खतरों को नजरअंदाज करते हुए चीन को मित्र माना। • तिब्बत पर चीनी कब्जे को एक पूर्वनिर्धारित परिणाम के रूप में स्वीकार कर लिया गया। • कश्मीर मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने का निर्णय लिया गया।	• इजराइल को मान्यता देने में देरी पर सवाल उठाया। • उन्होंने चेतावनी दी कि भारत की मित्रता के बावजूद चीन भारतीय भावनाओं का प्रतिकार कर सकता है। • तिब्बतियों के अधिकारों की रक्षा करने में भारत की असमर्थता पर वो बहुत व्यथित थे। • कश्मीर मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र में ले जाने के निर्णय से असहमत थे।
सिविल सेवाओं पर मत	नेहरू भारतीय सिविल सेवा की आलोचना करते हुए कहते थे कि यह न तो भारतीय है, न ही सिविल है, न ही कोई सेवा है।	पटेल ने अखिल भारतीय सिविल सेवा को नए स्वतंत्र राष्ट्र को एकजुट करने के अभिन्न अंग के रूप में देखा। उनके इस दृष्टिकोण के लिए उन्हें भारत में सिविल सेवकों के **'संरक्षक संत' या जनक के रूप में जाना जाता है।**
रियासतों के एकीकरण के प्रति दृष्टिकोण	नेहरू आमतौर पर रियासतों के साथ सौम्य और अनुनयी दृष्टिकोण रखने के पक्षधर थे।	उप प्रधानमंत्री और गृह मंत्री के रूप में पटेल ने 500 से अधिक रियासतों को भारतीय संघ में शामिल करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने एक कठोर और दृढ़ दृष्टिकोण अपनाया, जिसके कारण उन्हें **'भारत के लौह पुरुष' की उपाधि मिली।**
आधुनिक भारत का दृष्टिकोण	नेहरू ने भारत को एक **धर्मनिरपेक्ष, वैज्ञानिक और समाजवादी गणराज्य के रूप में देखा था।** उनकी नीतियों का उद्देश्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी तथा धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को बढ़ावा देना था।	पटेल ने भारत को एक **सहकारी संघ** के रूप में परिकल्पित किया जिसमें एक मजबूत केंद्रीय सत्ता हो। उन्होंने विविध भाषाई और क्षेत्रीय समूहों के बीच एकता तथा अखंडता की आवश्यकता पर जोर दिया।

इन मतभेदों के बावजूद, विशेष रूप से गांधीजी की मृत्यु के पश्चात्, नेहरू और पटेल ने आपसी सम्मान तथा सहयोग बनाए रखा एवं अपनी एकता को राष्ट्र के लिए आवश्यक माना।

भारत में एक दलीय शासन का युग (1947-1964)

प्रस्तावना

अपने उत्तर-औपनिवेशिक समकक्षों के मध्य भारत ने स्वतंत्रता के बाद लोकतंत्र के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को विशिष्ट रूप से दृढ़ बनाए रखा। कांग्रेस पार्टी के प्रभुत्व के बावजूद, भारत ने मजबूत संसदीय संस्थाओं द्वारा समर्थित एक प्रतिस्पर्द्धी बहुदलीय प्रणाली को बढ़ावा दिया।

प्रारंभिक आम चुनावों में कांग्रेस का प्रभुत्व

- **प्रथम आम चुनाव:**
  - **वर्ष 1952** के प्रथम आम चुनावों ने कांग्रेस की स्थिति को देश की अग्रणी राजनीतिक पार्टी के रूप में मजबूत कर दिया।
  - पार्टी ने 489 लोकसभा सीटों में से 364 सीटें हासिल कीं, जो भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी से कहीं अधिक थी, जिसने केवल 16 सीटें जीतीं।
  - त्रावणकोर-कोचीन, मद्रास और उड़ीसा को छोड़कर, कांग्रेस ने सभी राज्यों के चुनावों में विजय प्राप्त की, जिससे राज्य और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर उसकी सत्ता स्थापित हो गई।
- **द्वितीय एवं तृतीय आम चुनाव:**
  - वर्ष 1957 और वर्ष 1962 के चुनावों में कांग्रेस पार्टी ने अपनी पकड़ बरकरार रखते हुए तीन-चौथाई लोकसभा सीटें जीत लीं।
  - कोई भी विपक्षी पार्टी कांग्रेस द्वारा जीती गई सीटों का दसवाँ हिस्सा भी नहीं जीत पाई।
  - राज्य स्तर पर कांग्रेस को छिटपुट चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिनमें सबसे उल्लेखनीय थी, केरल में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार-जो पहली लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार थी।

कांग्रेस की सफलता के पीछे के प्रमुख कारक

कांग्रेस पार्टी की सफलता का श्रेय कई कारकों को दिया जा सकता है:

- **राष्ट्रीय आंदोलन की पृष्ठभूमि**
  - भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (INC) ने भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का नेतृत्व किया।
  - महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद और अन्य नेताओं के नेतृत्व में पार्टी ने लोगों के मन में विश्वास तथा आशा की भावना उत्पन्न की थी।
  - परिणामस्वरूप, कांग्रेस को स्वतंत्रता आंदोलन के पर्याय दल के रूप में देखा गया, जिससे स्वतंत्रता के बाद इसकी लोकप्रियता में वृद्धि हुई।

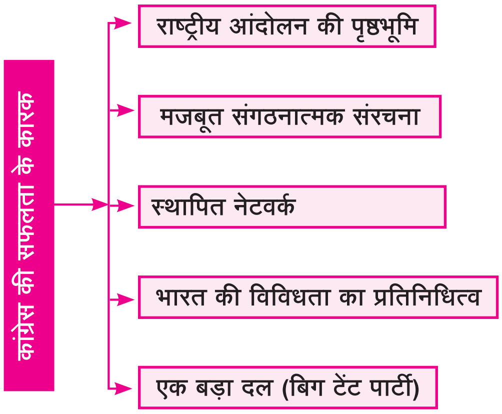

- **संगठनात्मक शक्ति:**
  - कांग्रेस का ढाँचा अत्यधिक मजबूत था जो राष्ट्रीय से लेकर स्थानीय स्तर तक फैला हुआ था।
  - इसकी संगठनात्मक शक्ति अद्वितीय थी, राज्य कांग्रेस समितियाँ और जिला कांग्रेस समितियाँ पूरे भारत में प्रभावी ढंग से कार्य कर रही थीं।
  - इस सुस्थापित नेटवर्क ने पार्टी को जमीनी स्तर पर नागरिकों तक पहुँचने में मदद की, जिससे इसकी साख और बढ़ गई।
- **स्थिरता और निरंतरता:**
  - कांग्रेस पार्टी ने शासन में स्थिरता और निरंतरता प्रदान की, जिससे औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्र राष्ट्रवाद तक का बदलाव सुचारू रूप से सुनिश्चित हुआ।
  - बदलती परिस्थितियों के अनुकूल ढलने, विविध हितों को समायोजित करने और राजनीतिक आम सहमति बनाए रखने की क्षमता ने कांग्रेस की स्थायी सफलता में योगदान दिया।
- **कमजोर विपक्ष:**
  - स्वतंत्रता के तत्काल बाद की विपक्षी पार्टियाँ जैसे- सोशलिस्ट पार्टी, किसान मजदूर प्रजा पार्टी और हिंदू राष्ट्रवादी भारतीय जनसंघ जैसी विपक्षी पार्टियाँ अपेक्षाकृत कमजोर थीं।
  - इन दलों ने अखिल भारतीय स्तर पर अपनी मजबूती खो दी थी और ये कांग्रेस के खिलाफ एक मजबूत मोर्चा पेश करने में असमर्थ रहीं जिसने कांग्रेस की प्रारंभिक सफलता में योगदान दिया।
  - उदाहरण के लिए, भारतीय जनसंघ मुख्य रूप से हिंदू राष्ट्रवादी विचारधारा वाली उत्तर भारत केंद्रित पार्टी थी, जबकि सोशलिस्ट पार्टी और किसान मजदूर प्रजा पार्टी अक्सर आंतरिक वैचारिक मतभेदों तथा नेतृत्व संबंधी मुद्दों से ग्रस्त रहती थीं।
  - परिणामस्वरूप, ये पार्टियाँ स्वतंत्रता के बाद के शुरुआती वर्षों में कांग्रेस को कड़ी चुनौती देने में असमर्थ रहीं।
- **समावेशिता:**
  - कांग्रेस को इस बात पर गर्व था कि वह एक 'बड़ा दल' है, जिसमें विभिन्न विचारधाराओं, जातियों और हितों को शामिल किया गया है।
  - इसमें हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, महिलाएँ आदि सहित विभिन्न सामाजिक वर्गों को प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया।
  - इसकी समावेशिता की नीति इसके नेतृत्व और राजनीतिक नियुक्तियों में प्रतिबिंबित होती है, जिनमें प्रायः विविधता प्रदर्शित होती थी।

एकछत्र संगठन के रूप में कांग्रेस

- **अभिजात्यवाद से विविधता की ओर बदलाव:** प्रारंभ में कांग्रेस पार्टी पर शहरी, उच्च जाति और उच्च मध्यम वर्ग के व्यक्तियों का वर्चस्व था। समय के साथ, यह एक विविध गठबंधन में बदल गया, जिसमें उद्योगपतियों, किसानों, शहरी निवासियों, ग्रामीणों, मालिकों और श्रमिकों सहित भारतीय आबादी के एक व्यापक घटक का प्रतिनिधित्व किया गया।
- **स्वतंत्रता के बाद का विकास:** भारत की स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस पार्टी, देश की विशाल विविधता के एक सूक्ष्म रूप में परिवर्तित हो गई जिसमें विभिन्न सामाजिक और जनसांख्यिकीय तत्त्व शामिल थे।
- **सर्वसम्मत नेतृत्व का दृष्टिकोण:** पार्टी ने अपने नेतृत्व में व्यापक सर्वसम्मति वाले विचारों को चरितार्थ किया और एक ऐसा वातावरण तैयार किया, जिसमें क्रांतिकारियों तथा शांतिवादियों से लेकर रूढ़िवादी, कट्टरपंथियों, अतिवादियों एवं उदारवादियों तक, भिन्न-भिन्न वैचारिक दृष्टिकोणों वाले व्यक्तियों को तरजीह दी गई थी।
- **समाजवादियों का समायोजन:** अन्य राजनीतिक दलों या समूहों से संबद्ध व्यक्तियों की सदस्यता पर प्रतिबंध लगाने वाले संशोधन के बाद भी, कई समाजवादियों ने कांग्रेस के साथ जुड़े रहने का निर्णय लिया, जो पार्टी की व्यापक सोच को दर्शाता है।
- **सामंजस्य और समायोजन के लिए मंच:** कांग्रेस पार्टी एक ऐसे मंच के रूप में विकसित हुई जिसने विभिन्न वर्गों, क्षेत्रों और क्षेत्रीय हितों के बीच सामंजस्य, समन्वय तथा समायोजन की सुविधा प्रदान की। यह एक एकीकृत इकाई के रूप में संचालित हुई, जिसने विभिन्न हितों और दृष्टिकोणों के सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व की अनुमति दी।
- **सहिष्णुता और संवेदनशीलता:** पार्टी ने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों के प्रति असाधारण सहिष्णुता का प्रदर्शन किया और विभिन्न हितों के प्रति संवेदनशीलता बनाए रखी। इस दृष्टिकोण ने एक समावेशी राजनीतिक संगठन के रूप में इसकी स्थिति को और मजबूत किया।

दार्शनिक आधार: गांधीवादी दर्शन और मौलाना आजाद का योगदान

गांधीवादी दर्शन:

- गांधीजी का अहिंसावादी दर्शन कांग्रेस पार्टी की नैतिक शक्ति का एक प्रमुख स्तंभ था।
- सत्याग्रह, अहिंसा, स्वराज, सादगी और पर्यावरणीय स्थिरता पर उनका ध्यान, पार्टी के वैचारिक अभिविन्यास का आधार बन गया।
- इसके अलावा, सामाजिक न्याय और समानता के लिए उनका संघर्ष तथा 'सर्व शिक्षा' पर जोर ने कांग्रेस पार्टी के राजनीतिक एजेंडे एवं सार्वजनिक पहुँच को गहराई से प्रभावित किया, जिससे जनता के बीच इसकी लोकप्रियता बढ़ गई।

मौलाना अबुल कलाम आजाद का योगदान

मौलाना आजाद कांग्रेस पार्टी के एक दिग्गज नेता थे और कांग्रेस की सफलता में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान था:

स्वतंत्रता पूर्व भारत में योगदान

- **स्वतंत्रता संग्राम:** मौलाना आजाद एक सक्रिय स्वतंत्रता सेनानी थे, जो अहिंसा और हिंदू-मुस्लिम एकता की पैरवी करते थे। उन्होंने वर्ष 1923 और वर्ष 1940-1946 में कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में कार्य किया।
- **द्वि-राष्ट्र सिद्धांत का विरोध:** मौलाना आजाद ने जिन्ना के द्वि-राष्ट्र सिद्धांत का विरोध किया और सभी धर्मों तथा संस्कृतियों के लिए एक एकजुट, सामंजस्यपूर्ण भारत के विचार का समर्थन किया।
- **पत्रकारिता और साहित्यिक कार्य:** एक पत्रकार और लेखक के रूप में, मौलाना आजाद ने उर्दू समाचार पत्र अल-हिलाल की स्थापना की तथा "इंडिया विन्स फ्रीडम" की रचना की, जिसमें उन्होंने अखंड भारत का अपना दृष्टिकोण साझा किया।

स्वतंत्रता पश्चात् भारत के लिए योगदान

- **शिक्षा मंत्री:** मौलाना आजाद ने भारत की आधुनिक शिक्षा प्रणाली की स्थापना की, अनुसंधान को बढ़ावा दिया, आईआईटी और यूजीसी जैसे संस्थानों की स्थापना की तथा 'सर्व शिक्षा' के सिद्धांत को आगे बढ़ाया।
- **संस्कृति और विरासत को बढ़ावा देना:** आजाद ने भारत की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने और बढ़ावा देने के लिए **साहित्य अकादमी, ललित कला अकादमी तथा संगीत नाटक अकादमी** जैसी संस्थाओं की स्थापना की।
- **राष्ट्रीय एकीकरण:** एकता और सद्भाव के लिए प्रतिबद्ध, मौलाना आजाद ने धर्मनिरपेक्षता तथा समावेशी शिक्षा पर जोर दिया, जिससे स्वतंत्र भारत के प्रारंभिक चरण में राष्ट्र निर्माण में योगदान मिला।

कांग्रेस पार्टी का पतन

यद्यपि, सबसे मजबूत सत्तारूढ़ दल भी पतन का अनुभव कर सकते हैं, लेकिन कांग्रेस पार्टी का अत्यधिक तेजी से पतन हुआ। इस पतन के कई कारण थे:

- **आदर्शों का ह्रास:** 1948 ई. की शुरुआत में ही नेहरू ने पार्टी के नैतिक ढाँचे और आदर्शवादी ढाँचे में क्रमिक पतन देखा। पार्टी अपने संस्थापक सिद्धांतों को दरकिनार करने लगी।

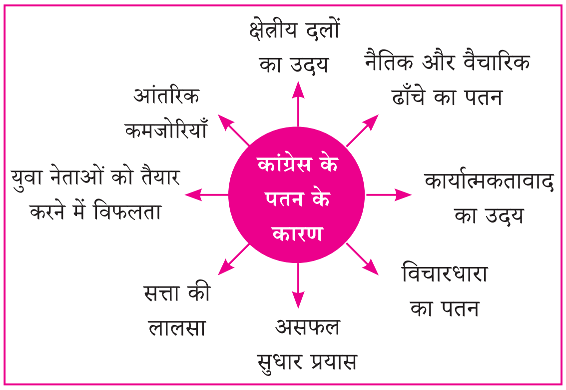

- **नए नेताओं को तैयार करने में विफलता:** आदर्शवादी युवा, विपक्षी दलों में शामिल होने लगे, जो यह दर्शाता है कि कांग्रेस पार्टी नई पीढ़ी के नेताओं को तैयार करने में विफल रही।
- **गुटों का उदय:** गुटों के विवादों और षड्यंत्रों के कारण संगठन के निचले स्तरों पर गैर-लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली को बढ़ावा मिला। इस अंदरूनी कलह ने पार्टी के लक्ष्यों और इसकी प्रभावशीलता को प्रभावित किया।
- **सुधार के असफल प्रयास:** वर्ष 1963 में नेहरू और मद्रास के सीएम के. कामराज द्वारा तैयार की गई कामराज योजना का उद्देश्य कई केंद्रीय मंत्रियों तथा राज्य के मुख्यमंत्रियों को संगठनात्मक कार्य संभालने के लिए इस्तीफा देकर पार्टी को फिर से जीवंत करना था। हालाँकि, यह योजना अपने विपरीत साबित हुई, जिससे केंद्रीय राजनीति में राज्य पार्टी प्रमुखों का प्रभाव और बढ़ गया।
- **चुनावी विफलता:** वर्ष 1963 में लोकसभा उपचुनावों में तीन प्रमुख गढ़ों की हार से पार्टी की कमजोरी उजागर हुई।
- **विचारधारा की उपेक्षा:** पार्टी ने जनता के साथ संपर्क खो दिया और बुद्धिजीवियों एवं युवाओं को आकर्षित करने में विफल रही, क्योंकि इसने अपनी मूल विचारधारा को दरकिनार करना शुरू कर दिया था। इसके कारण कांग्रेस के बौद्धिक और लोकप्रिय समर्थन, दोनों पर अपनी पकड़ कमजोर हो गई।
- **सत्ता की लालसा:** कई कांग्रेसियों ने पार्टी के काम की तुलना में आधिकारिक पदों और संरक्षण को प्राथमिकता देना शुरू कर दिया। इस बदलाव ने पार्टी के समग्र कामकाज को कमजोर कर दिया।

स्वतंत्रता के बाद के प्रारंभिक दौर में कांग्रेस एक सर्वव्यापी इकाई के रूप में परिवर्तित हो गई, जिसने न केवल राष्ट्रीय आंदोलन की विरासत को आगे बढ़ाया, बल्कि भारत के राजनीतिक नेतृत्व के लोकतांत्रिक आदर्शों को भी मूर्त रूप दिया।

प्रमुख शब्दावलियाँ

गुटबाजी, द्वि राष्ट्र सिद्धांत, सविनय अवज्ञा आंदोलन, सर्वसम्मत नेतृत्व, भारत छोड़ो आंदोलन, हिंदू महासभा, प्रतिस्पर्द्धी चुनाव, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार, संरक्षक संत, भारत का लौह पुरुष, 'बिग टेंट' पार्टी, कामराज योजना, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी आदि।

विपक्षी दल (1947-1964)

समाजवादी पार्टी:

वर्ष 1934 में कांग्रेस के भीतर, एक अधिक क्रांतिकारी और समतावादी कांग्रेस की परिकल्पना कर रहे युवा नेताओं द्वारा सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना की गई जिसमें जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, आचार्य नरेंद्र देव तथा अशोक मेहता जैसे उल्लेखनीय नेता थे।

कांग्रेस से भिन्नता

- **वैचारिक मतभेद:** समाजवादियों का मानना था कि लोकतांत्रिक समाजवाद की उनकी विचारधारा उन्हें कांग्रेस और कम्युनिस्टों दोनों से अलग करती है।
- **दोहरी पार्टी सदस्यता का मुद्दा:** वर्ष 1948 में, कांग्रेस ने अपने संविधान में संशोधन करके अपने सदस्यों को दोहरी पार्टी की सदस्यता लेने से रोक दिया, जिससे समाजवादियों को कांग्रेस का चुनाव करने के लिए बाध्य होना पड़ा।
- **कांग्रेस के प्रति अविश्वास:** समाजवादियों को लगा कि कांग्रेस पूँजीपतियों और जमींदारों का बेतहाशा समर्थन कर रही है जबकि किसानों तथा मजदूरों की उपेक्षा कर रही है। उन्हें आजादी के बाद गैर-समाजवादियों के साथ एकजुट रहने का कोई कारण नहीं दिखा।
- **संगठनात्मक भेदभाव:** कांग्रेस के भीतर अल्पसंख्यक होने के कारण, पार्टी के स्थानीय स्तर पर समाजवादियों को प्रतिरोध और भेदभाव का सामना करना पड़ा।
- **अति आत्मविश्वास:** समाजवादी अपनी पार्टी की लोकप्रियता के बारे में अत्यधिक आशावादी थे, जो चुनावी सफलता में परिवर्तित नहीं हुआ।

समाजवादी पार्टी का पतन

- **विभेद करने में विफलता:** समाजवादियों के लिए स्वयं को कांग्रेस से अलग करना कठिन था, विशेषकर तब जब कांग्रेस ने वर्ष 1955 में घोषित किया कि उसका लक्ष्य समाजवादी समाज का निर्माण करना है।
- **वैचारिक मतभेद:** समाजवादी इस बात पर विभाजित थे कि वे कांग्रेस के साथ सहयोग करें या उससे दूरी बनाए रखें।
- **गुट संघर्ष और विभाजन:** पार्टी वैचारिक और गुटवादी मतभेदों से ग्रसित थी, जिसके कारण कई बार विभाजन तथा पुनर्मिलन हुआ।
- **खराब चुनावी प्रदर्शन:** समाजवादियों की आशा तब टूट गई जब वर्ष 1951-52 के लोकसभा चुनावों में उन्हें 10.6% वोटों के साथ केवल 12 सीटें मिलीं।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (CPI)

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (CPI) वर्ष 1936 से कांग्रेस का हिस्सा थी, लेकिन वर्ष 1945 में यह अलग हो गई।

भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की बदलती स्थिति

- **कांग्रेस के लिए प्रारंभिक समर्थन:** प्रारंभ में, सीपीआई ने सभी प्रगतिशील ताकतों को साम्राज्यवादी ताकतों के खिलाफ कांग्रेस के समर्थन में एकजुट होने की सलाह दी।
- **कांग्रेस की आलोचना:** बाद में सोवियत संघ के मार्गदर्शन में सीपीआई ने भारत की आजादी को नकली घोषित कर दिया और सरकार पर फासीवादी तरीके से शासन करने का आरोप लगाया।
- **सशस्त्र विद्रोह का आह्वान:** वर्ष 1948 में, बिगड़ती आर्थिक स्थिति के बीच, सीपीआई ने तत्काल सशस्त्र विद्रोह का आह्वान किया तथा कई आतंकवादी कृत्यों में शामिल रही।
- **भविष्य में राज्य को उखाड़ फेंकने का एजेंडा:** वर्ष 1951 के अंत तक, सीपीआई ने आगामी आम चुनावों पर ध्यान केंद्रित करने का निर्णय लिया, जिसमें राज्य को उखाड़ फेंकने का भावी एजेंडा भी शामिल था।
- **स्वतंत्र विदेश नीति की स्वीकृति:** वर्ष 1953 में मदुरै सम्मलेन में भाकपा ने स्वीकार किया कि सरकार एक स्वतंत्र विदेश नीति का अनुसरण कर रही है, हालाँकि, उसने यह भी कहा कि उसकी आंतरिक नीति स्वतंत्र नहीं है।
- **स्वतंत्रता की मान्यता: वर्ष 1956 में पालघाट सम्मलेन** में इसने स्वीकार किया कि भारत ने वर्ष 1947 में स्वतंत्रता प्राप्त की, लेकिन सरकार की पूँजीवादी नीतियों की आलोचना की।
- **शांतिपूर्ण और संसदीय तरीकों की वकालत: वर्ष 1958 में अमृतसर सम्मलेन** में इसने घोषणा की कि शांतिपूर्ण और संसदीय साधनों के माध्यम से समाजवाद की ओर बढ़ना संभव है।
- **संघर्ष और एकता की नीति: वर्ष 1961 में विजयवाड़ा सम्मलेन** में पार्टी ने सम्मलेन के प्रति संघर्ष और एकता की नीति का पालन करने का निर्णय लिया, क्योंकि उन्हें आशंका थी कि कांग्रेस प्रगतिवादी-प्रतिक्रियावादी आधार पर विभाजित हो जाएगी।

आम चुनावों में आशाजनक प्रदर्शन

- **सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी:** सीपीआई, हैदराबाद में अपने अग्रणी संगठन पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ्रंट के साथ मिलकर 61 लोकसभा सीटों में से 23 सीटें जीतकर सबसे बड़ी विपक्षी पार्टी के रूप में उभरी।
- **सरकार का गठन:** सीपीआई ने केरल में बहुमत हासिल किया और दुनिया की पहली लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित कम्युनिस्ट सरकार बनाई।
- **मजबूत राजनीतिक शक्ति:** 1962 ई. के लोकसभा चुनावों तक, सीपीआई केरल, पश्चिम बंगाल और आंध्र में एक मजबूत राजनीतिक ताकत के रूप में उभरी ।

सीपीआई में विभाजन

- **सीपीएम का जन्म:** रूस-चीन संबंधों जैसे मुद्दों पर विवादों, संघर्षों और मतभेदों के कारण, सीपीआई वर्ष 1964 में दो भागों में विभाजित हो गई: कम्युनिस्ट पार्टी आई (भाकपा या भारतीय) और कम्युनिस्ट पार्टी एम (माकपा या मार्क्सवादी)।
- **भिन्न विचारधाराएँ:** सीपीआई का लक्ष्य शांतिपूर्ण साम्राज्यवाद-विरोधी और सामंतवाद-विरोधी क्रांति था, जबकि सीपीएम ने मजदूर वर्ग तथा उसकी पार्टी के नेतृत्व में कृषि क्रांति एवं सशस्त्र संघर्ष का समर्थन किया।

सीपीआई की विफलताएँ

- **सामाजिक विकास की गलत व्याख्या:** सीपीआई, जटिल भारतीय सामाजिक विकास और भारतीय लोगों की बदलती मनोदशा को समझने में विफल रही।
- **केंद्रीकृत संरचना:** सीपीआई की केंद्रीकृत, नौकरशाही और गुप्त पार्टी संरचना एक लोकतांत्रिक तथा स्वतंत्र समाज के लिए अनुपयुक्त थी, जिससे इसकी लोकप्रियता एवं सफलता में बाधा उत्पन्न हुई।

भारतीय जनसंघ

भारतीय जनसंघ की स्थापना श्यामा प्रसाद मुखर्जी द्वारा वर्ष 1951 में, इसके संस्थापक अध्यक्ष के रूप में की गई थी। भारतीय जनसंघ की उत्पत्ति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिंदू महासभा से जुड़ी हुई है।

विचारधाराएँ और कार्यक्रम

- **एक संस्कृति, एक राष्ट्र का विचार:** इसने एकल संस्कृति और राष्ट्र के विचार पर जोर दिया, तथा भारतीय संस्कृति एवं परंपराओं पर आधारित आधुनिकता, प्रगति व शक्ति का समर्थन किया।
- **अखंड भारत की स्थापना पर बल:** इसने भारत और पाकिस्तान को मिलाकर अविभाजित भारत के निर्माण पर जोर दिया।
- **हिंदी को राजभाषा बनाने पर बल:** उन्होंने अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को भारत की राजभाषा बनाने का समर्थन किया।
- **अल्पसंख्यक तुष्टीकरण का विरोध:** पार्टी ने धार्मिक और सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों को दी जाने वाली रियायतों का विरोध किया तथा कांग्रेस पर मुसलमानों की राजनीति करने का आरोप लगाया।
- **परमाणु हथियारों का समर्थन:** वर्ष 1964 में चीन के परमाणु परीक्षणों के बाद, पार्टी ने भारत में परमाणु हथियार विकसित करने पर जोर दिया।

चुनावी प्रदर्शन

- **प्रारंभिक विफलताएँ:** वर्ष 1952 और 1957 के लोकसभा चुनावों में पार्टी को क्रमशः केवल तीन और चार सीटें प्राप्त हुई।
- **प्रगति:** वर्ष 1967 तक, इसने लोकसभा में 35 सीटें जीतकर सफलता प्राप्त की।
- **क्षेत्रीय असफलताएँ:** श्यामा प्रसाद मुखर्जी के निधन के बाद, पश्चिम बंगाल में पार्टी की राजनीतिक पकड़ शिथिल पड़ गई थी।

1980 के दशक में भारतीय जनसंघ का स्थान भारतीय जनता पार्टी ने ले लिया।

स्वतंत्र पार्टी

अगस्त, 1959 में गठित स्वतंत्र पार्टी कांग्रेस के नागपुर प्रस्ताव के प्रत्युत्तर में बनी थी। इसका नेतृत्व सी राजगोपालाचारी, के.एम. मुंशी और मीनू मसानी जैसे दिग्गज कांग्रेसियों ने किया था।

भारत की पहली धर्मनिरपेक्ष रूढ़िवादी पार्टी

- **मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था:** पार्टी ने आर्थिक विकास में राज्य की सक्रिय भूमिका का विरोध किया तथा सार्वजनिक उपक्रमों में कटौती और न्यूनतम केंद्रीय योजना का समर्थन किया।
- **भूमि सुधार और राष्ट्रीयकरण का विरोध:** उन्होंने निजी उद्यमों के राष्ट्रीयकरण और भूमि सुधारों के विस्तार को अस्वीकार कर दिया।
- **विदेश नीति:** कांग्रेस की गुटनिरपेक्षता की नीति के विपरीत, पार्टी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के साथ घनिष्ठ संबंधों की पक्षधर थी।

असफलता के कारण

- **राजनीतिक स्थान का अभाव:** उस समय, भारतीय राजनीति में रूढ़िवादी दलों के लिए सीमित स्थान था, क्योंकि राजनीति उत्तरोत्तर कट्टरपंथी होती जा रही थी।
- **विविध दक्षिणपंथी हित:** दक्षिणपंथी वर्ग के हित विविध एवं विखंडित थे।
- **कांग्रेस का उदारवादी रुख:** कांग्रेस ने संपत्ति वर्ग के हितों के प्रति उदारवादी रुख अपनाया, जिससे स्वतंत्र पार्टी के लिए संभावित समर्थन कम हो गया।
- **सीमित सामाजिक आधार:** पार्टी का सामाजिक आधार संकीर्ण था, जिसमें मुख्य रूप से उद्योगपति, व्यापारी, राजकुमार, जागीरदार और पूर्व जमींदार जो पूँजीवादी किसान बन गए थे, शामिल थे।

निष्कर्ष

इन असफलताओं के बावजूद, विपक्षी दलों ने भारत के राजनीतिक परिदृश्य और लोकतंत्र को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका अस्तित्व और विकास भारत की राजनीतिक प्रणाली की जीवंतता तथा गतिशीलता को रेखांकित करता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

लोकतांत्रिक समाजवाद, राजनीतिक स्थान, दो-दलीय सदस्यता, मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था, समाजवादी, अल्पसंख्यक तुष्टीकरण, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (सीपीआई), एक संस्कृति-एक राष्ट्र, सशस्त्र विद्रोह, स्वतंत्र पार्टी की आंतरिक नीति, साम्राज्यवाद विरोधी, संगठनात्मक भेदभाव आदि।

नेहरूवादी युग

1962 ई. के भारत-चीन युद्ध और मई, 1964 में नेहरू की मृत्यु ने नव प्रतिस्थापित भारतीय राज्य के लिए कई चुनौतियाँ खड़ी कर दीं। कई लोगों को डर था कि इससे भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को गंभीर नुकसान पहुँचेगा, लेकिन एक सहज और सम्मानजनक परिवर्तन ने भारतीय लोकतंत्र की शक्ति को उजागर किया।

नेहरू से लेकर शास्त्री तक

नेहरू की मृत्यु के बाद लाल बहादुर शास्त्री और मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री पद के प्रमुख दावेदार थे। हालाँकि, **कांग्रेस सिंडिकेट ने** शास्त्री को उनकी व्यापक स्वीकार्यता के कारण तरजीह दी।

शास्त्री के कार्यकाल के दौरान चुनौतियाँ

- **राजभाषा का मुद्दा:** वर्ष 1965 में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को भारत की राजभाषा बनाने के प्रस्ताव को दक्षिणी राज्यों में तीव्र विरोध का सामना करना पड़ा।
- **पंजाबी सूबे की माँग:** संयुक्त हरियाणा और पंजाब से अलग पंजाब राज्य की माँग बढ़ रही थी।
- **खाद्यान्न की कमी:** वर्ष 1965 में कई राज्यों को (मानसून विफलता) गंभीर सूखे का सामना करना पड़ा तथा बफर स्टॉक खतरनाक स्तर तक गिर गया।
- **कृषि संकट:** कृषि उत्पादन में भारी गिरावट के कारण 1960 के दशक में अभूतपूर्व खाद्यान्न संकट पैदा हो गया। फसल क्षेत्र की वृद्धि दर वर्ष 1961-62 के 3.09% से घटकर वर्ष 1967-68 में 0.78% रह गई।
- **सूखा:** असफल मानसून के कारण, राज्यों को वर्ष 1965 में गंभीर सूखे का सामना करना पड़ा, जिससे खाद्यान्न की कमी बढ़ गई।
- **आर्थिक संघर्ष:** वर्ष 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद औद्योगिक विकास मंद हो गया, जिससे भुगतान संतुलन प्रभावित हुआ और निराशावाद की भावना को बढ़ावा मिला। भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) द्वारा युद्ध के बाद शेयर बाजार में 16% की गिरावट और सोने की कीमतों में 30% की गिरावट दर्ज की गई।
- **पाकिस्तानी घुसपैठ:** भारत-चीन युद्ध में भारत की हार के बाद, पाकिस्तान ने कश्मीर में अच्छी तरह प्रशिक्षित घुसपैठियों को भेजा, जिससे भारत के साथ अघोषित युद्ध शुरू हो गया।

चुनौतियों से निपटने में शास्त्री की भूमिका

- **प्रारंभिक निष्क्रियता:** शास्त्री जी ने शुरू में सख्त कदम नहीं उठाए जिससे आधिकारिक भाषा के मुद्दे जैसी समस्याएँ बढ़ने लगी।
- **निर्णायक नेतृत्व:** समय के साथ शास्त्री ने मजबूत नेतृत्व का परिचय दिया। उदाहरण के लिए, वे **उत्तरी वियतनाम में अमेरिकी बमबारी की आलोचना करने वाले पहले व्यक्ति थे।** उन्होंने भारतीय सैनिकों को न केवल कश्मीर की रक्षा करने का आदेश दिया, बल्कि घुसपैठ को रोकने के लिए युद्ध विराम रेखा को पार करने और महत्त्वपूर्ण दर्रों को सील करने का भी आदेश दिया।
- **खाद्य संकट प्रतिक्रिया:** शास्त्री जी ने **राज्य खाद्य व्यापार निगम की स्थापना की** और खाद्य संकट से निपटने के लिए **हरित क्रांति जैसी रणनीतियों की शुरुआत की।**
- **"जय जवान, जय किसान" का नारा:** उन्होंने सैनिकों को देश की रक्षा के लिए प्रेरित करने और किसानों को खाद्य उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करने हेतु 'जय जवान, जय किसान' का नारा दिया।

नारे का उद्भव

- "जय जवान जय किसान" का नारा 1960 के दशक के मध्य में उभरा जब भारत, पाकिस्तान के साथ युद्ध और खाद्य संकट जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा था।
- प्रधानमंत्री शास्त्री ने राष्ट्र को एकत्रित करने और मजबूत रक्षा और बेहतर कृषि की आवश्यकता को पूरा करने के लिए नारा दिया एवं राष्ट्रीय सुरक्षा व खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में सैनिकों और किसानों की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डाला।

नारे का महत्त्व

- **एकीकृत बल:** "जय जवान जय किसान" ने राष्ट्रीय संकट के दौरान देशभक्ति और एकता को बढ़ावा दिया, चुनौतियों पर काबू पाने के लिए सामूहिक प्रयास तथा साझा जिम्मेदारी पर जोर दिया।
- **आत्मनिर्भरता पर जोर:** इस नारे ने कृषि में निवेश को प्रेरित किया, जिससे हरित क्रांति को बढ़ावा मिला, जिसने भारत के कृषि परिदृश्य को बदलने में योगदान दिया, उत्पादकता में वृद्धि की और खाद्य उत्पादन में आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया।
- **सैनिकों का सम्मान:** इस नारे ने भारत की सुरक्षा और समृद्धि में सैनिकों तथा किसानों की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डाला एवं इनके प्रति गर्व व सम्मान की भावना पैदा की।
- **स्थायी प्रभाव:** "जय जवान जय किसान" नारा भारत के समग्र कल्याण के लिए सैनिकों और किसानों के महत्त्व की याद दिलाता है तथा इसे समकालीन मुद्दों को हल करने के लिए अनुकूलित किया गया है, जैसे कि विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका पर जोर देने के लिए "जय विज्ञान" को जोड़ना।

शास्त्री जी से लेकर इंदिरा गांधी तक

ताशकंद में प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की अचानक मृत्यु ने नेतृत्व में उत्तराधिकार को लेकर सवाल खड़े कर दिए। कामराज के नेतृत्व में **सिंडिकेट ने** इंदिरा गांधी को उनकी कथित नम्यता और अनुकूलन क्षमता को देखते हुए अगले प्रधानमंत्री के रूप में चुना।

1969 का कांग्रेस विभाजन: इंदिरा गांधी के कार्यकाल के निर्णायक क्षणों में से एक, वर्ष 1969 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का दो गुटों में विभाजित होना था।

एक तरफ 'सिंडिकेट' था, जो शक्तिशाली क्षेत्रीय पार्टी नेताओं का एक समूह था।

- उन्होंने शुरू में नेतृत्व की भूमिका के लिए इंदिरा गांधी का समर्थन किया था, यह मानते हुए कि वो उनके प्रभाव में आ जाएँगी।
- बाद में इन्हें 'कांग्रेस (O)' या **'ऑर्गेनाइजेशन कांग्रेस '** के नाम से जाना जाने लगा, जिसका नेतृत्व के. कामराज, निजलिंगप्पा और मोरारजी देसाई जैसे नेताओं ने किया।

दूसरी ओर इंदिरा गांधी और उनके समर्थक थे, जो अधिक क्रांतिकारी तथा प्रगतिशील सामाजिक-आर्थिक एजेंडे का समर्थन कर रहे थे।

- उन्हें 'कांग्रेस (R)', या 'रिक्विजिनिस्ट कांग्रेस ' या आमतौर पर 'कांग्रेस (I)' (इंदिरा के लिए) कहा जाता था।
- यह विभाजन मुख्यतः नेतृत्व और नीतिगत मतभेदों के कारण हुआ, इसे विशेष रूप से श्रीमती गांधी द्वारा 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने तथा पूर्ववर्ती रियासतों के प्रिवी पर्स को समाप्त करने के कदमों के प्रत्युत्तर के रूप में देखा गया।

इस विभाजन ने भारत के राजनीतिक परिदृश्य को काफी हद तक बदल दिया, जिसमें इंदिरा गांधी की 'कांग्रेस (I)' अंततः प्रमुख गुट के रूप में उभरी। इस कदम ने कांग्रेस पार्टी के पुराने संरक्षकों के अंत की शुरुआत भी की और इंदिरा गांधी ने पार्टी तथा केंद्र सरकार पर अपना नियंत्रण मजबूती से स्थापित किया।

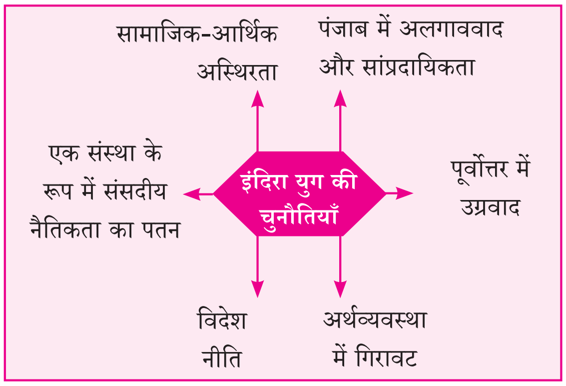

चुनौतियाँ

1. **पंजाब की समस्या:**
   - **बढ़ती सांप्रदायिकता:** पंजाब में सांप्रदायिक तनाव बढ़ रहा था, जिसके कारण सामाजिक अशांति और सांप्रदायिक हिंसा बढ़ रही थी।
   - **अलगाववाद का उदय:** पृथक सिख राज्य की माँग बढ़ गई, जिसके परिणामस्वरूप अलगाववादी आंदोलन का उदय हुआ।
   - **उग्रवाद से निपटना:** इंदिरा गांधी ने पंजाब में उग्रवाद से निपटने के लिए कड़ा रुख अपनाया, साथ ही उन्होंने शिकायतों के समाधान और शांति बहाल करने के लिए वार्ताओं की आवश्यकता को भी पहचाना।
2. **पूर्वोत्तर में उग्रवाद:**
   - **नागा विद्रोह:** नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड (NSCN) के नेतृत्व में हुए नागा विद्रोह का उद्देश्य नागालिम नामक एक स्वतंत्र नागा राज्य की स्थापना करना था। इंदिरा गांधी की सरकार ने नागा नेताओं के साथ शांति वार्ता की, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 1975 में शिलांग समझौते पर हस्ताक्षर हुए। हालाँकि, बाद में समझौता टूट गया, जिससे फिर से हिंसा भड़क उठी।

- **मिजो विद्रोह:** मिजो नेशनल फ्रंट (MNF) के नेतृत्व में मिजोरम में हुए मिजो विद्रोह में भारत से स्वतंत्रता की माँग की गई।
- **सैन्य कार्रवाई और संवाद द्वारा संतुलन:** इंदिरा गांधी ने उत्तर-पूर्व में उग्रवाद के मूल कारणों को दूर करने के लिए सैन्य कार्रवाई और वार्ता के संयोजन का प्रयोग किया, जिसका उद्देश्य दीर्घकालिक स्थिरता तथा समावेशिता था।

3. अर्थव्यवस्था पर प्रभाव:
- **आर्थिक मंदी:** औद्योगिक विकास और निर्यात में गिरावट के कारण भारत को आर्थिक मंदी का सामना करना पड़ा।
- **कृषि संबंधी चुनौतियाँ:** लगातार कई वर्षों तक मानसून के कमजोर रहने के कारण व्यापक अकाल और खाद्यान्न की कमी की स्थिति उत्पन्न हो गई।
- **अर्थव्यवस्था का पुनरुद्धार:** इंदिरा गांधी के प्रशासन ने कृषि सुधारों, औद्योगिक पुनरुद्धार और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करते हुए आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के उपायों को लागू किया।

4. विदेश नीति संबंधी मुद्दे:
- **भारत-अमेरिका संबंध:** संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत की कृषि और विदेश नीतियों को प्रभावित करने के लिए गेहूँ के निर्यातक तथा वित्तीय सहायता प्रदाता के रूप में अपनी स्थिति का लाभ उठाने का प्रयास किया।
- **चीन-पाकिस्तान धुरी:** चीन और पाकिस्तान के बीच बढ़ते गठबंधन ने सुरक्षा चुनौतियाँ उत्पन्न कीं तथा संसाधनों का इस्तेमाल सैन्य तैयारियों में करना पड़ा।
- **गुटनिरपेक्षता और वैश्विक सहयोग:** इंदिरा गांधी ने गुटनिरपेक्षता के महत्त्व पर बल दिया और भारत की संप्रभुता तथा राष्ट्रीय हितों को बनाए रखते हुए गुटनिरपेक्ष देशों के बीच अधिक आर्थिक एवं राजनीतिक सहयोग का समर्थन किया।

5. लोकप्रिय आंदोलन:
- **सामाजिक-आर्थिक अस्थिरता:** बढ़ती कीमतें, खाद्यान्न की कमी, बेरोजगारी और आर्थिक मंदी जैसी स्थिति के कारण व्यापक पैमाने पर लोकप्रिय प्रदर्शन तथा हड़तालें आयोजित होने लगी थी।
- **स्थिरता बहाल करना:** इंदिरा गांधी की सरकार ने सामाजिक-आर्थिक चुनौतियों से निपटने के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कदम उठाए, जिनमें मूल्य नियंत्रण, आवश्यक वस्तुओं तक पहुँच में सुधार और रोजगार सृजन कार्यक्रम शुरू करने पर ध्यान केंद्रित किया गया।

6. एक संस्था के रूप में संसदीय नैतिकता का पतन:
- **अनुशासनहीनता और व्यवधान:** संसद में निरंतर अनुशासनहीनता और व्यवधान देखने को मिले तथा आलोचना अक्सर व्यक्तिगत हमलों का रूप ले लेती थी।
- **संसदीय शिष्टाचार को सुदृढ़ करने के प्रयास:** इंदिरा गांधी ने रचनात्मक गतिविधियों को बढ़ावा देकर, विधायी प्रक्रियाओं को सुदृढ़ कर और सांसदों के बीच सम्मान तथा जवाबदेही की संस्कृति को प्रोत्साहित करके संसद की गरिमा एवं प्रभावशीलता को बहाल करने का प्रयास किया।

प्रधानमंत्री की भूमिका संभालने के बाद इंदिरा गांधी को स्वतंत्रता के बाद के दौर में कई कठिन चुनौतियों का सामना करना पड़ा। दृढ़ता और संवाद के संयोजन के माध्यम से, उन्होंने पंजाब की समस्या तथा उत्तर-पूर्व में विद्रोह की समस्या का समाधान किया। उन्होंने अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए कदम उठाए, एक स्वतंत्र विदेश नीति अपनाई और लोकप्रिय आंदोलनों का जवाब दिया। हालाँकि, कुछ निर्णयों के मिश्रित परिणाम मिलने के बावजूद, उनके नेतृत्व ने अपने इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण दौर के दौरान भारत की दिशा को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रमुख शब्दावलियाँ

आर्थिक मंदी, कांग्रेस सिंडिकेट, एकीकृत बल, भुगतान संतुलन, आत्मनिर्भरता, राज्य खाद्य व्यापार निगम, हरित क्रांति, जय जवान, जय किसान, रिक्विजिनिस्ट कांग्रेस , सांप्रदायिकता, अलगाववाद, उग्रवाद, औद्योगिक पुनरुद्धार, चीन-पाकिस्तान धुरी, संसदीय शिष्टाचार आदि।

1967 ई. के आम चुनाव और भारतीय राजनीति पर इनका प्रभाव

प्रस्तावना

1967 ई. के आम चुनाव भारतीय राजनीति में निर्णायक साबित हुए, जिससे राजनीतिक परिदृश्य और नेतृत्व में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिले। हालाँकि, कांग्रेस पार्टी के पास अभी भी 283 सीटों के साथ लोकसभा में साधारण बहुमत था, लेकिन उसे 1952 के बाद से सबसे खराब परिणामों का सामना करना पड़ा। के. कामराज, एस.के. पाटिल और अतुल्य घोष जैसे महत्त्वपूर्ण नेता हार गए। इस परिणाम ने राज्यों की राजनीति को भी प्रभावित किया, जिसके कारण कांग्रेस को पहली बार नौ राज्यों में सत्ता गँवानी पड़ी। इन राज्यों में उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और केरल शामिल थे।

चुनाव परिणाम

- **उच्च मतदान**: चुनावों में महत्त्वपूर्ण राजनीतिक जागृति देखी गई, जिसमें मतदान 61.1% तक पहुँच गया, जो सर्वाधिक वोट प्रतिशत का रिकॉर्ड था।
- **कांग्रेस द्वारा बहुमत बरकरार रखना**: कांग्रेस पार्टी ने लोकसभा में अपना बहुमत बरकरार रखा, लेकिन उसे बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल सहित आठ राज्यों में उसने अपना बहुमत खोना पड़ा।
- **वामपंथी दलों का उदय:** पश्चिम बंगाल और केरल जैसे राज्यों में वामपंथी दलों का उदय हुआ, जबकि अन्य राज्यों में सामंती, दक्षिणपंथी तथा सांप्रदायिक दलों का विस्तार हुआ।

भारतीय राजनीति पर प्रभाव

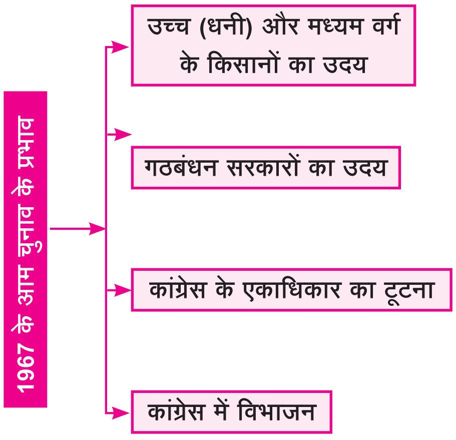

उच्च (धनी) और मध्यम वर्ग के किसानों का उदय

- **कांग्रेस से दलबदल:** चुनावों में कांग्रेस पार्टी से धनी और मध्यम वर्ग के किसानों का दलबदल देखा गया।
- **भूमि सुधारों का भय:** ये किसान सरकार की भूमि सुधार नीतियों और खरीद प्रणालियों से आशंकित थे, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी प्रभावी स्थिति को खतरा था।
- **निरन्तर आधिपत्य:** ग्रामीण राजनीति और अर्थव्यवस्था पर इस वर्ग का आधिपत्यपूर्ण प्रभाव जारी रहा।

गठबंधन सरकारों का उदय

- **दलों की बहुलता:** राज्यों में कांग्रेस पार्टी के एकाधिकार को विभिन्न राजनीतिक दलों द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप अधिकांश राज्यों में गठबंधन सरकारें बनीं।
- **अस्थिर सरकारें:** गठबंधन सरकारों में लगातार तनाव और बार-बार परिवर्तन होते रहे, विधायकों ने बार-बार दल बदले, जिससे राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न हुई।

कांग्रेस में विभाजन

- **संबंधों पर विवाद:** कांग्रेस पार्टी में विभाजन का कारण पार्टी के मंत्रिस्तरीय और संगठनात्मक शाखाओं के बीच संबंधों को लेकर मतभेद था।
- **नीतियों पर मतभेद:** कट्टरपंथी नीतियों के कार्यान्वयन, विदेश नीति दृष्टिकोण और वैचारिक रूप से संबद्ध दलों से बाहरी समर्थन पर निर्भरता को लेकर मतभेद उत्पन्न हुए।
- **राष्ट्रपति उम्मीदवार संबंधी मतभेद:** राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के चयन के समय पार्टी के भीतर मतभेद अपने चरम पर पहुँच गया, जब इंदिरा गांधी ने सिंडिकेट समर्थित संजीव रेड्डी के खिलाफ वी.वी. गिरि का समर्थन किया।

1971 के आम चुनाव

- **क्रांतिकारी नीतियों का कार्यान्वयन:** इंदिरा गांधी की सरकार ने निजी बैंकों के राष्ट्रीयकरण और प्रिवी पर्स के उन्मूलन जैसी क्रांतिकारी नीतियों को लागू करने का प्रयास किया।
- **विधायी समर्थन का अभाव:** संसद में सीमित समर्थन के कारण इंदिरा गांधी ने वर्ष 1970 में लोकसभा को भंग कर दिया तथा वर्ष 1971 में शीघ्र चुनाव कराने का निर्णय लिया।

चुनावी रणनीतियाँ

- **महागठबंधन और नारेबाजी:** कांग्रेस (O) ने "इंदिरा हटाओ" के नारे का उपयोग करते हुए इंदिरा गांधी के खिलाफ एक महागठबंधन बनाया, जबकि इंदिरा गांधी ने "गरीबी हटाओ" के वादे के साथ प्रचार किया।
- **अप्रत्याशित जीत:** कांग्रेस ने 518 में से 352 सीटें जीतीं, जबकि भारतीय जनसंघ, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी और अन्य विपक्षी दलों को हार का सामना करना पड़ा। इंदिरा गांधी की व्यक्तिगत लोकप्रियता और युद्ध के बाद राष्ट्रवादी भावना ने कांग्रेस पार्टी की शानदार जीत में योगदान दिया।

1971-1974 के दौरान सरकार द्वारा उठाए गए कदम

- **आर्थिक सुधार:** सरकार ने आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए सामान्य बीमा और कोयला उद्योग का राष्ट्रीयकरण जैसे कदम उठाए।
- **भूमि सुधार:** भूमि जोत को कम करने तथा अधिशेष भूमि को भूमिहीन और सीमांत किसानों में वितरित करने के लिए कानून पारित किए गए।
- **कल्याणकारी कार्यक्रम:** सरकार ने समाज के सुभेद्य वर्गों के उत्थान के लिए सस्ते खाद्यान्न वितरण, ग्रामीण रोजगार सृजन और बैंकिंग विस्तार के लिए योजनाएँ लागू कीं।
- **राजनीतिक सुधार:** पहलों में संयुक्त स्टॉक कंपनियों द्वारा राजनीतिक चंदे पर प्रतिबंध लगाना और नीति निर्देशक सिद्धांतों के कार्यान्वयन को सुविधाजनक बनाने के लिए संवैधानिक संशोधन पारित करना शामिल था।

आपातकाल और उसके परिणाम

- **नागरिक स्वतंत्रता का निलंबन:** आपातकाल के दौरान, नागरिक स्वतंत्रता पर अंकुश लगाया गया तथा सेंसरशिप और सत्तावादी उपायों के माध्यम से राजनीतिक असहमति का दमन किया गया।
- **सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ:** वर्ष 1975 में आपातकाल लागू करने का कारण आर्थिक मंदी, राजनीतिक अशांति और व्यापक भ्रष्टाचार था।
- **अर्थव्यवस्था पर सरकार का नियंत्रण:** समाजवादी आर्थिक नीतियों और केंद्रीय योजना पर सरकार के फोकस के परिणामस्वरूप मिश्रित परिणाम सामने आए, जिनमें गतिरोध, मुद्रास्फीति तथा अर्थव्यवस्था पर सरकार का नियंत्रण बढ़ना शामिल है।
- **विपक्ष का पुनरुत्थान:** आपातकाल के कारण विपक्षी गठबंधनों और आंदोलनों का उदय हुआ, जिसमें जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति भी शामिल थी, जिसने सत्तावादी शासन को चुनौती दी।
- **न्यायपालिका की सर्वोच्चता:** न्यायपालिका ने आपातकाल के दौरान संवैधानिक अधिकारों को बनाए रखने और कार्यपालिका के अतिक्रमण को रोकने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। केशवानंद भारती मामले जैसे ऐतिहासिक निर्णयों ने संविधान की सर्वोच्चता की पुष्टि की और मौलिक अधिकारों में संशोधन करने की सरकार की शक्ति को सीमित कर दिया।
- **आपातकाल के बाद के परिणाम:** वर्ष 1977 में आपातकाल समाप्त कर दिया गया और उसके बाद हुए चुनावों में कांग्रेस का प्रभुत्व समाप्त हो गया, जिसके परिणामस्वरूप केंद्र में गैर-कांग्रेसी सरकारों का गठन हुआ।

वर्ष 1967 के आम चुनाव और उसके बाद की घटनाओं ने भारतीय राजनीति को नया आयाम दिया, कांग्रेस पार्टी में विभाजन देखा गया तथा इंदिरा गांधी एक प्रभावशाली नेता के रूप में उभरीं। चुनाव और उसके बाद की घटनाओं के दूरगामी परिणाम हुए, जिनमें गठबंधन सरकारों का गठन, प्रगतिशील नीतियों का क्रियान्वयन तथा अंततः आपातकाल लागू होना शामिल था।

प्रमुख शब्दावलियाँ

कट्टरपंथी नीतियाँ, दक्षिणपंथी, आपातकालीन नतीजे, भूमि सुधार नीतियाँ ,गठबंधन सरकारें, वैचारिक रूप से गठबंधन वाली पार्टियाँ, नागरिक स्वतंत्रताएँ, राजनीतिक असहमति, गठबंधन सरकारें, राजनीतिक परिदृश्य, नेतृत्व परिवर्तन, महागठबंधन, गरीबी हटाओ, सत्तावादी शासन आदि।

जेपी आंदोलन, आपातकाल का प्रवर्तन और 1977 के चुनाव: जेपी आंदोलन का उद्देश्य संपूर्ण क्रांति लाना और व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार से निपटना था। हालाँकि, इस आंदोलन की खामियों और आपातकाल लागू होने के कारण जनता में असंतोष फैल गया।

जेपी आंदोलन

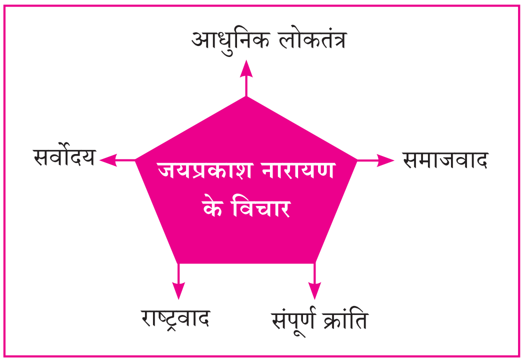

- **संपूर्ण क्रांति का आह्वान:** जेपी ने भ्रष्ट व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष और सत्तावादी शासन से लोकतंत्र को बचाने की आवश्यकता पर बल दिया।
- **राजनारायण मामला:** राजनारायण मामले में भ्रष्ट चुनाव प्रचार के लिए इंदिरा गांधी को दोषी ठहराए जाने से उनके इस्तीफे की माँग तेज हो गई।
- **सरकार को पंगु बनाना:** इस आंदोलन का उद्देश्य विधायकों पर इस्तीफा देने के लिए दबाव बनाना, सरकार के कामकाज को बाधित करना और समानांतर सरकार स्थापित करना था।
- जेपी आंदोलन का **उद्देश्य लोकतंत्र,** नागरिक स्वतंत्रता और संवैधानिक अधिकारों को बहाल करना था, जिन्हें आपातकाल के दौरान खतरे में देखा गया था।

आंदोलन की खामियाँ

- **अस्पष्ट विचारधारा:** इस आंदोलन में संसदीय लोकतंत्र के स्पष्ट विकल्पों का अभाव था तथा संपूर्ण क्रांति के लिए नीतियाँ अपरिभाषित थीं।
- **फासीवादी तत्त्वों के लिए संभावना:** आंदोलन द्वारा लोकतंत्र और संस्थाओं की आलोचना से फासीवाद की ओर झुकाव रखने वाले तत्त्वों को एक मंच प्रदान किया।
- **गैर- लोकतांत्रिक चरित्र:** इस आंदोलन का उद्देश्य संविधानेतर जनांदोलनों के माध्यम से निर्वाचित विधानमंडलों को भंग करना था।

आपातकाल लागू करना

- **आपातकाल की घोषणा:** इंदिरा गांधी ने 26 जून, 1975 को भारतीय संविधान के अनुच्छेद- 352 को लागू करके आपातकाल की घोषणा कर दी।
- **सेंसरशिप और गिरफ्तारियाँ:** सरकार ने कठोर प्रतिबंधात्मक कार्रवाइयाँ की, विपक्षी नेताओं को गिरफ्तार किया और कई संगठनों पर प्रतिबंध लगा दिया।
- **न्यायिक संस्थाओं को कमजोर करना:** न्यायपालिका की शक्तियों को कम करने और न्यायिक समीक्षा को प्रतिबंधित करने के लिए कानून, संशोधन तथा आदेश पारित किए गए।
- **राज्य सरकारों पर नियंत्रण और बर्खास्तगी:** आपातकाल के दौरान, संसद को अप्रभावी बना दिया गया, आज्ञाकारी राज्य सरकारों पर कठोर नियंत्रण रखा गया, तमिलनाडु और गुजरात में गैर-कांग्रेसी सरकारों को बर्खास्त कर दिया गया।

आपातकाल पर जन-प्रतिक्रिया

- **प्रारंभिक स्वीकृति:** सत्तावादी शासन के हालिया अनुभव की कमी, सार्वजनिक व्यवस्था की बहाली तथा प्रशासन और अर्थव्यवस्था में सुधार के कारण कई लोगों ने प्रारंभ में आपातकाल को स्वीकार कर लिया था।
- **विलंबित विरोध:** वर्ष 1976 से आपातकाल का विरोध धीरे-धीरे बढ़ता गया, क्योंकि आर्थिक स्थिति खराब हो गई, शासन संबंधी समस्याएँ उभरने लगी तथा दमनकारी उपायों ने हाशिये पर उपस्थित लोगों को प्रभावित किया।

आपातकाल की समाप्ति और 1977 के चुनाव

- **चुनावों की घोषणा:** इंदिरा गांधी ने मार्च, 1977 में चुनावों की घोषणा की और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को बहाल करने के प्रयास किए।
- **स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव:** राजनीतिक कैदियों को रिहा कर दिया गया, प्रेस सेंसरशिप हटा दी गई और लोकतांत्रिक तरीके से चुनाव आयोजित किए गए।

जनता पार्टी और सहयोगी दलों की विजय

- **जन भावनाएँ:** विभिन्न विपक्षी दलों के विलय से गठित जनता पार्टी ने आपातकाल के विरुद्ध जन समर्थन प्राप्त किया।
- **चुनावी परिणाम:** जनता पार्टी और उसके सहयोगियों ने लोकसभा की 542 सीटों में से 330 सीटें जीतकर महत्त्वपूर्ण जीत हासिल की।
- वर्ष 1977 के चुनावों में स्वतंत्रता के बाद से पहली बार कांग्रेस पार्टी, राष्ट्रीय स्तर पर सत्ता से बाहर हुई।
- कांग्रेस सरकार की हार और जनता पार्टी गठबंधन की जीत, सत्तावाद पर लोकतंत्र की विजय तथा चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से परिवर्तन लाने की जनता की इच्छा शक्ति का प्रतीक है।
- **प्रधानमंत्री के रुप में मोरारजी देसाई का उदय:** जनता पार्टी के एक प्रमुख नेता मोरारजी देसाई को प्रधानमंत्री चुना गया।
- **राज्य सरकारों की बर्खास्तगी:** कई कांग्रेस शासित राज्य सरकारों को बर्खास्त कर दिया गया और नए चुनावों के आदेश दिए गए।

जेपी आंदोलन, आपातकाल लागू होना और वर्ष 1977 के चुनाव भारतीय राजनीति में महत्त्वपूर्ण मील के पत्थर थे। जेपी आंदोलन ने व्यवस्थागत बदलावों और भ्रष्टाचार से निपटने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला, लेकिन इसकी विचारधारा तथा तरीकों में खामियाँ स्पष्ट रूप से मौजूद थीं। आपातकाल लागू करने और उसके बाद के नतीजों ने जनता में असंतोष को जन्म दिया, जिसमें शुरुआती स्वीकार्यता के बाद नाराजगी बढ़ी। वर्ष 1977 के चुनावों ने एक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तन देखा गया, जिसमें जनता पार्टी और उसके सहयोगी विजयी हुए तथा कांग्रेस पार्टी को हार का सामना करना पड़ा।

प्रमुख शब्दावलियाँ

स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव, संस्थाओं का कमजोर होना, भ्रष्टाचार से मुकाबला, समानांतर सरकारें, संसदीय लोकतंत्र, सरकार का पंगु होना, फासीवादी तत्त्व, न्यायिक समीक्षा, भारतीय लोकतंत्र, शासन, फासीवादी तत्त्व, गैर- लोकतांत्रिक चरित्र आदि।

जनता सरकार का शासन और कांग्रेस का पुनरुत्थान

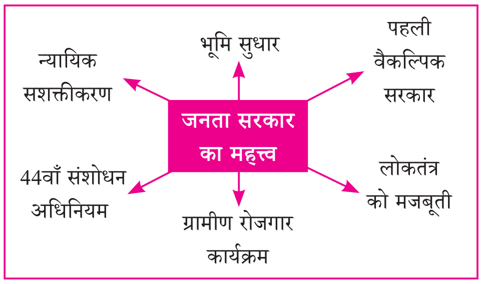

जनता सरकार को स्थिर गठबंधन बनाए रखने और सामाजिक तनावों को दूर करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसके कारण अंततः उसका पतन हो गया। दूसरी ओर, इंदिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी ने राजनीतिक पकड़ को दोबारा मजबूत किया और अपने शासन के दौरान नीतिगत पहलों को लागू किया।

जनता सरकार का शासन

राजनीतिक महत्त्व:

- **कांग्रेस का पहला विकल्प:** जनता पार्टी ने केंद्र में लंबे समय से प्रभावी कांग्रेस पार्टी के लिए पहला विश्वसनीय विकल्प प्रदान किया।
- **लोकतंत्र को मजबूत करना:** जनता सरकार ने भारत की लोकतांत्रिक जड़ों की ताकत का प्रदर्शन किया और बहुदलीय प्रणाली के महत्त्व पर जोर दिया।

संवैधानिक सुधार

- **44वाँ संविधान संशोधन अधिनियम (1978):** इस अधिनियम का उद्देश्य आपातकालीन शासन की सत्तावादी विशेषताओं को हटाकर और न्यायपालिका की शक्तियों को बढ़ाकर उदारवादी लोकतंत्र को बहाल करना था।
- **न्यायिक सशक्तीकरण:** संवैधानिक सिद्धांतों की रक्षा करते हुए सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की कुछ शक्तियाँ पुनः प्राप्त हुई।

1978 का 44वाँ संशोधन अधिनियम भारतीय संविधान में एक महत्त्वपूर्ण संशोधन था, जिसे जनता पार्टी सरकार के कार्यकाल के दौरान पेश किया गया था। इसका उद्देश्य संविधान के कुछ प्रावधानों को सुधारना था, जिन्हें आपातकाल (1975-1977) के दौरान बदल दिया गया था या निलंबित कर दिया गया था और मौलिक अधिकारों एवं लोकतांत्रिक सिद्धांतों को बहाल करना था। 44वें संशोधन अधिनियम के प्रमुख प्रावधान और उद्देश्य इस प्रकार हैं:

1. **मौलिक अधिकारों की बहाली:**
   - 44 वें संशोधन अधिनियम का उद्देश्य कई मौलिक अधिकारों को बहाल करना था जिन्हें आपातकाल के दौरान निलंबित या सीमित कर दिया गया था।
   - इससे जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार (अनुच्छेद- 21) को कानूनी प्रक्रिया के अलावा अन्य किसी तरीके से अनुलंघनीय के रूप में बहाल किया, और मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए न्यायालयों में जाने के अधिकार की गारंटी दी (अनुच्छेद- 32)।
2. **संपत्ति का अधिकार:**
   - संशोधन ने संपत्ति के अधिकार (अनुच्छेद- 19(1)(f)) को मौलिक अधिकारों की श्रेणी से हटा दिया और इसे विधिक अधिकारों की श्रेणी में रख दिया।
   - इसने सरकार को सामाजिक कल्याण और सार्वजनिक हित के लिए संपत्ति के अधिकार पर उचित प्रतिबंध लगाने की अनुमति दी, जैसा कि इसके हटाए जाने से पहले अनुच्छेद- 31(2) में निर्दिष्ट किया गया था।
3. **निवारक निरोध का उन्मूलन:**
   - 44 वें संशोधन अधिनियम ने राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने या गैर-सामाजिक गतिविधियों की रोकथाम से जुड़े मामलों को छोड़कर अनुच्छेद- 22(4) के तहत निवारक निरोध की शक्ति को समाप्त कर दिया।
   - इसमें यह अनिवार्य किया गया कि निवारक निरोध कानूनों में प्रक्रियागत सुरक्षा उपाय शामिल होने चाहिए, जैसे कि निरोध के आधार के बारे में सूचित किए जाने का अधिकार और कानूनी प्रतिनिधित्व का अधिकार
4. **न्यायिक समीक्षा:**
   - इस संशोधन ने संविधान की सर्वोच्चता तथा मौलिक अधिकारों के साथ असंगत कानूनों की समीक्षा करने तथा उन्हें रद्द करने की न्यायपालिका की शक्ति की पुनः पुष्टि की।
   - इसने स्पष्ट किया कि, समानता और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों से संबंधित संशोधनों के अलावा अनुच्छेद- 368 के अंतर्गत किए गए संवैधानिक संशोधनों को मौलिक अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती।
5. **आपातकालीन प्रावधान:**
   - 44वें संशोधन अधिनियम ने संविधान में आपातकालीन प्रावधानों के दुरुपयोग को रोकने के लिए सुरक्षा उपाय प्रस्तुत किए।
   - इसमें यह प्रावधान किया गया कि आपातकाल की घोषणा केवल बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के आधार पर ही की जा सकती है, न कि केवल आंतरिक अशांति के आधार पर, जैसा कि 1975-1977 के आपातकाल के दौरान किया गया था।
6. **विधायी अधिरोहण का निषेध:**
   - इस संशोधन ने संसद को संविधान में ऐसा कोई भी संशोधन करने से रोक दिया, जो अनुच्छेद- 20 और 21 के तहत गारंटीकृत अधिकारों को निरस्त या सीमित करता हो, यहाँ तक कि आपातकाल के दौरान भी।
7. **अन्य प्रावधान:**
   - 44 वें संशोधन अधिनियम ने संविधान के विभिन्न अन्य प्रावधानों में भी कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए, जिनमें लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में एंग्लो-इंडियन समुदाय का प्रतिनिधित्व तथा राज्यों में विधान परिषदों की संरचना शामिल है।

आर्थिक पहल

- **ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम:** जनता सरकार ने रोजगार के अवसर प्रदान करने और ग्रामीण बुनियादी ढाँचे में सुधार के लिए **"काम के बदले अनाज" कार्यक्रम लागू किया।**
- **भूमि सुधार:** जनता सरकार का उद्देश्य **भूमि सीमा अधिनियम लागू करके ग्रामीण क्षेत्रों में धन असमानता को कम करना था,** जिसके तहत एक व्यक्ति या परिवार के स्वामित्व वाली भूमि की सीमा तय कर दी गई थी।
- अतिरिक्त भूमि को भूमिहीनों को देने का लक्ष्य रखा गया था। विभिन्न राज्यों में इसकी सफलता अलग-अलग स्तर पर रही।
- **उदाहरण के लिए, केरल और पश्चिम बंगाल** में मजबूत वामपंथी सरकारों के कारण **इन्हें महत्त्वपूर्ण सफलता मिली, जबकि बिहार तथा उत्तर प्रदेश में, जहाँ भूस्वामी वर्गों का राजनीतिक प्रभाव अधिक था, सुधार कम प्रभावी रहे।**

जनता सरकार के पतन के कारण

- **सामाजिक तनाव और अराजकता:** सरकार सामाजिक तनाव को दूर करने के लिए संघर्ष करती रही फिर भी हिंसा एवं अराजकता में विशेष रूप से हाशिये पर उपस्थित समुदायों के खिलाफ वृद्धि देखी गई।
- जनता पार्टी विभिन्न राजनीतिक समूहों का गठबंधन थी, जिनकी विचारधाराएँ और एजेंडे परस्पर विरोधी थे। जनता पार्टी के भीतर आंतरिक विवाद और गुटबाजी, जिसमें नीतिगत मुद्दों तथा सत्ता-साझाकरण व्यवस्था पर असहमति शामिल थी, ने सरकार की स्थिरता को कमजोर कर दिया।
- **वैकल्पिक आर्थिक नीति का अभाव:** जनता सरकार ने उद्योग-उन्मुख विकास का विरोध किया, लेकिन एक व्यवहार्य वैकल्पिक आर्थिक नीति तैयार करने में विफल रही।

कांग्रेस का पुनरुत्थान

कांग्रेस में पुन: विभाजन

- **कांग्रेस (I) और कांग्रेस (U):** वर्ष 1978 में, कांग्रेस पार्टी इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस (I) और देवराज उर्स जैसे असंतुष्ट सदस्यों के नेतृत्व वाली कांग्रेस (U) में विभाजित हो गई।
- **चुनावी सफलता:** कांग्रेस (I) ने कर्नाटक और आंध्र प्रदेश के राज्य विधानसभा चुनावों में सफलता हासिल की।

कांग्रेस के पुनरुत्थान के कारण

- **जनता की भावनाएँ:** इंदिरा गांधी के विरुद्ध जनता सरकार की कार्रवाई को न्याय के बजाय बदले के रूप में देखा गया, जिससे उनके प्रति सहानुभूति पैदा हुई।
- **हाशिये पर उपस्थित समूहों का समर्थन:** इंदिरा गांधी को हाशिये पर उपस्थित समुदायों का समर्थन प्राप्त था, जो उन्हें अपने हितों का हिमायती मानते थे।
- **जनता सरकार से मोहभंग:** जनता सरकार के शासन और गुटबाजी से जनता में असंतोष के कारण कांग्रेस पार्टी के प्रति समर्थन में बदलाव आया।

पुनरुत्थानशील कांग्रेस के शासन के सकारात्मक पहलू

- **आर्थिक उपलब्धियाँ:**
  - **मुद्रास्फीति नियंत्रण:** वर्ष 1984 तक मुद्रास्फीति की दर 4% तक कम हो गई।
  - **हरित क्रांति और आर्थिक विकास:** अर्थव्यवस्था में प्रति वर्ष 4% से अधिक की वृद्धि देखी गई तथा हरित क्रांति से उच्च कृषि उत्पादन प्राप्त हुआ।
  - **आर्थिक उदारीकरण:** सार्वजनिक क्षेत्रों की स्थिति को मजबूत करने के प्रयासों के साथ-साथ अर्थव्यवस्था को उदार बनाने के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण सुधार किए गए जिसमें आर्थिक उदारीकरण प्रमुख है।
- **विदेश नीति पहल:**
  - **गुटनिरपेक्ष (NAM) शिखर सम्मेलन:** इंदिरा गांधी ने भारत में आयोजित गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM) के सातवें शिखर सम्मेलन की अध्यक्षता की, जिसने वैश्विक क्षेत्र में भारत के नेतृत्व को प्रदर्शित किया।
  - **विदेश नीति आदर्शवाद से यथार्थवाद की ओर उन्मुख:** भारतीय विदेश नीति ने आदर्शवाद से यथार्थवाद की ओर संक्रमण किया और परमाणु निरस्त्रीकरण का समर्थन करते हुए प्रमुख शक्तियों के साथ संतुलित संबंध बनाए रखा।
- **आंतरिक सुरक्षा उपाय:**
  - **पंजाब संकट और ऑपरेशन ब्लू स्टार: इंदिरा गांधी ने** पंजाब में उग्रवाद से निपटने और आंतरिक सुरक्षा बहाल करने के लिए **ऑपरेशन ब्लू स्टार** सहित कड़े कदम उठाए।

नियम की कमियाँ

- **लंबित संघर्ष:**
  - **सांप्रदायिक, जातिगत और भाषाई संघर्ष:** इस दौरान भिन्न-भिन्न विषयों को लेकर संघर्ष जारी रहे, जैसे पंजाब संकट और पूर्वोत्तर में उग्रवाद आदि जिनसे आंतरिक स्थिरता के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं।
  - **अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार:** संवैधानिक संरक्षण के बावजूद अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के विरुद्ध अत्याचार बेरोकटोक जारी रहे।
- **शासन संबंधी मुद्दे:**
  - **कु-प्रशासन:** कांग्रेस शासित राज्य सरकारों को प्रभावी शासन प्रदान करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप कर्नाटक और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में चुनावी हार हुई।

निष्कर्ष

जनता सरकार के शासन और उसके बाद कांग्रेस पार्टी के पुनरुत्थान ने भारत में महत्त्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तन सुनिश्चित किए जनता सरकार के अल्पकालिक कार्यकाल ने गठबंधन बनाए रखने, सामाजिक तनावों को दूर करने और वैकल्पिक आर्थिक नीतियों को तैयार करने की जटिलताओं को उजागर किया। इसके विपरीत, कांग्रेस के पुनरुत्थान ने आर्थिक उपलब्धियाँ, विदेश नीति पहल और आंतरिक सुरक्षा उपाय सुझाए। हालाँकि, संघर्ष और शासन संबंधी मुद्दों जैसी चुनौतियाँ बनी रहीं।

प्रमुख शब्दावलियाँ: लोक भावनाएँ, स्थिर गठबंधन, भाषाई संघर्ष, सामाजिक तनावों को संबोधित करना, लोकतंत्र को मजबूत करना, बहुदलीय प्रणाली, 44 वाँ संशोधन अधिनियम, आपातकालीन शासन, उदार लोकतंत्र, न्यायिक सशक्तीकरण, भूमि हदबंदी अधिनियम, असहज गठबंधन, वामपंथी सरकारें, आर्थिक उदारीकरण, हिंसा में वृद्धि, अराजकता, हाशिये पर उपस्थित समुदाय, गुट निर्माण, गुटनिरपेक्ष आंदोलन (NAM), ऑपरेशन ब्लू स्टार, आंतरिक स्थिरता आदि।

राजीव गांधी का कार्यकाल

अनेक चुनौतियों का सामना करने के बावजूद, राजीव गांधी की सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न पहलों को क्रियान्वित किया।

राजीव गांधी सरकार के समक्ष समस्याएँ

- **सिख विरोधी दंगे:**
  - **सिखों का नरसंहार:** देश के विभिन्न भागों, विशेषकर दिल्ली में हुए भीषण सिख विरोधी दंगों में सरकार को आलोचना और संलिप्तता के आरोपों का सामना करना पड़ा।
  - **स्थानीय स्तर पर संलिप्तता का आरोप:** स्थानीय नेताओं और कांग्रेस पार्टी कार्यकर्ताओं पर सिखों के खिलाफ हिंसा में सहायता करने का आरोप लगाया गया।
- **भोपाल गैस कांड:**
  - **यूनियन कार्बाइड गैस रिसाव:** यूनियन कार्बाइड कारखाने से निकली जहरीली गैस के कारण हुई भोपाल गैस त्रासदी के परिणामस्वरूप हजारों लोगों की जान चली गई और कई लोग गंभीर रूप से बीमार हो गए।
- **पड़ोसी देशों के साथ संबंध:**
  - **बांग्लादेश के साथ विवाद:** बांग्लादेश के साथ जल विवाद जारी रहा तथा इसके इस्लामी दिशा की ओर बढ़ने के संबंध में चिंताएँ उत्पन्न हुईं।
  - **नेपाल-चीन संबंध:** नेपाल की चीन के साथ बढ़ती निकटता और भारतीय श्रमिकों के लिए वर्क परमिट लागू करने से संबंधों में तनाव उत्पन्न हो गया।
  - **श्रीलंकाई तमिल मुद्दा:** तमिल मुद्दे के निपटान के कारण श्रीलंका के साथ संबंध खराब हो गए।
- **भ्रष्टाचार और घोटाले:**
  - **फेयरफैक्स, एचडीडब्ल्यू और बोफोर्स:** फेयरफैक्स, एचडीडब्ल्यू पनडुब्बी सौदा और बोफोर्स जैसे भ्रष्टाचार घोटालों ने राजीव गांधी की छवि को धूमिल कर दिया।

राजीव गांधी सरकार की पहल और उपलब्धियाँ

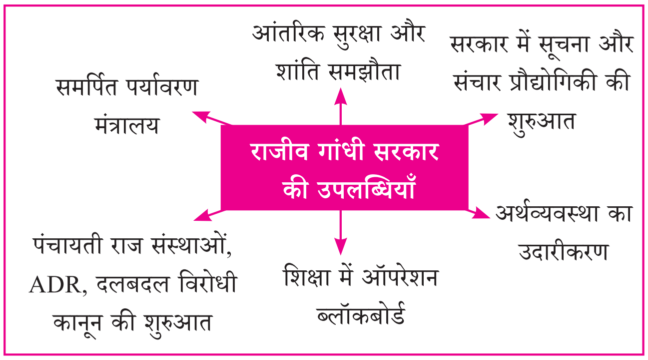

आंतरिक सुरक्षा:

- **पंजाब और असम समझौते:** समझौतों पर हस्ताक्षर से पंजाब और असम में सामान्य स्थिति बहाल करने में मदद मिली।

तकनीकी:

- **कंप्यूटरीकरण कार्यक्रम: कंप्यूटरीकरण** पर सरकार के प्रयास ने भारत को वैश्विक पटल पर सॉफ्टवेयर के दिग्गज के रूप में उभरने में राह प्रशस्त की।
- **प्रौद्योगिकी मिशन:** पेयजल, साक्षरता, टीकाकरण, कृषि और संचार जैसे महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर ध्यान देने के लिए छह प्रौद्योगिकी मिशन स्थापित किए गए।
  - सरकार ने शासन और प्रशासन में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र (NIC) जैसी पहल शुरू की।

दूरसंचार क्रांति

- राजीव गांधी सरकार ने दूरसंचार क्षेत्र के उदारीकरण की पहल की, जिससे दूरसंचार अवसंरचना का विस्तार और आधुनिकीकरण हुआ।
- सार्वजनिक कॉल ऑफिस (PCO) की शुरुआत, दूरसंचार निजीकरण नीतियों और महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड (MTNL) की स्थापना ने भारत में दूरसंचार क्रांति में योगदान दिया।

विकेंद्रीकरण और पंचायती राज

- राजीव गांधी की सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना के माध्यम से स्थानीय शासन को मजबूत करने के लिए 64 वाँ संशोधन अधिनियम, 1989 पेश किया।
- संशोधन का उद्देश्य सत्ता का विकेंद्रीकरण करना, जमीनी स्तर की संस्थाओं को सशक्त बनाना और सहभागी लोकतंत्र को बढ़ावा देना था।

पर्यावरण संरक्षण

- राजीव गांधी की सरकार ने विभिन्न पहलों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास पर जोर दिया।
- सरकार ने वनरोपण, मृदा संरक्षण और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड तथा राष्ट्रीय वनरोपण जैसे कार्यक्रम शुरू किए।
- एक समर्पित पर्यावरण मंत्रालय का गठन तथा प्रमुख परियोजनाओं के लिए अनिवार्य पर्यावरणीय मंजूरी की शुरुआत ने पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रतिबद्धता को परिलक्षित किया।

विदेश नीति पहल

- सरकार ने अंतरराष्ट्रीय समुदाय के साथ सक्रिय भागीदारी की तथा गुटनिरपेक्षता, शांति और निरस्त्रीकरण पर जोर दिया।
- राजीव गांधी की पहल, जैसे परमाणु युद्ध से निपटने के लिए राजीव गांधी कार्य योजना और परमाणु हथियार मुक्त एवं अहिंसक विश्व के लिए राजीव गांधी एक्शन प्लान, ने वैश्विक शांति प्रयासों में योगदान दिया।

अर्थव्यवस्था

- **उदारीकरण को बढ़ावा देना:** सरकार ने अर्थव्यवस्था को उदार बनाने, आर्थिक विकास को बढ़ावा देने और विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए कदम उठाए।
- **जवाहर रोजगार योजना:** इस रोजगार कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण परिवारों के कम से कम एक सदस्य को वर्ष में 50-100 दिन रोजगार उपलब्ध कराना था।

शिक्षा

- **ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड:** इस पहल का उद्देश्य स्कूलों में बुनियादी ढाँचे और बुनियादी सुविधाओं में सुधार करना था।
- **नवोदय विद्यालय:** प्रतिभाशाली ग्रामीण बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए नवोदय विद्यालय स्थापित किए गए।
  - **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986):** राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) जैसी पहलों का उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना, बुनियादी ढाँचे में सुधार करना और पाठ्यक्रम को आधुनिक बनाना था।

सामाजिक क्षेत्र

- **महिला सशक्तीकरण:** महिलाओं के लिए राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना ने स्वास्थ्य और शिक्षा के मुद्दों को संबोधित किया, जबकि कानून के माध्यम से दहेज-संबंधी अपराधों को कम करने का प्रयास किया गया।

राजनीतिक और प्रशासनिक सुधार

- **दलबदल विरोधी कानून:** दलबदल विरोधी कानून पारित करने का उद्देश्य विधायी दलबदल पर अंकुश लगाना था।
- **पंचायती राज संस्थाएँ:** पंचायती राज संस्थाओं में सत्ता के विकेंद्रीकरण को प्रभावी करने के प्रयास किए गए, यद्यपि उन्हें संवैधानिक दर्जा नहीं मिल सका।
- **वैकल्पिक विवाद समाधान:** लोक अदालत अधिनियम ने विवादों को सुलझाने के लिए एक वैकल्पिक तंत्र प्रदान किया।
- **उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम:** यह कानून उपभोक्ताओं को सशक्त बनाता है और उनके अधिकारों की रक्षा करता है।

यद्यपि, राजीव गांधी के कार्यकाल में समानांतर रूप से चुनौतियाँ और उपलब्धियाँ दोनों देखी गई थीं। अपनी सरकार के सामने आने वाली समस्याओं के बावजूद, राजीव गांधी ने विभिन्न क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण सुधार और कार्यक्रमों को लागू किए। प्रौद्योगिकी, शिक्षा, सामाजिक सशक्तीकरण और पर्यावरण संरक्षण पर सरकार के प्रयास ने एक स्थायी प्रभाव छोड़ा। हालाँकि, यह कार्यकाल भ्रष्टाचार के घोटालों और पड़ोसी देशों के साथ स्थिरता तथा सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाए रखने की चुनौतियों से भी भरा रहा। निष्कर्षतः, राजीव गांधी सरकार ने इस अवधि के दौरान भारत के विकास पथ को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

प्रमुख शब्दावलियाँ: सिख विरोधी दंगे, भोपाल गैस त्रासदी, यूनियन कार्बाइड गैस रिसाव, वैकल्पिक विवाद समाधान, फेयरफैक्स, एचडीडब्ल्यू पनडुब्बी सौदा, दलबदल विरोधी कानून, बोफोर्स, ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड, जवाहर रोजगार योजना, नवोदय विद्यालय, पंचायती राज संस्थाएँ, लोक अदालत अधिनियम, सौहार्दपूर्ण संबंध, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम आदि।

राजीव गांधी सरकार की विदेश नीति संबंधी पहल

इस भाग में राजीव गांधी सरकार द्वारा प्रारंभ की गई विदेश नीति पहलों का उल्लेख किया गया है। यह निरस्त्रीकरण को बढ़ावा देने, दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद को समाप्त करने, भारत-चीन संबंधों को मजबूत करने और पड़ोसी देशों को सहायता देने के लिए राजीव गांधी के प्रयासों पर प्रकाश डालती है। इसके अतिरिक्त, यह भाग इस अवधि के दौरान भारत के सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण पर भी जानकारी प्रदान करता है।

परमाणु निरस्त्रीकरण और वैश्विक शांति

- **छह-राष्ट्र पाँच-महाद्वीप पहल:**
    - राजीव गांधी ने इस पहल का पहला शिखर सम्मेलन आयोजित किया, जिसका उद्देश्य महाशक्तियों पर हथियारों को कम करने और परमाणु हथियारों को समाप्त करने के लिए दबाव डालना था।
    - यह पहल परमाणु निरस्त्रीकरण कार्य योजना के रूप में विकसित हुई, जिसने वैश्विक शांति के प्रति भारत की प्रतिबद्धता को दर्शाया।

रंगभेद की समस्या को हल करना और स्वतंत्रता आंदोलनों का समर्थन करना:

- **AFRICA (एक्शन फॉर रजिस्टरिंग इनवेजन कॉलोनियलिज्म एंड अपार्थीड):**
    - राजीव गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद को समाप्त करने के लिए हरारे (जिंबाब्वे की राजधानी) में गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन में इसकी स्थापना की।
    - भारत की भागीदारी ने मुक्ति आंदोलनों का समर्थन करने और उत्पीड़न का विरोध करने के प्रति उसकी प्रतिबद्धताओं को प्रदर्शित किया।

SWAPO को स्वीकृति

- राजीव गांधी की सरकार ने साउथ वेस्ट अफ्रीका पीपुल्स ऑर्गनाइजेशन (SWAPO) को राजनयिक स्वीकृति प्रदान की, जिसने नामीबिया की स्वतंत्रता के लिए लड़ाई लड़ी थी।
- इस स्वीकरण ने राष्ट्रों के आत्मनिर्णय और उपनिवेश-विरोधी संघर्ष के प्रति भारत के समर्थन को परिलक्षित किया।

क्षेत्रीय संबंधों को मजबूत करना

- **भारत-चीन संबंध:**
    - राजीव गांधी की चीन यात्रा 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद भारत-चीन संबंधों में एक महत्त्वपूर्ण सुधार का प्रतीक थी।
    - इस यात्रा ने दोनों देशों के बीच बेहतर राजनयिक और आर्थिक संबंधों की नींव रखी।

पड़ोसी देशों को सहायता

- **मालदीव को सहायता: भारत ने मालदीव में तख्तापलट के प्रयासों को रोकने और** मालदीव को आतंकियों से मुक्त करने के लिए ऑपरेशन कैक्टस के माध्यम से सहायता प्रदान की, जिससे क्षेत्रीय स्थिरता तथा सुरक्षा के प्रति उसकी प्रतिबद्धता उजागर हुई।

ऑपरेशन कैक्टस

यह वर्ष 1988 में भारतीय सशस्त्र बलों द्वारा प्रारंभ किया गया एक त्वरित और सफल सैन्य अभियान था, जिसका उद्देश्य मालदीव में तख्तापलट के प्रयास को दबाना था, जिससे लोकतांत्रिक शासन को संरक्षित किया जा सके तथा क्षेत्र में शांति सुनिश्चित हो सके।

- **वियतनामी सेना की वापसी में भूमिका:** भारत ने कंपूचिया (कंबोडिया) से वियतनामी सेना की वापसी में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे क्षेत्रीय शांति और स्थिरता में योगदान मिला।

सशस्त्र बलों का आधुनिकीकरण

- **सशस्त्र बलों का आधुनिकीकरण:** राजीव गांधी की सरकार ने भारत के सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण पर ध्यान केंद्रित किया, जिसके परिणामस्वरूप रक्षा व्यय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।
- **नौसेना का सशक्तीकरण:** भारत ने ब्रिटेन से दूसरा विमानवाहक पोत खरीदकर और सोवियत संघ से एक परमाणु ऊर्जा चालित पनडुब्बी पट्टे पर लेकर अपनी नौसैनिक क्षमताओं को बढ़ाया।

आधुनिकीकरण के प्रयासों का उद्देश्य भारत की रक्षा क्षमताओं को बढ़ाना और क्षेत्रीय सुरक्षा बनाए रखना था। राजीव गांधी सरकार की विदेश नीति की पहलों ने वैश्विक शांति, रंगभेद विरोधी आंदोलनों, क्षेत्रीय स्थिरता और अपने सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण के प्रति भारत की प्रतिबद्धता को प्रदर्शित किया। इन पहलों का उद्देश्य राजनयिक संबंधों को मजबूत करना, स्वतंत्रता आंदोलनों का समर्थन करना और निरस्त्रीकरण प्रयासों में योगदान देना था। इन क्षेत्रों पर राजीव गांधी के ध्यान ने उनके कार्यकाल के दौरान भारत की विदेश नीति के रुख पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा।

प्रमुख शब्दावलियाँ

ऑपरेशन कैक्टस, निरस्त्रीकरण, परमाणु निरस्त्रीकरण के लिए कार्य योजना, सशस्त्र बलों का आधुनिकीकरण गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन, उपनिवेशवाद और रंगभेद, दक्षिण पश्चिम अफ्रीका पीपुल्स ऑर्गनाइजेशन (SWAPO), नौसेना क्षमताएँ, क्षेत्रीय सुरक्षा, वैश्विक शांति आदि।

1990 के दशक और नई सहस्राब्दी में भारत

यह भाग 1990 के दशक और नई सहस्राब्दी के दौरान भारत के राजनीतिक परिदृश्य और प्रमुख पहलों का अवलोकन प्रदान करता है। इसमें कांग्रेस पार्टी की हार, गठबंधन सरकारों का उदय, प्रमुख नीतिगत सुधार और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) सरकार के तहत वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य पर चर्चा की गई है।

परिवर्तन और चुनौतियाँ

कांग्रेस पार्टी की हार

- कांग्रेस पार्टी को वर्ष 1989 के आम चुनावों में हार का सामना करना पड़ा, जिसका मुख्य कारण भ्रष्टाचार के आरोप और कथित मुस्लिम तुष्टिकरण था।

- यह भारतीय राजनीति में एक बदलाव का दौर था क्योंकि देश में दूसरी गैर-कांग्रेस की सरकार का गठन हुआ था।

- **मंडल आयोग और अयोध्या विवाद:**
  - मंडल आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन के कारण विशेषकर उत्तरी भारत में व्यापक विरोध हुआ।
  - राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद विवाद के कारण तनाव बढ़ गया, जिसके परिणामस्वरूप सांप्रदायिक संघर्ष हुए।

1990 के दशक में सरकारें

- **वी.पी. सिंह की सरकार:**
  - वी.पी. सिंह प्रधानमंत्री बने और उन्होंने एक अल्पकालिक सरकार का नेतृत्व किया जो सामाजिक तथा राजनीतिक चुनौतियों से घिरी रही।
  - चन्द्रशेखर आजाद, उनके उत्तराधिकारी बने लेकिन वे बहुत कम समय तक ही इस पद पर रहे।
- **पी.वी. नरसिम्हा राव की सरकार:**
  - पी.वी. नरसिम्हा राव के नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी 1991 के आम चुनावों के बाद सत्ता में वापस लौटी।
  - सरकार ने भारतीय अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिए **उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) के रूप में प्रसिद्ध महत्त्वपूर्ण आर्थिक सुधार पेश किए।**

गठबंधन राजनीति और यूपीए सरकार

- **गठबंधन सरकारें (1996-1999):**
  - कई गठबंधन सरकारें बनीं, जिसका परिणाम राजनीतिक अस्थिरता और छोटा कार्यकाल रहा।
  - वर्ष 1999 में एनडीए सरकार के गठन तक ये सरकारें स्थिरता बनाए रखने के लिए संघर्ष करती रहीं।
- **संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) सरकार (2004-2014):**
  - प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार ने उल्लेखनीय पहलों को लागू किया।
  - **प्रमुख उपलब्धियाँ:** प्रमुख उपलब्धियों में शामिल हैं: सूचना का अधिकार अधिनियम, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, तथा अमेरिका के साथ असैन्य परमाणु समझौते पर हस्ताक्षर।

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकारें

- **एनडीए I सरकार (2014-2019)**
  - प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एनडीए बहुमत के साथ सत्ता में आई, जिससे गठबंधन की राजनीति का अंत हो गया।
  - प्रमुख पहलें आर्थिक विकास, सामाजिक विकास, पर्यावरण संरक्षण और राष्ट्रीय एकीकरण पर केंद्रित थीं।
- **एनडीए II सरकार (2019-2024):**
  - कोविड-19 महामारी ने भारत के समक्ष गंभीर चुनौतियाँ पेश कीं, जिससे अर्थव्यवस्था और स्वास्थ्य सेवा प्रणाली प्रभावित हुई।
  - आर्थिक विकास को बढ़ावा देने, विदेशी संबंधों को प्रबंधित करने, राष्ट्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने तथा अनुच्छेद- 370 और राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद मामले जैसे प्रमुख मुद्दों को सुलझाने के प्रयास किए गए।

1990 के दशक और नई सहस्राब्दी में भारत के राजनीतिक परिदृश्य में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इस अवधि के दौरान गठबंधन सरकारों, आर्थिक सुधारों, सामाजिक पहलों और विदेश नीति विकास ने भारत के राजनीतिक प्रक्षेपवक्र को आकार दिया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली वर्तमान एनडीए सरकार द्वारा आर्थिक विकास, सामाजिक कल्याण, राष्ट्रीय एकीकरण और वैश्विक एकीकरण जैसे मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। परिणामस्वरूप, भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली अन्य देशों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

सूचना का अधिकार अधिनियम, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, असैन्य परमाणु समझौता, गठबंधन सरकारें, भ्रष्टाचार के आरोप, मंडल आयोग, मुस्लिम तुष्टिकरण, राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद, राष्ट्रीय एकीकरण, उदारीकरण, निजीकरण, वैश्वीकरण, राजनीतिक परिदृश्य आदि।

भारत में गठबंधन की राजनीति

राजीव गांधी के दौर के बाद भारत में गठबंधन की राजनीति ने गति पकड़ी, जिसने एक दलीय वर्चस्व वाली व्यवस्था को खत्म कर दिया और बहुदलीय राजनीति का मार्ग प्रशस्त किया। इस दौर में कांग्रेस का वर्चस्व कम हुआ और क्षेत्रीय तथा छोटे दलों का उदय हुआ, जिससे अंततः केंद्र एवं राज्य दोनों स्तरों पर गठबंधन सरकारें बनीं।

गठबंधन राजनीति का उदय

- **वर्ष 1991 के आम चुनाव**: वर्ष 1989 के चुनावों के बाद कांग्रेस के प्रभुत्व में गिरावट शुरू हुई और राजीव गांधी की हत्या के बाद वर्ष 1991 के चुनावों में उसे स्पष्ट बहुमत नहीं मिल सका। कांग्रेस ने पीवी नरसिम्हा राव के नेतृत्व में अल्पमत सरकार बनाई, जो वार्ता और समझौते के जरिए अपना कार्यकाल पूरा करने में सफल रही और इस तरह केंद्र में गठबंधन की राजनीति की शुरुआत हुई।
- **क्षेत्रीय शक्तियों का उदय**: राजीव गांधी के बाद के दौर में समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, तेलुगु देशम पार्टी, द्रविड़ मुनेत्र कड़गम, अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम जैसी क्षेत्रीय पार्टियों का उदय हुआ। इन पार्टियों ने राष्ट्रीय राजनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई और क्षेत्रीय आकांक्षाओं तथा मुद्दों को उजागर किया।

गठबंधन सरकारें और उनका प्रभाव

- **संयुक्त मोर्चा सरकार (1996-98)**: स्वतंत्र भारत में पहली बार केंद्र में एक गठबंधन सरकार, संयुक्त मोर्चा, का गठन हुआ, जिसे कांग्रेस का बाह्य समर्थन प्राप्त था। हालाँकि, सरकार अस्थिर थी और दो साल से भी कम समय में गिर गई।
- **राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (NDA) (1998-2004, 2014-वर्तमान)**: भारतीय जनता पार्टी (BJP) के नेतृत्व में एनडीए ने वर्ष 1998 से 2004 तक

अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में एक स्थिर सरकार बनाने में कामयाबी हासिल की। वर्ष 2014 में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में यह सत्ता में वापस आई और आज भी बनी हुई है, गठबंधन होने के बावजूद यह स्थिरता का प्रदर्शन कर रही है।

- **संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) (2004-2014)**: कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार विभिन्न क्षेत्रीय दलों के समर्थन से सत्ता में आई, जिसने गठबंधन राजनीति की ताकत को उजागर किया। कई चुनौतियों के बावजूद, इसने सामाजिक कल्याण योजनाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए दो कार्यकाल पूरे किए।
- **नीति-निर्माण और शासन**: गठबंधन की राजनीति ने नीति-निर्माण और शासन को प्रभावित किया, क्योंकि इसमें शामिल दलों के बीच आम सहमति की आवश्यकता थी। इससे जैसे सूचना का अधिकार अधिनियम जैसे सफल नीतियों का क्रियान्वयन हुआ, वहीं असहमति के कारण नीति ठहराव भी हुआ।

गठबंधन राजनीति की चुनौतियाँ

राजनीतिक अस्थिरता:

- **वर्ष 1996 से 1999 तक का काल** राजनीतिक अस्थिरता का उपयुक्त उदाहरण है।
- **इस छोटी सी अवधि के दौरान, भारत में तीन प्रधानमंत्री हुए- अटल बिहारी वाजपेयी, एच.डी. देवगौड़ा और इंद्र कुमार गुजराल, जो** गठबंधन राजनीति के कारण उत्पन्न अस्थिरता को दर्शाता है।

नीतिगत गतिरोध

- यूपीए सरकार (2004-2014) को वस्तु एवं सेवा कर (GST) लागू करने को लेकर भारी विरोध का सामना करना पड़ा।
- अपने गठबंधन सहयोगियों और विपक्ष के प्रतिरोध के कारण, जीएसटी का कार्यान्वयन 2017 तक विलंबित रहा, जब अगली सरकार ने इस पर आम सहमति बनाई
- इस विलंब के कारण जीएसटी से मिलने वाले संभावित आर्थिक लाभ में बाधा उत्पन्न हुई।

लोकलुभावन निर्णय एवं उपाय:

- संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (UPA) सरकार का वर्ष 2008 में कृषि ऋण माफ करने का निर्णय, जिसकी लागत 15 अरब डॉलर से अधिक थी, इसका एक उदाहरण है।
- यद्यपि यह कदम राजनीतिक रूप से लोकप्रिय था और इससे किसानों को तत्काल राहत मिली, लेकिन इससे देश का राजकोषीय घाटा बढ़ गया जिस कारण इसकी आलोचना की गई।

अतः गठबंधन युग ने भारत के राजनीतिक परिदृश्य को बदल दिया, शासन में आम सहमति, संवाद और गठबंधन निर्माण के महत्त्व पर जोर दिया। हालाँकि, गठबंधन की राजनीति ने अस्थिरता और नीतिगत गतिरोध जैसी चुनौतियाँ भी पेश कीं। एकल-पार्टी के प्रभुत्व के युग से गठबंधन युग में बदलाव, भारत की लोकतांत्रिक राजनीति की विकसित होती प्रकृति को रेखांकित करता है। गठबंधन की राजनीति का भविष्य बदलती राजनीतिक वास्तविकताओं और मतदाता वरीयताओं द्वारा तय होता रहेगा।

प्रमुख शब्दावलियाँ

मुख्य शब्दावली: राजनीतिक अस्थिरता, गठबंधन सरकारें, एक-दलीय प्रभुत्व प्रणाली, गठबंधन राजनीति, लोकलुभावन उपाय, राष्ट्रीय राजनीति, राजकोषीय घाटा, वस्तु एवं सेवा कर (GST), नीतिगत गतिरोध, सूचना का अधिकार अधिनियम आदि।

विगत वर्षों के प्रश्न

- "जय जवान जय किसान" नारे के विकास और महत्त्व पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी लिखिए। **(2013)**
- स्वतंत्रता पूर्व और स्वतंत्रता पश्चात् भारत में मौलाना अबुल कलाम आजाद के योगदान पर चर्चा कीजिए। **(2013)**
- वर्ष 1966 में ताशकंद समझौते के लिए जिम्मेदार परिस्थितियों का विश्लेषण कीजिए। इस समझौते के मुख्य बिंदुओं पर चर्चा कीजिए। **(2013)**

2 राष्ट्रीय एकीकरण

डोरोथी सिंपसन के अनुसार राष्ट्रीय एकीकरण की परिभाषा, "राष्ट्रीय एकीकरण एक ऐसी मानसिकता विकसित करता है जो व्यक्तिगत समूहों की तुलना में राष्ट्र के प्रति निष्ठा को बढ़ावा देती है एवं संकीर्ण हितों के बजाय राष्ट्र के कल्याण को प्राथमिकता देती है। यह एक ऐसा बंधन है जो राष्ट्र के नागरिकों को एकजुट करता है, विभिन्न भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों के मध्य साझा पहचान की भावना को बढ़ावा देता है। हालाँकि, इस एकता में भाषावाद, क्षेत्रवाद, सांप्रदायिकता और जातिवाद जैसी बाधाएँ विद्यमान हैं।"

स्वतंत्रता पश्चात भारत को राष्ट्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने, लोकतंत्र की स्थापना करने तथा निरंकुश शासन के आदी हो चुके लोगों के मध्य लोकतांत्रिक लोकाचार विकसित करने में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

रियासतों का एकीकरण

- तत्कालीन ब्रिटिश भारत का लगभग **40% क्षेत्र रियासतों के अधीन था**, जिन्हें स्वायत्तता का अलग-अलग स्तर प्राप्त था। ब्रिटिश शासन की समाप्ति के बाद उन्हें कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा।
- **सरदार पटेल और वी.पी. मेनन की भूमिका:** नवगठित स्टेट्स डिपार्टमेंट के तत्त्वावधान में सरदार पटेल और वी.पी. मेनन ने इन राज्यों को एकीकृत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता-पूर्व एकीकरण

- **त्रावणकोर:**

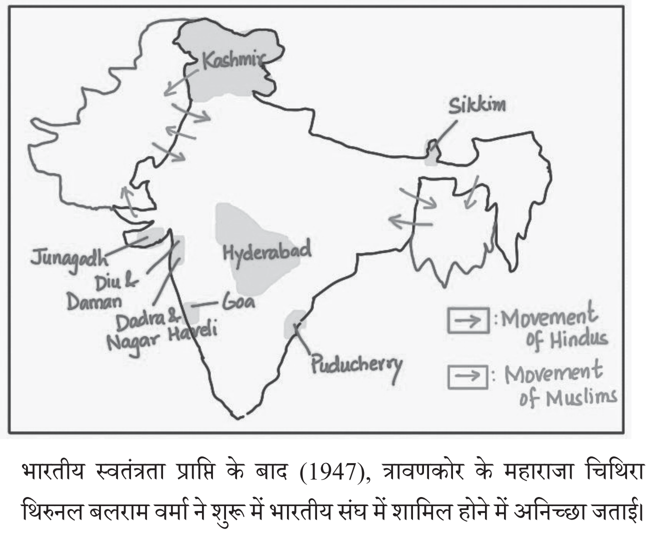

- भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद (1947), त्रावणकोर के महाराजा चिथिरा थिरुनल बलराम वर्मा ने शुरू में भारतीय संघ में शामिल होने में अनिच्छा जताई। राज्य के रणनीतिक महत्त्व और आर्थिक व्यवहार्यता एवं कोच्चि बंदरगाह जैसे महत्त्वपूर्ण संसाधनों से प्रभावित होने के कारण उनका झुकाव स्वतंत्र स्थिति घोषित करने की ओर था।
- त्रावणकोर में भारतीय संघ के साथ एकीकरण की माँग को लेकर एक मजबूत लोक आंदोलन उभरा। यह पूरे भारत में एक व्यापक लहर का हिस्सा था, जिसमें विभिन्न रियासतों के स्थानीय नेता और शामिल जनता नवगठित लोकतांत्रिक भारत के साथ एकीकरण के लिए दबाव डाल रही थी। त्रावणकोर में राज्य कांग्रेस पार्टी ने भारत में शामिल होने के पक्ष में जनमत जुटाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- सरदार वल्लभ भाई पटेल, जो रियासतों को भारतीय संघ में एकीकृत करने के लिए जिम्मेदार थे और राज्य विभाग के सचिव वी.पी. मेनन, त्रावणकोर सहित अन्य रियासतों के शासकों के साथ हो रही वार्ताओं में सक्रिय रूप से शामिल थे। पटेल ने कूटनीतिक दबाव डाला और भारतीय संघ में शामिल होने से प्राप्त होने वाले लाभों की वकालत की।
- जुलाई, 1947 में त्रावणकोर के दीवान सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर की हत्या का प्रयास किया गया, वे स्वतंत्र त्रावणकोर के प्रबल समर्थक थे। इस घटना ने राजनीतिक परिदृश्य को काफी हद तक बदल दिया, जिसके कारण उन्हें इस्तीफा देना पड़ा और एकीकरण की नीति में बदलाव करना पड़ा।
- राजनीतिक नेतृत्व में परिवर्तन और बढ़ते जन दबाव के बाद, त्रावणकोर के महाराजा ने **30 जुलाई, 1947 को** भारतीय संघ के साथ विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। त्रावणकोर ने रक्षा, विदेशी मामलों और संचार पर नियंत्रण छोड़ते हुए भारत में विलय पर सहमति व्यक्त की।
- 1949 ई. में, त्रावणकोर को कोचीन की नजदीकी रियासत के साथ मिलाकर त्रावणकोर-कोचीन संघ बनाया गया। इसके बाद, 1956 ई. में भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन के साथ, त्रावणकोर और कोचीन के क्षेत्रों को मालाबार जिले (पूर्व में मद्रास राज्य का हिस्सा) के साथ मिलाकर वर्तमान केरल नामक एक नया राज्य बनाया गया, जो मुख्य रूप से मलयालम भाषी लोगों पर आधारित था।
- **जोधपुर:**
  - प्रारंभ में पाकिस्तान के प्रति झुकाव के बावजूद, सरदार पटेल के कूटनीतिक प्रयासों से **महाराजा हनवंत सिंह ने** विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए, जिससे जोधपुर भारत का हिस्सा हो गया।
  - पटेल ने जोधपुर के महाराजा को भारतीय संघ के साथ विशेष संबंधों का आश्वासन दिया, जिसमें विशेषाधिकार और सुरक्षा शामिल थी। संप्रभुता खोने और हिंदू बहुल भारत के साथ गठबंधन करने की संभावित प्रतिक्रिया से संबंधित महाराजा की आशंकाओं को कम करने में पटेल के कूटनीतिक कौशल महत्त्वपूर्ण थे।
  - जोधपुर नवगठित राजस्थान राज्य का हिस्सा बन गया। धीरे-धीरे आगामी कुछ वर्षों में उसका और अधिक एकीकरण हुआ, जिसने अन्य पड़ोसी रियासतों को भी एकीकृत किया, अंततः वर्तमान राजस्थान का निर्माण हुआ। महाराजा हनवंत सिंह को, अन्य राजकुमारों की तरह, प्रिवीपर्स और अन्य प्रतीकात्मक पद एवं सम्मान दिए गए।

- **भोपाल:**
  - **हबीबुल्लाह खान** के शासन और जिन्ना के समर्थन के तहत, भोपाल ने स्वतंत्रता का लक्ष्य रखा।
  - हालाँकि, जन असंतोष और सरदार पटेल के दबाव के कारण जुलाई, 1947 में अंततः इसका भारतीय संघ में एकीकरण हो गया।

स्वतंत्रता पश्चात एकीकरण

जूनागढ़

- **पाकिस्तान में शामिल होने की घोषणा:** जूनागढ़ के नवाब ने पाकिस्तान में शामिल होने की अपनी मंशा की घोषणा की, जबकि जूनागढ़ और पाकिस्तान के मध्य कोई भौगोलिक निरंतरता नहीं थी।
- **भारत के प्रति स्थानीय वरीयता:** जूनागढ़ की विशाल हिंदू आबादी ने भारत के साथ एकीकरण की इच्छा व्यक्त की।
- **जन-विद्रोह:** जूनागढ़ के नवाब के विरुद्ध जन विद्रोह भड़क उठा, जिससे उसे भागने पर मजबूर होना पड़ा।
- **भारत सरकार से हस्तक्षेप का अनुरोध:** जूनागढ़ के दीवान शाह नवाज भुट्टो ने भारत सरकार को हस्तक्षेप करने का निमंत्रण दिया।
- **जनमत संग्रह और भारतीय संघ में विलय:** भारतीय सैनिकों ने जूनागढ़ में प्रवेश किया और फरवरी, 1948 में जनमत संग्रह कराया गया, जिसके परिणामस्वरूप भारत में विलय का निर्णय लिया गया।

कश्मीर

- **राज्य संप्रभुता की आकांक्षा:** कश्मीर के शासक ने भारत के लोकतंत्र और पाकिस्तान में संभावित सांप्रदायिकता के बारे में चिंता व्यक्त करते हुए, एक स्वतंत्र राज्य बनाए रखने की इच्छा व्यक्त की।
- **पठान जनजातियों का आक्रमण:** 1947 ई. में शीत ऋतु की शुरुआत में कथित तौर पर पाकिस्तानी सेना द्वारा समर्थित कई पठान जनजातियों ने, कश्मीर पर आक्रमण कर दिया और श्रीनगर की ओर बढ़े।
- **भारत से सहायता का आह्वान:** कश्मीर के महाराजा ने भारत से सहायता की माँग की, लेकिन भारत कश्मीर के औपचारिक विलय के बिना कानूनी रूप से हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।
- **भारतीय सैनिकों की तैनाती:** महाराजा के भारत में औपचारिक विलय के निर्णय के बाद, भारतीय सैनिकों को वहाँ तैनात किया गया, जो उग्रवादियों को खदेड़ने में सफल रहे, हालाँकि, राज्य के कुछ हिस्सों पर उनका नियंत्रण बना रहा।
- **संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का योगदान:** भारत ने इस मामले को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के समक्ष लाने का फैसला किया। परिषद ने पाकिस्तान का पक्ष लिया और 31 दिसंबर, 1948 को युद्ध विराम को स्वीकार कर लिया, जो आज भी लागू है।

हैदराबाद

- **स्वतंत्र स्थिति का दावा:** हैदराबाद के निजाम ने स्वतंत्रता की इच्छा जताते हुए भारत में विलय से मना कर दिया।
- **यथास्थिति समझौता या स्टैंडस्टिल समझौता (नवंबर, 1947):** नवंबर, 1947 को यथास्थिति या स्टैंडस्टिल समझौते पर हस्ताक्षर किए गए, जिससे निजाम को अपने अगले कदम पर विचार करने का समय मिल गया।
- **निजाम की सैन्य तैयारियाँ:** निजाम का उद्देश्य इस समय में अपनी सैन्य शक्ति को मजबूत करना था ताकि वह भारत को हैदराबाद की संप्रभुता को स्वीकार करने के लिए मजबूर कर सके।
- **रजाकारों द्वारा दमन:** निजाम ने सांप्रदायिक संगठन **इत्तिहाद उल मुस्लिमीन** और उसके **अर्द्धसैनिक दल रजाकारों का समर्थन किया,** जिन्होंने नागरिकों का गंभीर रूप से दमन किया।
- **साम्यवादी आंदोलन का उदय:** तेलंगाना क्षेत्र में एक शक्तिशाली साम्यवादी नेतृत्व वाला किसान आंदोलन उभरा, जहाँ कृषक समूहों ने रजाकार अत्याचारों के खिलाफ बगावत की।
- **भारतीय सैन्य हस्तक्षेप:** निजाम द्वारा निरंतर हथियारों के आयात और रजाकारों द्वारा लगातार दमन को देखते हुए, भारत सरकार ने सितंबर, 1948 में **ऑपरेशन पोलो के तहत सैनिकों को तैनात किया।** इसके बाद, निजाम ने आत्मसमर्पण कर दिया और हैदराबाद रियासत का भारतीय संघ में विलय हो गया।

मणिपुर

- मणिपुर ब्रिटिश आधिपत्य के तहत एक रियासत थी जो काफी हद तक स्वायत्त थी। 1947 ई. में भारत की स्वतंत्रता के समय, मणिपुर के महाराजा बोधचंद्र सिंह ने शुरू में राज्य को एक स्वतंत्र इकाई घोषित किया था।
- **विलय पत्र:** मणिपुर के महाराजा बोधचंद्र सिंह ने भारत सरकार के दबाव में आंतरिक स्वायत्तता बनाए रखने के आश्वासन के साथ विलय पत्र पर हस्ताक्षर किए।
- संवैधानिक राजतंत्र की स्थापना: जनता के दबाव में जून, 1948 में चुनाव हुए, जिससे राज्य संवैधानिक राजतंत्र में तब्दील हो गया। मणिपुर भारत का पहला ऐसा क्षेत्र बन गया, जहाँ सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनाव हुए।
- **विलय समझौता:** 1949 ई. में भारत संघ और मणिपुर के महाराजा के मध्य विलय समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। हालाँकि, यह मणिपुर विधानसभा से परामर्श किए बिना किया गया था, जिसके कारण चिरस्थायी असंतोष पैदा हुआ।
- विलय के बाद मणिपुर को शुरू में मुख्य आयुक्त द्वारा प्रशासित भाग C राज्य बनाया गया था। 1956 ई. में इसे केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा मिला और अंततः 1972 ई. में अपनी विधानसभा के साथ यह भारतीय संघ का पूर्ण राज्य बन गया।

फ्रांसीसी और पुर्तगाली बस्तियाँ

- **फ्रांसीसी बस्तियों का शांतिपूर्ण एकीकरण:** व्यापक वार्ताओं के बाद, फ्रांसीसी बस्तियों को शांतिपूर्ण तरीके से भारत को हस्तांतरित कर दिया गया।
- **पुर्तगाली प्रतिरोध:** पुर्तगाल ने शुरू में अपनी बस्तियाँ भारत को सौंपने का विरोध किया।
- **पुर्तगाल को नाटो का समर्थन:** पुर्तगाल को नाटो सहयोगियों का समर्थन प्राप्त था, जिसके कारण गोवा में स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान नागरिकों का दमन बढ़ गया।
- **ऑपरेशन विजय:** 1961 ई. में, भारतीय सैनिकों ने **ऑपरेशन विजय** के तहत गोवा में प्रवेश किया।
- **गोवा का भारतीय संघ में विलय:** पुर्तगालियों द्वारा ऑपरेशन विजय के प्रति कोई विशेष प्रतिरोध जाहिर नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप गोवा का भारतीय संघ में विलय हो गया।

पुर्तगालियों से गोवा की मुक्ति

- यद्यपि, भारत से ब्रिटिश साम्राज्य 1947 ई. में समाप्त हो गया था, लेकिन पुर्तगाल ने गोवा, दमन, दीव और अंजेदिवा के क्षेत्रों से हटने से इनकार कर दिया, जो सोलहवीं शताब्दी से उसके औपनिवेशिक शासन के अधीन थे।
- अपने लंबे शासनकाल के दौरान **पुर्तगालियों ने गोवा के लोगों का दमन किया,** उन्हें नागरिक अधिकारों से वंचित रखा और उनका जबरन धर्म परिवर्तन कराया।
- भारतीय स्वतंत्रता के बाद, भारत सरकार द्वारा पुर्तगाली सरकार को वापस लौटने के लिए मनाने हेतु बहुत धैर्यपूर्वक प्रयास किए गए। गोवा में स्वतंत्रता के लिए एक मजबूत लोक आंदोलन प्रचलित था। महाराष्ट्र के समाजवादी सत्याग्रहियों ने आंदोलन को मजबूत किया।
- **अंततः दिसंबर, 1961** में , भारत सरकार ने सेना भेजी। फलस्वरूप, दो दिन की कार्रवाई के बाद इन क्षेत्रों को आजाद करा लिया गया। अंततः **गोवा, दीव और दमन भारतीय संघ के अंतर्गत केंद्र शासित प्रदेश** बन गए। हालाँकि, कुछ ही समय बाद एक और जटिलता उभरकर सामने आई। **महाराष्ट्रवादी गोमांतक पार्टी (MGP)** के नेतृत्व में एक वर्ग यह चाहता था कि गोवा का एक मराठी भाषी क्षेत्र के रूप में महाराष्ट्र में विलय हो जाना चाहिए। हालाँकि, अनेक गोवा निवासी गोवा की पहचान यहाँ की विविधता मूलक संस्कृति, विशेष रूप से कोंकणी भाषा को बनाए रखने के इच्छुक थे। जिसका नेतृत्व **यूनाइटेड गोअन पार्टी (UGP) द्वारा किया जा रहा था।**
- जनवरी, 1967 में केंद्र सरकार ने **गोवा में एक विशेष 'जनमत सर्वेक्षण' आयोजित कराया,** जिसमें जनता से इस संबंध में उनकी राय ली गई कि वे महाराष्ट्र का हिस्सा बनना चाहते हैं अथवा स्वतंत्र रहना चाहते हैं। इस मुद्दे पर लोगों की इच्छा जानने के लिए जनमत संग्रह जैसी प्रक्रिया अपनाई गई। बहुमत ने महाराष्ट्र से बाहर रहने के पक्ष में मतदान किया। इस प्रकार, **गोवा एक केंद्र शासित प्रदेश बना रहा।**
- अंततः **1987 ई. में गोवा भारतीय संघ का एक राज्य बन गया।** दमन और दीव को 1978 ई. में केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा प्रदान किया गया। हाल ही में, दादरा और नागर हवेली तथा दमन और दीव केंद्र शासित प्रदेशों (UT) को दादरा **और नागर हवेली तथा दमन और दीव विलय अधिनियम, 2019 द्वारा एक ही केंद्र शासित प्रदेश** के रूप **में मान्यता दी गई है।**

एकीकरण की प्रक्रिया के बाद, कई छोटे राज्यों को या तो पड़ोसी राज्यों के साथ मिला दिया गया या केंद्र शासित प्रदेशों में बदल दिया गया। इससे पाँच नए संघों का निर्माण हुआ - मध्य भारत, राजस्थान, पटियाला और पूर्वी पंजाब राज्य संघ (PEPSU), सौराष्ट्र तथा त्रावणकोर-कोचीन। यद्यपि, मैसूर, हैदराबाद और जम्मू-कश्मीर ने भारतीय संघ के भीतर अपना अलग राज्य का दर्जा बरकरार रखा।

प्रमुख शब्दावलियाँ

एकीकरण, शांतिपूर्ण एकीकरण, साझा पहचान की भावना, यथास्थिति (स्टैंडस्टिल) समझौता, भाषावाद, क्षेत्रवाद, सांप्रदायिकतावाद, संवैधानिक राजतंत्र, जातिवाद, निरंकुश शासन, सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार, भारत में विलय, जनमत संग्रह, संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद, विलय पत्र, ऑपरेशन पोलो, ऑपरेशन विजय, नाटो, पेप्सू (PEPSU) आदि।

भारत में भाषाई विविधता

भारत एक भाषाई रूप से विविधतापूर्ण देश है, जहाँ 19,500 से अधिक भाषाएँ मातृभाषा के रूप में बोली जाती हैं। भाषा, संस्कृति से आंतरिक रूप से जुड़ी होने के कारण, पहचान को परिभाषित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस बहुआयामी भाषाई परिदृश्य ने नए स्वतंत्र भारत के लिए राष्ट्रीय या आधिकारिक भाषा का चयन करने में चुनौती पेश की।

राष्ट्रभाषा पर विवाद

- **हिंदी पर विवाद:** हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रस्ताव ने हिंदी भाषी और गैर-हिंदी भाषी क्षेत्रों के मध्य विवाद को जन्म दिया।
- **विवाद का समाधान:** भाषा का मुद्दा तब काफी हद तक सुलझ गया जब संविधान निर्माताओं ने लगभग सभी प्रमुख भाषाओं को (वर्तमान में संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएँ) 'भारत की भाषाओं' के रूप में मान्यता दे दी।

राजभाषा का मुद्दा

- **अंग्रेजी का विरोध:** महात्मा गांधी ने अंग्रेजी को उसके विदेशी मूल के कारण, भारत की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता देने का विरोध किया।
- **दोहरी आधिकारिक भाषाएँ:** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार, **देवनागरी लिपि में हिंदी** को अंततः संघ सरकार की **आधिकारिक भाषा** के रूप में चुना गया। हालाँकि, यह भी निर्णय लिया गया कि संविधान के लागू होने से 15 वर्ष की अवधि तक संघ के सभी आधिकारिक उद्देश्यों के लिए अंग्रेजी का उपयोग जारी रहेगा।
- **संक्रमण समयावधि:** अंग्रेजी से हिंदी में पूर्ण संक्रमण के लिए 1965 ई. तक की एक समयावधि तय की गई थी। इससे हिंदी और गैर-हिंदी भाषियों के मध्य मतभेद पैदा हो गया।
- **राजभाषा आयोग (1955):** 1955 ई. में संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार एक राजभाषा आयोग की स्थापना की गई। इस आयोग ने केंद्र सरकार के कामकाज में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को धीरे-धीरे लागू करने की सिफारिश की।
- **आयोग की सिफारिशों के प्रति असहमति:** आयोग की सिफारिशों को सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं किया गया तथा तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल के प्रतिनिधियों ने भी इस पर असहमति व्यक्त की।
- **संयुक्त संसदीय आयोग द्वारा समीक्षा:** संयुक्त संसदीय आयोग द्वारा आयोग की रिपोर्ट की समीक्षा की गई।
- **1960 ई. का राष्ट्रपति आदेश:** तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद ने एक आदेश जारी किया जिसमें कहा गया कि 1965 ई. के बाद हिंदी प्रमुख आधिकारिक भाषा बन जाएगी। हालाँकि, अंग्रेजी बिना किसी प्रतिबंध के सहयोगी आधिकारिक भाषा के रूप में बनी रहेगी।
- **हिंदी को आरोपित करने के विरुद्ध विरोध:** हिंदी को एकमात्र आधिकारिक भाषा बनाने के प्रस्ताव का खासकर दक्षिण भारत में, व्यापक स्तर पर विरोध किया गया। गैर-हिंदी भाषी इसे भाषाई भेदभाव के रूप में देखते थे।
- **नेहरू का आश्वासन:** प्रधानमंत्री नेहरू ने 1959 ई. में संसद को आश्वासन दिया कि इन आशंकाओं को दूर करने के लिए अंग्रेजी तब तक आधिकारिक भाषा बनी रहेगी जब तक आवश्यक हो।

- **राजभाषा अधिनियम:** राजभाषा अधिनियम, 1963, 1965 ई. के बाद आधिकारिक भाषा के रूप में अंग्रेजी के प्रयोग पर संवैधानिक प्रतिबंध हटाने के लिए पारित किया गया था।
- **1967 ई. का संशोधन:** 1967 ई. में इंदिरा गांधी की सरकार ने 1963 ई. के राजभाषा अधिनियम में संशोधन किया, जिसके परिणामस्वरूप द्विभाषिकता को आधिकारिक नीति के रूप में अनिश्चित काल के लिए अपना लिया गया।

आने वाले वर्षों में, शिक्षा नीति में प्रस्तावित त्रि-भाषा फार्मूले जैसी छिटपुट बहसों को छोड़कर, भाषा का मुद्दा आम तौर पर कम प्रासंगिक हो गया है। उल्लेखनीय है कि भारत में भाषा का मुद्दा भाषाई विविधता को संरक्षित करने, क्षेत्रीय पहचान का सम्मान करने और बहुलवादी समाज में राष्ट्रीय एकता बनाए रखने के महत्त्व को रेखांकित करता है।

भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन

स्वतंत्रता पश्चात भारत को अपनी प्रशासनिक सीमाओं को फिर से तय करने की चुनौती का सामना करना पड़ा, जिसे ब्रिटिश साम्राज्यवादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बेतरतीब ढंग से तैयार किया गया था। भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की माँग ने जोर पकड़ा।

भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन के लाभ

- **बेहतर शासन और प्रशासनिक दक्षता**: प्रशासनिक दक्षता में सुधार के लिए राज्यों को भाषाई आधार पर पुनर्गठित किया गया ताकि शासन और लोक प्रशासन को ऐसी भाषाओं में सक्षम बनाया जा सके जिन्हें लोग समझते हों और जिनके साथ वे सहज हों। इससे सरकार और नागरिकों के मध्य बेहतर संचार की सुविधा मिली, जिससे सेवाओं और शासन का अधिक प्रभावी वितरण सुनिश्चित हुआ।
- **संघवाद का सशक्तीकरण:** भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन ने शिक्षा, संस्कृति और भाषा नीति जैसे क्षेत्रों में राज्यों को अधिक स्वायत्तता और निर्णय लेने के अधिकार देकर भारत के संघीय ढाँचे को मजबूत किया। इसने केंद्र और राज्य सरकारों के मध्य शक्तियों के अधिक संतुलित वितरण में योगदान दिया।
- **लोकतांत्रिक शासन:** जनमानस की भाषा में प्रशासन और राजनीति का संचालन सच्चे लोकतंत्र को सुनिश्चित करता है।
- **सांस्कृतिक और भाषाई आत्मीयता:** भाषा लोगों की संस्कृति और रीति-रिवाजों से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई होती है। यह जन शिक्षा और साक्षरता को सुविधाजनक बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- **प्रांतीय भाषा विकास:** गांधी ने इस बात पर जोर दिया कि प्रांतीय भाषाएँ, भाषाई पुनर्गठन के साथ ही अपनी पूरी क्षमता तक पहुँच सकती हैं। इसने कांग्रेस पार्टी की राजनीतिक लामबंदी की रणनीति को प्रभावित किया, जिसके कारण 1920 ई. के नागपुर अधिवेशन के पश्चात उन्हें 1921 ई. में भाषाई आधार पर अपनी क्षेत्रीय शाखाओं को पुनर्गठित करना पड़ा।

भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन का प्रारंभिक प्रतिरोध

- **संभावित चुनौतियाँ:** इस संवेदनशील विभाजन ने भारत को गंभीर प्रशासनिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं का सामना करने पर मजबूर कर दिया था। नेताओं को डर था कि भाषाई पुनर्गठन इन समस्याओं को और बढ़ा सकता है। इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय प्रतिद्वंद्विता से भी राष्ट्रीय एकता को खतरा हो सकता है।
- **राष्ट्रीय एकता को बनाए रखना:** स्वतंत्रता के तुरंत बाद, राष्ट्रीय नेताओं ने राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने को प्राथमिकता दी।
- **सरकारी आयोग:** धर आयोग (1948) और जे.वी.पी. (जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और पट्टाभि सीतारमैया) समिति (1948) दोनों ने राष्ट्रीय एकता पर चिंता व्यक्त करते हुए भाषाई राज्यों के गठन के विपरीत सलाह दी थी।
- **राजनीतिक विरोध:** भाषाई पुनर्गठन से प्रभावित क्षेत्रों के राजनीतिक नेता और दल सामान्यतः प्रस्तावित परिवर्तनों का विरोध करते थे, क्योंकि उन्हें अपना प्रभाव या चुनावी लाभ खोने का डर था। यह प्रतिरोध उन क्षेत्रों में विशेष रूप से प्रबल था जहाँ भाषाई पहचान राजनीतिक सत्ता संरचनाओं से जुड़ी हुई थी।
- **आर्थिक विचार:** कुछ क्षेत्रों को भाषाई पुनर्गठन से आर्थिक नुकसान का डर था, जैसे संसाधनों या बाजारों तक पहुँच का नुकसान, व्यापार मार्गों में व्यवधान या प्रशासनिक प्राथमिकताओं में परिवर्तन जो विकास परियोजनाओं और निवेशों को प्रभावित कर सकते थे।
- जवाहरलाल नेहरू ने इस भावना को स्पष्ट करते हुए कहा था, "प्राथमिक चीजें पहले आनी चाहिए और प्राथमिक चीज है भारत की सुरक्षा और स्थिरता।"

धर आयोग, जिसे भाषाई प्रांत आयोग के नाम से भी जाना जाता है, की स्थापना भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन के संबंध में सिफारिशें देने के लिए की गई थी।

आयोग के अनुसार, पुनर्गठन भाषाई आधार पर नहीं बल्कि **प्रशासनिक सुविधा** के आधार पर होना चाहिए। आयोग ने राज्यों के पुनर्गठन के लिए भौगोलिक निकटता, प्रशासनिक व्यवहार्यता, वित्तीय आत्मनिर्भरता और विकास की संभावना जैसे कुछ मानदंडों को ध्यान में रखने की सिफारिश की।

जे.वी.पी. (जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और पट्टाभि सीतारमैया) समिति: इसमें जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और पट्टाभि सीतारमैया शामिल थे। उन्होंने भाषा के आधार पर पुनर्गठन का विरोध किया और एस. के. धर के विचारों का समर्थन किया। इसने सिफारिश की कि राज्य पुनर्गठन आर्थिक समृद्धि, सुरक्षा और राष्ट्र की एकता के आधार पर लागू होगा।

फजल अली आयोग: आयोग की मुख्य सिफारिशें थी कि रियासतों को समाप्त कर दिया जाए। साथ ही C और D समूह के राज्यों को मौजूदा राज्यों में मिला दिया जाए और राज्यों की A, B, C प्रणाली को समाप्त कर दिया जाए ।

भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन और बढ़ता संघर्ष

- **पोट्टि श्रीरामुलु का बलिदान:** 1948 ई. में स्वतंत्रता सेनानी पोट्टि श्रीरामुलु ने अलग आंध्र राज्य की माँग को लेकर **आमरण अनशन** किया था। उनकी मृत्यु के बाद पूरे आंध्र प्रदेश में हिंसक विरोध प्रदर्शन हुए।
- **सरकारी रियायत:** सरकार ने अंततः माँग को स्वीकार कर लिया और **अक्टूबर, 1953 में आंध्र प्रदेश की स्थापना हुई।**
- **राज्य पुनर्गठन आयोग (SRC):** सरकार ने 1953 ई. में **फजल अली, के.एम. पणिक्कर और हृदयनाथ कुंजरू को** इस आयोग का सदस्य बनाकर राज्य पुनर्गठन आयोग की नियुक्ति की।
- **राज्य पुनर्गठन आयोग (SRC) की सिफारिशें:** राज्य पुनर्गठन आयोग ने प्रशासनिक और आर्थिक कारकों पर विचार करते हुए भाषाई आधार पर सीमाओं के पुनः निर्धारण का समर्थन किया।
- **राज्य पुनर्गठन अधिनियम (1956):** संसद ने नवंबर, 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम पारित किया, जिससे 14 राज्यों और छह केंद्र प्रशासित प्रदेशों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ।

हालाँकि, भाषाई सिद्धांत को समान रूप से लागू नहीं किया गया, जैसा कि पंजाब और बॉम्बे में देखा गया। महाराष्ट्र और गुजरात को 1960 ई. में और पंजाब तथा हरियाणा को 1966 ई. में अलग कर दिया गया।

भाषाई पुनर्गठन को राष्ट्रीय एकीकरण की दिशा में एक सकारात्मक कदम माना जाता है, क्योंकि इसने संघीय ढाँचे को कमजोर नहीं किया या भाषाई भेदभाव को बढ़ावा नहीं दिया, बल्कि सजातीय राजनीतिक इकाइयों का निर्माण करके राष्ट्रीय एकता को मजबूत किया। हालाँकि, सीमा विवाद, भाषाई अल्पसंख्यक मुद्दे और संसाधन बंटवारे को लेकर आर्थिक विवाद सहित चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

भाषाई अल्पसंख्यकों से संबंधित मुद्दे और सुरक्षा उपाय

- **संवैधानिक सुरक्षा:** अल्पसंख्यकों की चिंताओं को दूर करने के लिए उन्हें मौलिक अधिकार प्रदान किए गए हैं, जैसे अनुच्छेद 30 और 347 जो शैक्षिक अधिकार और आधिकारिक भाषा स्वीकरण की गारंटी देते हैं।
- **भाषाई अल्पसंख्यक आयुक्त:** भाषाई अल्पसंख्यक आयुक्त का प्रमुख कार्य भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए सुरक्षा उपायों के कार्यान्वयन की जाँच करना और रिपोर्ट देना था।
- **भाषाई अल्पसंख्यकों की उपस्थिति:** भाषाई रूप से पुनर्गठित राज्यों में भाषाई अल्पसंख्यकों की पर्याप्त संख्या मौजूद थी।
- **प्रवर्तन संबंधी मुद्दे:** इन उपायों के बावजूद, संवैधानिक सुरक्षा उपायों को पर्याप्त रूप से लागू नहीं किया गया है, जिसके कारण शिक्षा, सार्वजनिक सेवाओं में रोजगार आदि में भाषाई अल्पसंख्यकों के विरुद्ध भेदभाव की खबरें सामने आई हैं।

इन मुद्दों पर चल रही चर्चा और नीतिगत विचार-विमर्श भारत के भाषाई परिदृश्य की उभरती जटिलताओं को उजागर करते हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

प्रवर्तन संबंधी मुद्दे, भाषाई अल्पसंख्यक, सरकारी रियायत, धर आयोग, जे.वी.पी. समिति, भारत की सुरक्षा और स्थिरता, राष्ट्रीय एकता, राजभाषा अधिनियम, भाषाई विविधता, राज्य पुनर्गठन अधिनियम आदि।

भारत में क्षेत्रवाद

क्षेत्रवाद का उदय तब होता है जब किसी विशेष क्षेत्र या राज्य के हितों को, राष्ट्र या किसी अन्य क्षेत्र/राज्य के विरोध में आगे बढ़ाया जाता है, जिससे प्रायः संघर्ष का उदय होता है। यह आर्थिक असमानताओं, सांस्कृतिक प्रभुत्व, निम्न कोटि के बुनियादी ढाँचे, निम्न सामाजिक विकास और राजनीतिक या प्रशासनिक विफलताओं जैसे विभिन्न कारकों से उत्पन्न हो सकता है।

क्षेत्रवाद के प्रेरक तत्त्व

- **आर्थिक असमानता:** स्वतंत्रता के समय विभिन्न क्षेत्रों में असमान आर्थिक विकास के कारण असंतोष और उपेक्षित होने की भावना उत्पन्न हुई, जिससे क्षेत्रवाद को और बढ़ावा मिला है।
- **ऐतिहासिक शिकायतें:** ऐतिहासिक अन्याय, वास्तविक या कथित, जैसे कि आर्थिक शोषण, राजनीतिक उपेक्षा या केंद्रीय अधिकारियों द्वारा सांस्कृतिक दमन, क्षेत्रवाद को बढ़ावा दे सकता है। ऐतिहासिक रूप से वंचित या उत्पीड़ित क्षेत्र अधिक स्वायत्तता या पहचान की माँग कर सकते हैं।
- **भौगोलिक कारक:** भौगोलिक पृथक्करण या विशिष्टता, जैसे- पहाड़ी क्षेत्र या द्वीपीय भौगोलिक संरचनाएँ, निवासियों के मध्य क्षेत्रीय पहचान और एकजुटता की भावना को बढ़ा सकती हैं।
- **सांस्कृतिक प्रभुत्व:** समरूप भाषाई राज्य में अल्पसंख्यक भाषाई समूहों को अक्सर उपेक्षित कर दिया जाता है, जिससे असंतोष पैदा होता है और क्षेत्रवादी भावनाओं को बढ़ावा मिलता है।
- **भूमिपुत्र सिद्धांत:** इस सिद्धांत के अनुसार किसी राज्य के संसाधन विशेष रूप से उसके स्थानीय निवासियों के संसाधन होते हैं, जो संभावित रूप से क्षेत्रवादी भावनाओं को बढ़ावा देता हैं ।
- **अवसंरचना और सामाजिक विकास का अभाव:** अपर्याप्त अवसंरचना जैसे स्कूल और अस्पताल, कम साक्षरता दर, तथा उच्च रोग और उच्च मृत्यु दर भी क्षेत्रीय असंतोष को बढ़ावा दे सकती हैं।
- **राजनीतिक और प्रशासनिक विफलताएँ:** अलग राज्य की माँग के लिए होने वाले उप-क्षेत्रीय आंदोलनों को राजनीतिक और प्रशासनिक विफलताएँ बढ़ा सकती हैं। इन विफलताओं के परिणामस्वरूप झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड और तेलंगाना जैसे राज्यों का गठन हुआ।

भारत में क्षेत्रवाद के मामले

- **द्रविड़-नाडु की माँग:** 1925 ई. में तमिलनाडु में द्रविड़ आंदोलन से उत्पन्न, मद्रास, आंध्र, केरल और मैसूर को शामिल करते हुए एक स्वतंत्र द्रविड़ नाडु राज्य की माँग ने राष्ट्रीय एकता के लिए चुनौतियाँ पेश की।

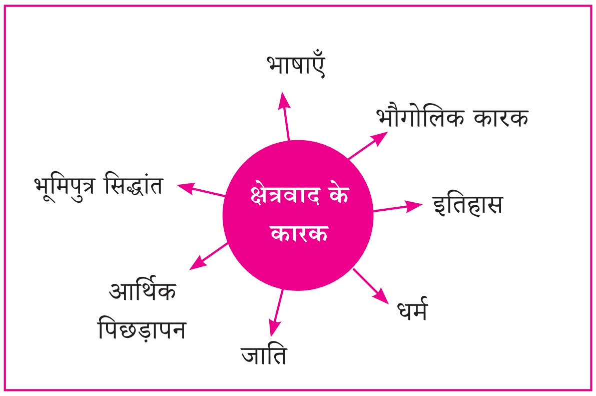

- **तेलंगाना आंदोलन:** 1956 ई. के जेंटलमैन एग्रीमेंट के कार्यान्वयन पर असंतोष की परिणति पृथक तेलंगाना राज्य के लिए आंदोलन के रूप में हुई।
- **कन्नड़ लोगों के विरुद्ध शिवसेना का आंदोलन:** 1966 ई. में, शिवसेना ने मराठी गौरव की रक्षा के लिए महाराष्ट्र में कन्नड़ लोगों के विरुद्ध आंदोलन शुरू किया।
- **खालिस्तान आंदोलन:** 1980 के दशक में इस अलगाववादी आंदोलन का उद्देश्य भारत और पाकिस्तान के पंजाब क्षेत्र में खालिस्तान नामक एक पृथक सिख साम्राज्य की स्थापना करना था।
- **असम में बोडोलैंड की माँग:** असम बोडो छात्र संघ के नेतृत्व में असम में बोडो आंदोलन ने बोडो लोगों के लिए एक अलग राज्य की माँग की है।
- **मनसे (महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना) द्वारा उत्तर भारतीयों को निशाना बनाना:** वर्ष 2008 में, महाराष्ट्र नवनिर्माण सेना (मनसे) ने महाराष्ट्र में निवास करने वाले उत्तर भारतीयों के खिलाफ हिंसक आंदोलन शुरू किया।

- **अंतरराज्यीय विवाद:** अनियंत्रित क्षेत्रवादी गतिविधियों के परिणामस्वरूप, बेलगाम पर कर्नाटक और महाराष्ट्र के मध्य सीमा विवाद, नर्मदा, कृष्णा और कावेरी नदियों पर अंतर्राज्यीय जल विवाद तथा पंजाब और दिल्ली के मध्य विद्युत बंटवारे को लेकर विवाद देखे गए हैं।

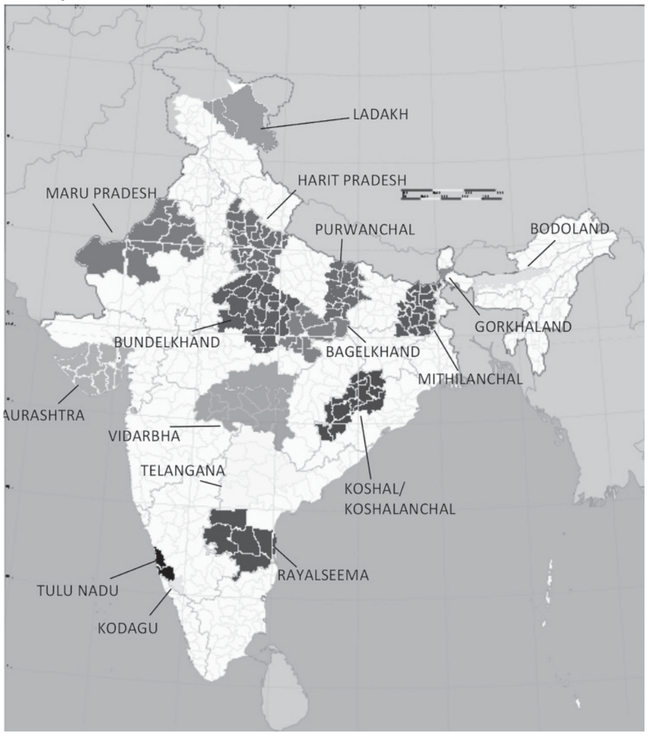

चित्र: भारत के आकांक्षी राज्य

भारत में क्षेत्रवाद एक बड़ी चुनौती है, लेकिन यह क्षेत्रीय असमानताओं और मूलभूत आवश्यकताओं को हल करने का काम भी कर सकता है। क्षेत्रीय आकांक्षाओं को पहचानना और उनका प्रबंधन करना, राष्ट्रीय एकता बनाए रखने और समावेशी विकास को बढ़ावा देने की कुंजी हैं।

क्षेत्रवाद के प्रभाव

क्षेत्रवाद, एक विशेष क्षेत्र या क्षेत्र समूह के हितों पर केंद्रित ऐसी राजनीतिक विचारधारा है जो किसी राष्ट्र पर रचनात्मक और विनाशकारी दोनों तरह के प्रभाव डाल सकती है।

क्षेत्रवाद के सकारात्मक प्रभाव

- **लोकतंत्रीकरण को बढ़ावा देना:**
  - क्षेत्रीय पहचान की पुष्टि, लोकतंत्र को लोगों के करीब लाने में मदद करती है।
  - क्षेत्रवाद, स्थानीय समुदायों को उनके जीवन को सीधे प्रभावित करने वाली निर्णयन प्रक्रियाओं में अधिक स्वायत्तता देकर उन्हें सशक्त बना सकता है। इससे स्थानीय स्तर पर अधिक उत्तरदायी और जवाबदेह शासन की स्थापना की जा सकती है।
- **उदाहरण के लिए, 1985 ई. में त्रिपुरा जनजातीय स्वायत्त जिला परिषद का गठन** राज्य में जनजातीय पहचान को संरक्षित करने के साथ-साथ उनके राजनीतिक प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने में सहायक रहा है।
- **संतुलित क्षेत्रीय विकास:**
  - कई क्षेत्रीय आंदोलन, कथित विकास असमानताओं की प्रतिक्रिया के रूप में उभरे हैं।
  - ये आंदोलन संसाधनों के अधिक न्यायसंगत वितरण की माँग करते हैं, जिससे संतुलित क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा मिल सके और क्षेत्रीय असंतोष की समस्या का समाधान किया जा सके।
- **राष्ट्र निर्माण में भूमिका:**
  - राज्य के रूप में या स्वायत्तता के संदर्भ में क्षेत्रीय पहचान की मान्यता स्थानीय लोगों को आत्मनिर्णय की भावना प्रदान करती है।
  - यह विविधता मूलक देश में एकता को बढ़ावा देने, स्थानीय मतभेदों का सम्मान करते हुए राष्ट्रीय पहचान को सुदृढ़ करने का एक शक्तिशाली साधन हो सकता है।

क्षेत्रवाद के नकारात्मक प्रभाव

- **विखंडन और विभाजन:** क्षेत्रवाद भाषाई, जातीय या सांस्कृतिक आधार पर देश के विखंडन का कारण बन सकता है, जिससे विभाजन की स्थिति के पैदा होने तथा अलगाववादी आंदोलनों को बढ़ावा मिलने की संभावना है। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के लगभग 7,500 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में, 1909 ई. से चली आ रही गोरखा समुदाय द्वारा गोरखालैंड नामक एक अलग राज्य की माँग के कारण राजनीतिक तनाव और समय-समय पर हिंसात्मक गतिविधियाँ भी देखी गई हैं।
- **आर्थिक असमानताएँ:** क्षेत्रवाद, क्षेत्रों के मध्य आर्थिक असमानताओं को बढ़ा सकता है, क्योंकि संसाधन, निवेश और विकास परियोजनाएँ आर्थिक रूप से प्रभावशाली क्षेत्रों में केंद्रित होती हैं, जिससे कम विकसित क्षेत्रों को नुकसान पहुँचता है। उदाहरण के लिए, अधिक समृद्ध पश्चिमी और दक्षिणी क्षेत्रों की तुलना में बिहार तथा ओडिशा जैसे भारत के पूर्वी क्षेत्रों का अविकसित होना ऐतिहासिक उपेक्षा और क्षेत्रीय असमानताओं के कारण है।
- **अंतर-क्षेत्रीय संघर्ष:** क्षेत्रवाद संसाधनों, भू-भाग और राजनीतिक सत्ता को लेकर अंतर-क्षेत्रीय संघर्ष और प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा दे सकता है। उदाहरण के लिए, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल जैसे राज्यों के मध्य नदी जल के बंटवारे को लेकर जल विवाद के कारण लंबी कानूनी लड़ाइयाँ, विरोध प्रदर्शन और कभी-कभी हिंसात्मक झड़पें भी हुई है।
- **राजनीतिक अस्थिरता:** क्षेत्रवादी आंदोलन और अधिक स्वायत्तता या स्वतंत्रता की माँग, राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक स्थिरता और शासन को कमजोर कर सकती है। उदाहरण के लिए, असम, नागालैंड और जम्मू-कश्मीर जैसे राज्यों में अलगाववादी आंदोलनों ने लंबे समय तक राजनीतिक अशांति, उग्रवाद और हिंसा को जन्म दिया है, जिससे केंद्र सरकार की सत्ता को चुनौती मिली है।
- **जातीय और सांप्रदायिक तनाव:** भाषाई या जातीय पहचान पर आधारित क्षेत्रवाद, सांप्रदायिक तनाव और संघर्ष को बढ़ा सकता है जिससे विभिन्न समुदायों के मध्य ध्रुवीकरण और हिंसा हो सकती है। उदाहरण के लिए, आंध्र प्रदेश में तेलंगाना के एक अलग राज्य की माँग के कारण आंदोलन के समर्थकों और विरोधियों के मध्य विरोध और झड़पें हुईं, जो सामान्यतः जातीय आधार पर होती थीं।
- **प्रशासनिक जटिलता:** भाषाई या सांस्कृतिक मानदंडों के आधार पर किसी देश को कई प्रशासनिक क्षेत्रों में विभाजित करने से प्रशासनिक जटिलता, प्रयासों का दोहराव और शासन में अक्षमता उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए, भारत में भाषाई पुनर्गठन के माध्यम से छोटे राज्यों के निर्माण से कभी-कभी प्रशासनिक चुनौतियाँ और नौकरशाही में बाधाएँ उत्पन्न हुई हैं।

- **राष्ट्रीय पहचान का क्षरण:** क्षेत्रीय पहचान और आकांक्षाओं पर अत्यधिक ध्यान ,राष्ट्रीय पहचान और एकता की भावना को नष्ट कर सकता है, राष्ट्र-राज्य के प्रति निष्ठा को कमजोर कर सकता है और अलगाववादी भावनाओं को बढ़ा सकता है। उदाहरण के लिए, अलग राज्य या स्वायत्तता की वकालत करने वाले आंदोलन अक्सर राष्ट्रीय एकता के बजाय क्षेत्रीय हितों को प्राथमिकता देते हैं, जिससे अलगाव और विघटन की भावना पैदा होती है।
- **आर्थिक संरक्षणवाद और बाल्कनाइजेशन:** क्षेत्रवाद, 'आर्थिक संरक्षणवाद' और 'बाजारों के बाल्कनाइजेशन (विखंडन)' को जन्म दे सकता है, जिससे देश में अंतरराज्यीय मुक्त व्यापार और आर्थिक एकीकरण में बाधा उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए, क्षेत्रीय सरकारों द्वारा अंतरराज्यीय व्यापार बाधाओं और शुल्कों को लागू करने से वस्तुओं और सेवाओं के प्रवाह में बाधा उत्पन्न हो सकती है, जिससे आर्थिक वृद्धि और विकास बाधित हो सकता है
- **अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में बाधाएँ:** क्षेत्रीय हित राष्ट्रीय स्तर की अंतरराष्ट्रीय कूटनीति को जटिल बना सकते हैं, जैसे- पश्चिम बंगाल ने बांग्लादेश के साथ तीस्ता जल बंटवारे के समझौते को अवरुद्ध कर दिया था।

प्रमुख शब्दावलियाँ

क्षेत्रवाद, अंतरराष्ट्रीय कूटनीति, वोट बैंक की राजनीति, राष्ट्र निर्माण, अंतरराज्यीय विवाद, खालिस्तान आंदोलन, बोडोलैंड की माँग, ग्रेटर नागालैंड आंदोलन आदि।

1980 के दशक का पंजाब संकट

अलगाववादी आंदोलन की उत्पत्ति

- **सिख राष्ट्रवाद और सांप्रदायिकता का उदय: सिंह सभा और अकाली आंदोलनों ने,** विशेष रूप से खालसा स्कूलों के माध्यम से सिख राष्ट्रवाद के प्रचार-प्रसार में योगदान दिया। अकालियों ने इस बात पर जोर दिया कि सिख धर्म में राजनीति और धर्म अविभाज्य हैं, जिसके कारण सांप्रदायिक तनाव बढ़ गया।
- **भेदभाव के आरोप:** अकालियों ने सिखों के विरुद्ध व्यापक भेदभाव का आरोप लगाया।
- **विभाजन का प्रभाव:** विभाजन के कारण पंजाब के लोगों को काफी कष्ट और विस्थापन का सामना करना पड़ा, जिससे उनमें आक्रोश और अलगाव की भावना बढ़ गई।
- **आनंदपुर साहिब प्रस्ताव:** इस प्रस्ताव में पंजाब के लिए अधिक स्वायत्तता की माँग की गई, जिसमें अपना स्वयं का संविधान बनाने का अधिकार भी शामिल था, जिससे अलगाववादी चर्चा तेज हो गई।
- **खालिस्तान आंदोलन: जरनैल सिंह भिंडरावाले** जैसे लोगों के नेतृत्व में, इस आंदोलन ने खालसा या सिख धर्म के अधिक रूढ़िवादी रूप की वापसी की वकालत की, जिससे एक स्वतंत्र सिख राज्य की माँग बढ़ गई।
- **बाहरी तत्त्वों की भूमिका:** पाकिस्तान ने आतंकवादियों को प्रशिक्षण, हथियार, वैचारिक प्रशिक्षण और सुरक्षित आश्रय प्रदान करके अलगाववादी आंदोलन को भड़काने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

पंजाब में आतंकवाद

- **हिंसा की शुरुआत:** अप्रैल, 1980 में निरंकारी संप्रदाय के प्रमुख की हत्या के साथ हिंसा बढ़ गई।
- **लक्षित हिंसा का विस्तार:** सितम्बर, 1983 से आतंकवादियों ने अपने हमलों का विस्तार करते हुए हिंदू नागरिकों को भी निशाना बनाना शुरू कर दिया।
- **आर्थिक लूटपाट:** आतंकवादी गतिविधियों में बैंकों, आभूषण की दुकानों और शस्त्रागारों की व्यापक लूट-पाट भी शामिल थी।
- **भिंडरावाले का अकाल तख्त पर कब्जा: दिसंबर, 1983 में भिंडरावाले ने** राज्य की कार्रवाई से बचने की उम्मीद में **स्वर्ण मंदिर** स्थित अकाल तख्त में शरण ली।
- **आतंकवादियों का उद्देश्य:** आतंकवादियों का अंतिम उद्देश्य पंजाब पर शासन करने में भारतीय राज्य की अक्षमता को प्रदर्शित करना था, जिससे कि वे अलग राज्य की अपनी माँग को उचित ठहरा सकें।

संकट पर सरकार की प्रतिक्रिया

- **प्रारंभिक निष्क्रियता:** भारत सरकार ने प्रारंभ में इस संकट पर अनिर्णय या निष्क्रियता की नीति अपनाई। साथ ही अगले तीन वर्षों तक आतंकवादियों के विरुद्ध निर्णायक कार्रवाई करने से इनकार कर दिया।
- **पुलिस बलों के मनोबल में गिरावट:** DIG ए.एस. अटवाल की हत्या के बाद कार्रवाई न करने से पंजाब में पुलिस बलों में भ्रम की स्थिति पैदा हो गई और उनका मनोबल गिर गया।
- **ऑपरेशन ब्लू स्टार:** जून, 1984 में बढ़ते संकट ने सरकार को स्वर्ण मंदिर से आतंकवादियों को बाहर निकालने के लिए एक सैन्य अभियान शुरू करने के लिए प्रेरित किया, जिसका कोड नाम ऑपरेशन ब्लू स्टार था।
- **ऑपरेशन के परिणाम:** यद्यपि इस ऑपरेशन में भिंडरावाले सहित कई आतंकवादियों को सफलतापूर्वक मार गिराया गया, लेकिन इसके परिणामस्वरूप काफी क्षति भी हुई, जिसमें नागरिक हताहत हुए तथा अकाल तख्त और हरमंदिर साहिब को भारी क्षति पहुँची।

संकट के बाद

- **इंदिरा गांधी की हत्या:** ऑपरेशन ब्लू स्टार के बाद, इंदिरा गांधी की उनके सिख अंगरक्षकों द्वारा हत्या कर दी गई, जिससे देशव्यापी संकट पैदा हो गया।
- **सिख विरोधी दंगे:** इंदिरा गांधी की हत्या के बाद, विशेष रूप से दिल्ली और उत्तरी भारत में हिंसक सिख विरोधी दंगे हुए, जिनमें बड़ी संख्या में लोगों को अपनी जान गवानी पड़ी।
- **राजीव गांधी और पंजाब समझौता:** इंदिरा गांधी के उत्तराधिकारी राजीव गांधी ने जेल में बंद कई नेताओं को रिहा किया और पंजाब संकट को हल करने के प्रयास में एच.एस. लोंगोवाल के साथ पंजाब समझौते पर हस्ताक्षर किए।

पंजाब समझौता या राजीव-लोंगोवाल समझौता (1985)

पंजाब समझौता, जिसे राजीव-लोंगोवाल समझौते के नाम से भी जाना जाता है, जुलाई 1985 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी और अकाली दल के नेता हरचंद सिंह लोंगोवाल के बीच हस्ताक्षरित हुआ था। इसका उद्देश्य उग्रवाद से ग्रस्त पंजाब में शांति और स्थिरता को बढ़ावा देना था। समझौते के मुख्य प्रावधान इस प्रकार थे:

- **चंडीगढ़ का पंजाब को हस्तांतरण:** इस समझौते में केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ को पंजाब को हस्तांतरित किया गया। बदले में पंजाब के कुछ क्षेत्र हरियाणा को दिए जाने का प्रस्ताव किया गया।

- **नदी जल का बँटवारा: इस समझौते में पंजाब और उसके** पड़ोसी राज्यों के बीच नदी जल बँटवारा के विवादास्पद मुद्दे को संबोधित किया गया। इसमें रावी और व्यास नदियों के जल को साझा करने के लिए सतलुज-यमुना लिंक (SYL) नहर के निर्माण की परिकल्पना की गई थी।
- **अलगाववादी हिंसा की समाप्ति:** ये पंजाब के राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक मुद्दों के समाधान के लिए उठाए गए व्यापक कदमों का हिस्सा थे, जिसका उद्देश्य अलगाववादी हिंसा को समाप्त करना और राज्य में सामान्य स्थिति बहाल करना था।

- **चुनाव और उग्रवाद को नियंत्रित करने में विफलता:** अकाली दल सितंबर, 1985 के चुनावों में विजयी हुआ। हालाँकि, वे उग्रवाद को नियंत्रित करने में विफल रहे, जिसके परिणामस्वरूप मई, 1987 में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया।
- **सामान्य स्थिति की ओर वापसी:** 1992 ई. में प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंह राव और पंजाब में कांग्रेस सरकार के कार्यकाल तक उग्रवाद को नियंत्रित करने के लिए कठोर कदम उठाए गए, जिसके परिणामस्वरूप 1993 ई. तक पंजाब आतंकवाद से लगभग मुक्त हो गया था।

1980 के दशक का पंजाब संकट स्वतंत्रता के बाद के भारतीय इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। इसकी जड़ें, संकट की प्रकृति, सरकार की प्रतिक्रिया और परिणाम, भारत जैसे विविधतापूर्ण राष्ट्र-राज्य में एकता बनाए रखने की चुनौतियों के बारे में महत्त्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

उग्रवाद, ऑपरेशन ब्लू स्टार, आनंदपुर साहिब संकल्प, खालिस्तान आंदोलन, राष्ट्रवाद और सांप्रदायिकता, वैचारिक शिक्षा, राजीव-लोंगोवाल समझौता आदि।

कश्मीर मुद्दा

1. कश्मीर मुद्दे की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- **जम्मू और कश्मीर का भारत में विलय:** अक्टूबर, 1947 में महाराजा हरि सिंह द्वारा विलय पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद जम्मू और कश्मीर रियासत भारत में शामिल हो गई।
- **पाकिस्तान द्वारा कश्मीर पर कब्जा:** इसके साथ ही, क्षेत्र के एक हिस्से पर पाकिस्तान ने कब्जा कर लिया, जिसके परिणामस्वरूप कश्मीर दो भागों में विभाजित हो गया; एक पर भारत का नियंत्रण था और दूसरे पर पाकिस्तान का।
- **शरणार्थियों को अधिकारों से वंचित करना:** 1947 ई. में विभाजन के परिणामस्वरूप जम्मू-कश्मीर से भागकर आए पश्चिमी पाकिस्तानी शरणार्थियों को इस क्षेत्र में बुनियादी अधिकारों और पहचान से वंचित कर दिया गया।
- **अनुच्छेद 370 और 35A की भूमिका:** अनुच्छेद 370 ने जम्मू-कश्मीर को उसके स्वयं के संविधान और ध्वज के साथ एक विशेष दर्जा दिया, जबकि अनुच्छेद 35A यह निर्धारित करता था कि राज्य का स्थायी निवासी कौन हो सकता है।

2. जम्मू और कश्मीर में बढ़ता तनाव

- **भारत विरोधी प्रदर्शन और उग्रवाद:** 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में इस क्षेत्र में भारत विरोधी प्रदर्शन और उग्रवाद में वृद्धि देखी गई, जो 1989 ई. में अपने चरम पर पहुँच गई।
- **कश्मीरी पंडितों का पलायन:** बढ़ती हिंसा, विशेष रूप से हिंदू समुदाय के खिलाफ लक्षित हमलों के कारण, घाटी से कश्मीरी पंडितों का पलायन हुआ, जिससे एक महत्त्वपूर्ण आबादी विस्थापित हो गई।

3. जम्मू और कश्मीर का विशेष दर्जा समाप्त करना और पुनर्गठन करना

- **अनुच्छेद 370 और 35A का निरसन:** 5 अगस्त, 2019 को भारत के राष्ट्रपति ने जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्जा रद्द कर दिया, जिससे अनुच्छेद 370 और अनुच्छेद 35A प्रभावी रूप से निष्प्रभावी हो गए।
- **जम्मू और कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019:** संसद द्वारा जम्मू और कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 पारित किया गया, जिसने जम्मू और कश्मीर को दो केंद्र शासित प्रदेशों: जम्मू और कश्मीर तथा लद्दाख में विभाजित कर दिया गया।

4. निरसन के निहितार्थ

- **संवैधानिक परिवर्तन:** जम्मू-कश्मीर का वर्तमान में, कोई अलग संविधान, ध्वज और गान नहीं है, और भारतीय संसद द्वारा पारित कानून अब इस क्षेत्र पर लागू होते हैं, जिनमें सूचना का अधिकार अधिनियम और भारतीय दंड संहिता भी शामिल हैं।
- **राजनीतिक परिवर्तन:** जम्मू-कश्मीर और लद्दाख में अब उपराज्यपाल (लेफ्टिनेंट गवर्नर) हैं तथा जम्मू-कश्मीर के लिए विधानसभा का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित किया गया है।
- **सामाजिक-आर्थिक प्रभाव:** ऐसा माना जाता है कि विशेष दर्जा समाप्त होने से जम्मू-कश्मीर और लद्दाख का समावेशी विकास होगा, उग्रवाद में कमी आएगी और निवेश के अवसर बढ़ने से आर्थिक विकास होगा।

अनुच्छेद 370 के निरस्तीकरण के बाद श्रीनगर में आयोजित होने वाले जी-20 शिखर सम्मेलन के महत्त्वपूर्ण निहितार्थ हैं, जो जम्मू-कश्मीर में सकारात्मक बदलावों और प्रगति को प्रदर्शित करते हैं। जी-20 शिखर सम्मेलन से संबंधित महत्त्वपूर्ण बिंदु नीचे सूचीबद्ध हैं:

- **प्रगति का प्रतीक:** श्रीनगर में जी-20 शिखर सम्मेलन का आयोजन जम्मू-कश्मीर में हुए सकारात्मक परिवर्तन और स्थिरता का प्रतीक है।
- **भारतीय संप्रभुता का स्वीकरण:** जी-20 शिखर सम्मेलन में 20 देशों के प्रतिनिधियों की भागीदारी जम्मू-कश्मीर पर भारत की संप्रभुता का समर्थन करती है।
- **वैश्विक निवेश को बढ़ावा देना:** यह शिखर सम्मेलन औद्योगिकीकरण और अवसंरचना विकास के लिए वैश्विक निवेश को आकर्षित करता है, जिससे क्षेत्र में आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है।
- **सांस्कृतिक प्रदर्शन:** जम्मू और कश्मीर अपनी समृद्ध विरासत, संस्कृति और पर्यटन क्षमता को दुनिया के सामने प्रदर्शित कर सकता है, जिससे अधिक पर्यटक आकर्षित होंगे।
- **धारणा और गौरव:** यह आयोजन लोगों में गौरव और आत्मविश्वास की भावना पैदा करता है, जो वैश्विक मंचों पर योगदान देने की उनकी क्षमता को दर्शाता है।

5. **आलोचनाएँ और चुनौतियाँ**

- **संवैधानिक विवाद:** जिस तरीके से अनुच्छेद 370 को निरस्त किया गया, उससे इसकी संवैधानिकता पर अनेक सवाल उठाए जाने लगे।
- **संघीय सिद्धांतों का उल्लंघन:** किसी राज्य को केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा देने को भारत के संघीय ढाँचे पर आघात के रूप में देखा गया।
- **न्यायिक व्याख्या:** भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने पहले भी जम्मू-कश्मीर के विशेष दर्जे को बरकरार रखा था, जिसके कारण इसे रद्द करने को लेकर विवाद उत्पन्न हो गया था।
- **अंतरराष्ट्रीय निहितार्थ:** जम्मू-कश्मीर के विशेष दर्जे को रद्द करने के अंतरराष्ट्रीय निहितार्थ थे तथा भारत और पाकिस्तान के बीच तनाव बढ़ने की आशंका जताई गई थी।

कश्मीर मुद्दा दक्षिण एशिया के सबसे जटिल और विवादास्पद मुद्दों में से एक है, जिसका प्रभाव क्षेत्रीय स्थिरता, मानवाधिकारों और भारत के संघीय ढाँचे पर पड़ रहा है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

न्यायिक व्याख्या, संघीय सिद्धांत, सांस्कृतिक प्रदर्शन, जम्मू और कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019, कश्मीरी पंडितों का पलायन, विलय पत्र आदि।

उत्तर-पूर्वी राज्य

- **औपनिवेशिक इतिहास:**
  - उत्तर-पूर्व (NE) क्षेत्र ब्रिटिश शासन के दौरान शुरू में बंगाल प्रांत का हिस्सा था।
  - 1874 ई. में असम को एक अलग प्रांत के रूप में मान्यता दी गई।
  - **1873 ई. के बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन ने** अल्पसंख्यक स्वदेशी समूहों की रक्षा के उद्देश्य से एक लाइन सिस्टम की शुरुआत की। इस प्रणाली ने स्वतंत्रता के बाद राष्ट्रीय एकीकरण के लिए समस्याएँ पैदा की।

बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन और इनर लाइन परमिट (ILP)

1873 ई. के बंगाल ईस्टर्न फ्रंटियर रेगुलेशन ने इनर लाइन परमिट (ILP) के नाम से जानी जाने वाली एक लाइन प्रणाली शुरू की, जिसके तहत गैर-आदिवासी व्यक्तियों को पूर्वोत्तर क्षेत्र के कुछ क्षेत्रों में प्रवेश करने के लिए परमिट प्राप्त करना आवश्यक बना दिया गया। इस प्रणाली का उद्देश्य स्वदेशी समुदायों के अधिकारों और हितों की रक्षा करना था, लेकिन स्वतंत्रता के बाद इसने प्रशासनिक और एकीकरण संबंधी चुनौतियाँ पैदा कर दी।

स्वतंत्रता के पश्चात्: स्वतंत्रता के समय, पूर्वोत्तर क्षेत्र में असम के मैदानी-पहाड़ी जिले, पूर्वोत्तर सीमांत क्षेत्र और मणिपुर एवं त्रिपुरा की रियासतें शामिल थी। सिक्किम, जो शुरू में एक भारतीय संरक्षित राज्य था, 1975 ई. में संविधान के 35 वें संशोधन अधिनियम के माध्यम से एक पूर्ण भारतीय राज्य बन गया।

- इस विधेयक द्वारा सिक्किम का संरक्षित राज्य का दर्जा समाप्त कर, उसे भारतीय संघ के एक सहयोगी राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।
- यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि सिक्किम का भारत में एकीकरण एक **संवैधानिक संशोधन** और सिक्किम के चोग्याल (राजा) और भारत सरकार के बीच एक समझौते के माध्यम से हुआ था।

सिक्किम का भारत में विलय

- स्वतंत्रता के समय सिक्किम भारत का 'संरक्षित राज्य' था। इसका अर्थ यह था कि यह भारत का हिस्सा नहीं था, लेकिन यह पूरी तरह से संप्रभु देश भी नहीं था।
- सिक्किम की रक्षा और विदेशी संबंधों की देखभाल भारत द्वारा की जाती थी, जबकि आंतरिक प्रशासन की शक्ति **सिक्किम के सम्राट चोग्याल के पास थी** ।
- यह व्यवस्था मुश्किल में पड़ गई क्योंकि राजा चोग्याल, लोगों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं से निपटने में असमर्थ थे।
- **सिक्किम सभा का पहला लोकतांत्रिक चुनाव 1974 ई. में हुआ।** इन चुनावों में सिक्किम कांग्रेस ने भारी जीत हासिल की, जो भारत के साथ अधिक एकीकरण के पक्ष में थी।
- सभा ने पहले 'सहयोगी राज्य' का दर्जा माँगा और फिर अप्रैल, 1975 में भारत के साथ पूर्ण एकीकरण का प्रस्ताव पारित किया गया।
- इसके बाद जनमत संग्रह कराया गया, जिसमें विधानसभा के अनुरोध पर लोक अनुमोदन की मुहर लगी।
- भारतीय संसद ने इस अनुरोध को तुरंत स्वीकार कर लिया और **सिक्किम भारतीय संघ का 22वाँ राज्य** बन गया। विलय को लोगों का समर्थन मिला और यह सिक्किम की राजनीति में कभी भी विभाजनकारी मुद्दा नहीं बन पाया।

- **नवीन राज्यों का गठन:** स्वतंत्रता के बाद, इस क्षेत्र में अलग राज्यों की माँग बढ़ गई। 1963 ई. में, भारत सरकार ने भारत-चीन युद्ध और बढ़ते विद्रोह के कारण अलग नागालैंड राज्य का गठन किया। नागालैंड के गठन के बाद मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, अरुणाचल प्रदेश और मिजोरम जैसे अन्य राज्यों का गठन किया गया।

मिजोरम के राज्य गठन की यात्रा (1987)

पूर्वोत्तर में स्वायत्तता प्राप्त मिजो जिले को कुछ साल बाद नागालैंड जैसी स्थिति का सामना करना पड़ा। 1947 ई. में कुछ ब्रिटिश अधिकारियों ने वहाँ अलगाववादी माँगों का समर्थन किया, लेकिन युवा मिजो नेताओं ने उनका ज्यादा समर्थन नहीं किया और इसके बजाय मिजो समाज को अधिक लोकतांत्रिक बनाने, उनका विकास करने, अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और असम विधानसभा में अधिक मिजो लोगों को शामिल करने पर जोर दिया गया।

- **1960 के दशक में विकास:** लेकिन मिजो लोग 1959 ई. के अकाल के दौरान असम सरकार के उपायों और 1961 ई. में असमिया को राज्य की भाषा बनाने वाले कानून से खुश नहीं थे। लालदेंगा के नेतृत्व में मिजो नेशनल फ्रंट (MNF) का गठन किया गया। MNF ने चुनावों में हिस्सा लिया लेकिन एक सैन्य शाखा भी बनाई जिसे पूर्वी पाकिस्तान और चीन से हथियार और प्रशिक्षण मिला। 1964 ई. में, यूनाइटेड नेशनल लिबरेशन फ्रंट (UNLF) का गठन किया गया जो मणिपुर के दुर्जेय उग्रवादी संगठनों में से एक है।
- **सरकार का रुख:** मार्च, 1966 में MNF ने भारत से अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की, एक सैन्य विद्रोह शुरू किया और सेना एवं लोगों पर हमला किया। भारत सरकार ने तत्काल सक्रिय रुख अपनाते हुए, बड़े पैमाने पर जवाबी कार्रवाई की। विद्रोह का दमन कर दिया गया और सरकार ने कुछ ही हफ्तों में नियंत्रण वापस ले लिया, लेकिन कुछ विद्रोही हमले अभी भी जारी रहे। अधिकांश मिजो नेता पूर्वी पाकिस्तान भाग गए।

- **केंद्र शासित प्रदेश का निर्माण:** 1972 ई. में मिजो नेताओं ने, जो कम उग्र थे, अपनी माँग को भारत के भीतर एक अलग मिजोरम राज्य तक सीमित कर दिया, इसलिए असम का मिजो जिला असम से अलग कर दिया गया और मिजोरम, एक केंद्र शासित प्रदेश बना दिया गया।
- **उग्रवादी समूह:** मिजोरम के निर्माण के बाद, पीपुल्स रिवोल्यूशनरी पार्टी ऑफ कंगलीपाक (PREPAK), कंगलीपाक कम्युनिस्ट पार्टी (KCP) और कंगली यावोल कन्ना लूप (KYKL) जैसे कई उग्रवादी संगठन बनाए गए, जिन्होंने मणिपुर के स्वतंत्र राज्य की माँग की। नागा आंदोलन मणिपुर के पहाड़ी जिलों में फैल गया, जिसमें NSCN-IM ने अधिकांश पर नियंत्रण कर लिया, जबकि "नागालिम" (ग्रेटर नागालैंड) के लिए दबाव डाला, जिसे घाटी में मणिपुर की "क्षेत्रीय अखंडता" के लिए "खतरा" माना जाता है।
- **1970 के दशक के अंत के घटनाक्रम:** 1970 के दशक के अंत में मिजो विद्रोही फिर से मजबूत हो गए लेकिन भारतीय सेना ने उन्हें प्रभावी ढंग से रोक दिया। भारत सरकार ने, आदिवासी लोगों के लिए नेहरू की नीति का पालन करते हुए, दयालु रूख अपनाया, बचे हुए विद्रोहियों को उदार माफी देने और शांति वार्ता करने के लिए तैयार थी। वे 1986 ई. में एक समझौते पर पहुँचे।
- **राज्य का निर्माण:** लालदेंगा और MNF ने अपनी हिंसक भूमिगत गतिविधियों को बंद कर दिया, स्वयं को और अपने हथियारों को भारतीय अधिकारियों को सौंप दिया और कानूनी राजनीतिक व्यवस्था में शामिल हो गए। भारत सरकार ने मिजोरम को उनकी संस्कृति, परंपरा, भूमि कानून आदि के लिए पूरी स्वतंत्रता के साथ पूर्ण राज्य का दर्जा दिया। इस समझौते के तहत फरवरी, 1987 में मिजोरम के नए राज्य में लालदेंगा को मुख्यमंत्री के रूप में चुना गया और सरकार बनाई गई।

अरुणाचल प्रदेश

स्वतंत्रता के समय मूल रूप से असम का हिस्सा रहे अरुणाचल प्रदेश ने चीन से अपनी निकटता और अस्थिर सीमा के कारण सामरिक महत्त्व प्राप्त किया। 1972 ई. में इसे केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा दिया गया। अंत में, 1986 ई. के अरुणाचल प्रदेश अधिनियम ने 1987 ई. में इसे पूर्ण राज्य का दर्जा दिलाने का मार्ग प्रशस्त किया।

- **पूर्वोत्तर क्षेत्र में मुद्दे:**
  - भौगोलिक दुर्गमता और शेष भारत से व्यापक नस्लीय मतभेद के कारण अलगाव।
  - 50 से अधिक जातीय विद्रोही समूहों द्वारा स्वायत्तता या जातीय मातृभूमि की माँग के कारण जातीय तनाव।
  - अंतर-जनजातीय संघर्ष, अवैध प्रवासन और युवा बेरोजगारी।

उग्रवाद और जातीय तनाव

- पूर्वोत्तर क्षेत्र जातीय तनाव और उग्रवाद से संबंधित चुनौतियों का सामना कर रहा है, जहाँ कई जातीय विद्रोही समूह स्वायत्तता या पृथक जातीय मातृभूमि की माँग कर रहे हैं।
- संघर्ष समाधान और शांति स्थापना की दिशा में निरंतर प्रयास जारी हैं, लेकिन मुद्दा चिंता का विषय बना हुआ है।

अवैध प्रवासन और नागरिकता

- अवैध प्रवास का मुद्दा, विशेषकर पड़ोसी देशों से, पूर्वोत्तर में चिंता का विषय रहा है।
- **असम में राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) की प्रक्रिया और नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) से संबंधित चर्चाओं ने** विवाद उत्पन्न कर दिया है और क्षेत्र में पहचान, स्वदेशी अधिकारों और जनसांख्यिकीय परिवर्तनों के बारे में सवाल उठाए हैं।

मणिपुर में हालिया जातीय संघर्ष (मई, 2023)

- **संघर्ष :** 3 मई, 2023 को भारत के पूर्वोत्तर राज्य मणिपुर में हिंसक जातीय संघर्ष देखा गया।
- **शामिल समुदाय:** इस संघर्ष में इंफाल घाटी में रहने वाले बहुसंख्यक मेइती समुदाय और आसपास की पहाड़ियों के कुकी और 'जो' लोगों सहित अन्य जनजातीय समूह शामिल थे।
- **प्रभावित जनसंख्या:** इस हिंसा से राज्य की पूरी आबादी प्रभावित हुई। हिंसा में बड़ी संख्या में लोग हताहत हुए, 70 से अधिक लोगों की जान चली गई तथा सैकड़ों लोग घायल हो गए।

प्रमुख शब्दावलियाँ

राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर, उग्रवाद और जातीय तनाव, 1873 ई. का बंगाल पूर्वी सीमांत विनियमन, भौगोलिक दुर्गमता, जातीय तनाव, बड़े पैमाने पर उग्रवाद विरोधी अभियान, अवैध प्रवासन आदि।

नक्सलवादी आंदोलन

उत्पत्ति और विकास

- CPI(M) {भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी)} नेताओं में पार्टी की नीतियों के प्रति असंतोष के कारण एक गुट ने नक्सलवादी आंदोलन को बढ़ावा दिया।
- **पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी** में किसान विद्रोह ने इस आंदोलन की शुरुआत की।
- CPI(M) द्वारा निष्कासित विद्रोही नेताओं को नक्सलवादी के रूप में जाना जाने लगा।
- अनेक युवा, विशेषकर कॉलेज के छात्र, नक्सलवादी आंदोलन की ओर आकर्षित हो रहे हैं।

CPI (ML) का गठन

- 1969 ई. में चारु मजूमदार के नेतृत्व में कम्युनिस्ट पार्टी-मार्क्सवादी लेनिनवादी (ML) का गठन हुआ।
- CPI(ML) का मानना था कि भारतीय राज्य फासीवादी है और कृषि संबंध अभी भी सामंती हैं तथा क्रांति के लिए दीर्घकालिक गुरिल्ला युद्ध की आवश्यकता है।
- कुछ क्षेत्रों में सशस्त्र किसान समूह बनाने और प्रतिद्वंद्वी CPI पर हमला करने में सफल रहे।

चुनौतियाँ

- यह आंदोलन ग्रामीण भारत में अपनी विचारधारा स्थापित करने में असफल रहा।
- राज्य के दमन के कारण आंदोलन में विभाजन हो गया।
- 1960 और 1970 के दशक के प्रारंभ में माओ के बाद के नेतृत्व द्वारा सांस्कृतिक क्रांति और माओवाद को अस्वीकार करने से आंदोलन का पतन हुआ।

राष्ट्रीय एकीकरण एक सतत प्रक्रिया बनी हुई है। अलगाववादी आंदोलनों को नियंत्रित करने में महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है, परंतु उग्रवाद, आतंकवाद और वामपंथी उग्रवाद के मुद्दे अभी भी मौजूद हैं। अनसुलझी विवादित सीमाओं और जल विवादों जैसे मुद्दों से संबंधित अंतर-राज्यीय संघर्षों को हल करना देश के एकीकृत विकास के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

नक्सलवाद एक चुनौती:

नक्सलवाद, जिसे वामपंथी उग्रवाद के नाम से भी जाना जाता है, भारत के सामने एक चुनौती है।

- इसकी शुरुआत 1960 के दशक के अंत में हुई और समय के साथ इसमें विकास हुआ। **गृह मंत्रालय ने** भारत के कुछ क्षेत्रों को वामपंथी उग्रवाद से प्रभावित क्षेत्रों के रूप में वर्गीकृत किया है।
- पिछली रिपोर्टों के अनुसार, सरकार द्वारा की गई विभिन्न पहलों, जैसे कि सुरक्षा अभियानों में वृद्धि, विकास कार्यक्रम, तथा नक्सली कैडरों के आत्मसमर्पण और पुनर्वास योजनाओं के कारण हाल के वर्षों में नक्सलवाद में कमी देखी गई है। हालाँकि, कुछ राज्यों, विशेष रूप से देश के मध्य और पूर्वी क्षेत्रों में नक्सलवाद अभी भी किसी-न-किसी रूप में मौजूद हैं।

शहरी नक्सलवाद:

- 'शहरी नक्सलवाद' शब्द का तात्पर्य शहरी क्षेत्रों में नक्सली समर्थकों की उपस्थिति और गतिविधियों से है जो नक्सलवाद की विचारधारा को आगे बढ़ाने की दिशा में काम करते हैं। इस शब्द का प्रयोग प्रायः नक्सलवादी विचारधारा का समर्थन या प्रचार, भर्ती या लामबंदी करने वाले शहरी नेटवर्क में शामिल व्यक्तियों या समूहों का वर्णन करने के लिए किया जाता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

शहरी नक्सलवाद, कम्युनिस्ट पार्टी-मार्क्सवादी लेनिनवादी, गुरिल्ला युद्ध, राज्य दमन, वामपंथी उग्रवाद, पुनर्वास आदि।

आदिवासियों का एकीकरण

जनजातीय समुदायों की व्यापक विविधता को राष्ट्रीय ताने-बाने में एकीकृत करना एक बड़ी चुनौती है, क्योंकि उनकी सांस्कृतिक पहचान विशिष्ट है तथा उनका निवास स्थान अपेक्षाकृत निश्चित नहीं है।

जनजातीय समुदायों के समक्ष उपस्थित समस्याएँ

- **अलगाव:** औपनिवेशिक शासन ने जनजातीय जीवन शैली को काफी हद तक प्रभावित किया। राजस्व प्राप्ति के लिए वनों की कटाई करने से साहूकार, व्यापारी और राजस्व किसान जैसे बाहरी लोगों का आगमन हुआ, जिससे आदिवासी रीति-रिवाज और जीवन शैली बाधित हो गई।
- **ऋणग्रस्तता में वृद्धि:** राजस्व कृषि (व्यावसायिक कृषि) की शुरुआत के कारण जनजातीय समुदाय ऋणग्रस्त हो गए, उन्हें अपनी भूमि बाहरी लोगों को देनी पड़ी जिससे अपनी ही पैतृक भूमि पर वो बटाईदार बनकर रह गए।
- **संस्कृति का ह्रास:** मिशनरियों की उपस्थिति के कारण जनजातीय समुदायों में धर्मांतरण को बढ़ावा मिला, जिसके साथ प्रायः पारंपरिक कलाओं, नृत्यों और हस्तशिल्पों का भी विनाश हुआ।
- **वनों के साथ संबंधों में बदलाव:** औपनिवेशिक प्राधिकारियों द्वारा लागू किए गए वन कानूनों ने झूम कृषि जैसी पारंपरिक प्रथाओं को प्रतिबंधित कर दिया तथा वन उत्पादों तक पहुँच को सीमित कर दिया, जिससे इन संसाधनों पर निर्भर जनजातीय आजीविका पर गहरा असर पड़ा।
- **सरकारी अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न:** ज्ञान और संसाधनों की कमी के कारण, आदिवासी समुदायों को अक्सर सरकारी अधिकारियों के हाथों शोषण और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है।

भारत की जनजातीय नीति

जनजातीय नीति के प्रति ऐतिहासिक दृष्टिकोण

- **अलगाववादी दृष्टिकोण:** इस नीति ने जनजातीय समुदायों और बाहरी समाज के बीच संपर्क को सीमित करने, जनजातीय संस्कृतियों को उनके पारंपरिक रूप में संरक्षित करने का प्रस्ताव किया।
- **अस्मितावादी दृष्टिकोण:** इस नीति का उद्देश्य जनजातीय समुदायों को भारतीय समाज की मुख्यधारा में पूर्ण रूप से एकीकृत करना तथा आधुनिक सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक जीवन में भागीदारी को बढ़ावा देना है।

नेहरू की एकीकरण नीति (जनजातीय पंचशील)

अलगाववादी और अस्मितावादी दोनों दृष्टिकोणों को अस्वीकार करते हुए, नेहरू ने एकीकरण नीति का सुझाव दिया, जिसने जनजातीय विशिष्टता का सम्मान करते हुए एकीकरण को बढ़ावा दिया।

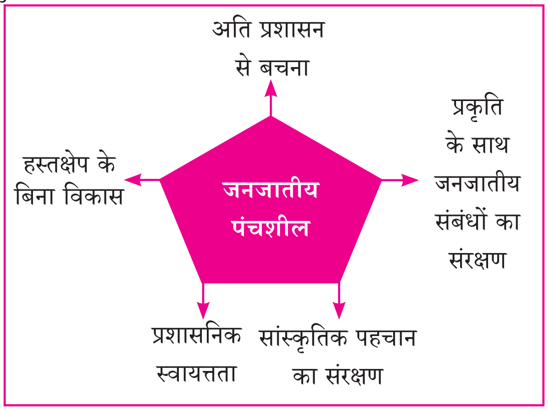

इस दृष्टिकोण के प्रमुख सिद्धांत नेहरू के जनजातीय पंचशील में समाहित थे:

- **जनजातीय विकास:** विकास को जनजातीय संस्कृति और जीवन शैली के अनुरूप होना चाहिए।
- **भूमि एवं वन अधिकार:** उनकी पारंपरिक भूमि एवं वनों पर आदिवासियों के अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।
- **सांस्कृतिक पहचान:** जनजातीय भाषाओं के प्रोत्साहन और संरक्षण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
- **प्रशासनिक स्वायत्तता:** जनजातीय समुदायों को उनके क्षेत्रीय प्रशासन में शामिल किया जाना चाहिए।
- **अति-प्रशासन से बचना:** जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन प्रभावी होने के साथ-साथ न्यूनतम हस्तक्षेप वाला होना चाहिए।

आदिवासियों के लिए संवैधानिक सुरक्षा

शैक्षिक एवं सांस्कृतिक	आर्थिक सुरक्षा	सामाजिक सुरक्षा	राजनीतिक सुरक्षा	सेवा सुरक्षा
अनुच्छेद 15(4): अनुसूचित जनजातियों (ST) सहित अन्य पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए प्रावधान। **अनुच्छेद 29:** अनुसूचित जनजातियों (STs) सहित अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करता है। **अनुच्छेद 46:** यह अनुच्छेद अनुसूचित जनजातियों (STs) के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए विशेष देखभाल का उल्लेख करता है। **अनुच्छेद 350 और 350A:** विशिष्ट भाषा, लिपि या संस्कृति के संरक्षण का अधिकार; मातृभाषा में शिक्षा।	**अनुच्छेद 244:** छठी अनुसूची के अंतर्गत सूचीबद्ध क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के अलावा किसी राज्य में अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों का प्रशासन और नियंत्रण। **अनुच्छेद 275:** पाँचवीं और छठी अनुसूची के तहत निर्दिष्ट राज्यों (STs और SCs) को सहायता अनुदान।	**अनुच्छेद 23:** मानव तस्करी, जबरन श्रम का निषेध। **अनुच्छेद 24:** यह अनुच्छेद बाल श्रम को प्रतिबंधित करता है।	**अनुच्छेद 164(1):** कुछ राज्यों में जनजातीय मामलों के मंत्रियों के लिए प्रावधान। **अनुच्छेद 330 और 337:** लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों (STs) के लिए सीटों का आरक्षण। **अनुच्छेद 334:** आरक्षण के लिए दस वर्ष की अवधि (कई बार संशोधित)। **अनुच्छेद 243:** पंचायतों में सीटों का आरक्षण। **अनुच्छेद 371:** पूर्वोत्तर राज्यों और सिक्किम के लिए विशेष प्रावधान।	**अनुच्छेद 16(4), 16(4A), 16(4B), अनुच्छेद 335 और अनुच्छेद 320(40) के तहत:** सार्वजनिक सेवाओं में अनुसूचित जनजातियों (STs) की सुरक्षा के लिए विभिन्न प्रावधान।

जनजातीय नीति और समकालीन चुनौतियाँ

संवैधानिक सुरक्षा उपायों और नीतिगत पहलों के बावजूद, जनजातीय कल्याण और प्रगति धीमी बनी हुई है, क्योंकि:

- **कानूनों का उल्लंघन:** आदिवासी भूमि को गैर-आदिवासियों को हस्तांतरित होने से बचाने वाले कानूनों की प्रायः अनदेखी की जाती है। विश्लेषकों और शोधकर्ताओं ने बताया है कि आदिवासी भूमि के हस्तांतरण के 2 लाख से अधिक मामले अदालतों में लंबित हैं।
- **संसाधनों का कुप्रबंधन:** आदिवासी कल्याण के लिए आवंटित संसाधनों का अक्सर उपयोग नहीं किया जाता या अप्रभावी रूप से उपयोग किया जाता है। भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) की वर्ष 2018 की रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया था कि आदिवासी कल्याण के लिए आवंटित धन का बहुत कम उपयोग किया जाता है।
- **योजनाओं का कमजोर क्रियान्वयन:** आदिवासियों की निर्धनता, ऋणग्रस्तता और बेरोजगारी की स्थितियाँ प्रायः कल्याणकारी योजनाओं के कमजोर क्रियान्वयन का परिणाम होती है। नीति आयोग की वर्ष 2020 की रिपोर्ट के अनुसार, लगभग 45% आदिवासी परिवार अभी भी गरीबी रेखा से नीचे हैं, जो राष्ट्रीय औसत से बहुत अधिक है।
- **शिक्षा अंतराल:** भाषा संबंधी बाधाओं और पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक संवेदनशीलता की कमी के कारण शैक्षिक प्रगति धीमी बनी हुई है। मानव संसाधन और विकास मंत्रालय की रिपोर्ट 2021 के अनुसार, आदिवासी छात्रों में स्कूल छोड़ने की दर अधिक है और इनकी आबादी का केवल एक छोटा-सा हिस्सा ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर पाता है।
- **नीतिगत विचलन:** केंद्र और राज्य सरकार की नीतियों के बीच टकराव अक्सर विकास में बाधा डालता है।
- **प्रशासनिक असंवेदनशीलता:** प्रशासनिक अधिकारियों में जनजातीय मुद्दों के प्रति समझ और सहानुभूति की अक्सर कमी होती है।
- **औद्योगिकीकरण और शहरीकरण:** ये प्रक्रियाएँ प्रायः जनजातीय भूमि और जंगलों पर अतिक्रमण करती हैं, जिससे उनकी आजीविका प्रभावित होती है।
- **वर्ग भेद:** आदिवासी समाजों में वर्ग विभाजन के कारण अक्सर विकास लाभों का असमान वितरण होता है। उदाहरण के लिए, सरकारी योजनाओं का लाभ अक्सर आदिवासी आबादी के अधिक संपन्न वर्गों को मिलता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

कमजोर क्रियान्वयन, शिक्षा अंतराल, वर्ग अंतराल, नीतिगत विचलन, प्रशासनिक असंवेदनशीलता, संसाधन कुप्रबंधन, प्रशासनिक स्वायत्तता, आदिवासी पंचशील, अलगाववादी दृष्टिकोण, आत्मसातीकरणवादी दृष्टिकोण आदि।

विगत वर्षों के प्रश्न

1. राज्यों एवं प्रदेशों का राजनीतिक और प्रशासनिक पुनर्गठन उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से निरंतर चल रही एक प्रक्रिया है। उदाहरण सहित विचार करें। **(2022)**
2. भारतीय रियासतों के एकीकरण की प्रक्रिया में मुख्य प्रशासनिक मुद्दों एवं सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याओं का आकलन कीजिए। **(2021)**
3. चर्चा करें कि क्या हाल के समय में नए राज्यों का निर्माण, भारत की अर्थव्यवस्था के लिए लाभप्रद है या नहीं? **(2018)**
4. क्या भाषाई राज्यों के गठन ने भारतीय एकता के उद्देश्य को मजबूती प्रदान की है? **(2016)**

3 स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय विदेश नीति

यह किसी गर्व या अहंकार की वजह से नहीं है कि हम अपनी स्वतंत्र नीति अपनाते हैं। हम अन्यथा तब तक नहीं करेंगे जब तक कि हम उन सभी चीजों के प्रति झूठे न हों जिनके लिए भारत अतीत में खड़ा रहा है और आज भी खड़ा है। हम सभी के साथ सहयोग और मित्रता एवं सभी प्रकार के विचारों के प्रवाह का स्वागत करते हैं, लेकिन हम अपने मार्ग के चुनाव का अधिकार अपने पास सुरक्षित रखते हैं। (प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू, लोकसभा में बोलते हुए, 15 सितंबर, 1955)

स्वतंत्रता के बाद की भारत की विदेश नीति और उसकी विशेषताएँ

- **स्वतंत्रता:** अपनी आर्थिक चुनौतियों के बावजूद, भारत ने एक स्वतंत्र विदेश नीति बनाए रखी, जिसके अंतर्गत अंतरराष्ट्रीय संबंधों में रणनीतिक स्वायत्तता पर जोर दिया गया।
- **गुट-निरपेक्षता:** स्वतंत्रता के बाद भारत ने किसी भी गुट में शामिल न होने का निर्णय लिया। इसकी गुटनिरपेक्ष नीति का तटस्थता से आगे भी विस्तार हुआ, जिससे भारत को प्रत्येक मुद्दे का उसकी योग्यता के आधार पर मूल्यांकन करने की स्वतंत्रता प्राप्त हुई।
- **विउपनिवेशीकरण:** भारत ने उपनिवेशवाद का मुखर विरोध किया और पूर्व उपनिवेशित देशों को उनके संघर्षों में समर्थन किया।
- **अंतरराष्ट्रीय संबंधों को लोकतांत्रिक बनाने में भूमिका:** भारत की गुटनिरपेक्ष नीति ने अंतरराष्ट्रीय संबंधों के लोकतंत्रीकरण को उत्प्रेरित किया, जिससे नव स्वतंत्र राष्ट्रों को विदेश नीति की स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिए प्रोत्साहित किया गया।
- **विश्व शांति एवं परमाणु निरस्त्रीकरण को बढ़ावा:** भारत ने लगातार विश्व शांति और परमाणु निरस्त्रीकरण की वकालत की, जैसा कि वर्ष 1961 के बेलग्रेड सम्मेलन में उसके रुख से पता चलता है।
- **आर्थिक हितों की सुरक्षा:** भारत की विदेश नीति भी अपने आर्थिक हितों की रक्षा करने, दोनों गुटों के देशों के साथ संबंध स्थापित करने पर केंद्रित थी।

भारत की स्वतंत्र विदेश नीति के अनुसरण के कारण

- **राष्ट्रीय विकास के लक्ष्य:** एक नव स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में, भारत ने गरीबी, अशिक्षा और खाद्य सुरक्षा जैसे घरेलू मुद्दों को संबोधित करने पर ध्यान केंद्रित किया, जिसके लिए गुटनिरपेक्ष रुख की आवश्यकता थी।
- **स्वतंत्रता संग्राम के सिद्धांतों का पालन:** अहिंसा, लोकतांत्रिक मूल्यों और उपनिवेशवाद विरोधी संघर्ष के सिद्धांतों ने भारत की स्वतंत्र विदेश नीति का मार्गदर्शन किया।
- **सत्ता संघर्ष से बचाव:** गुटनिरपेक्ष रहकर भारत महाशक्तियों के बीच सत्ता संघर्ष में मोहरा बनने से बचा रहा।
- **वैश्विक राजनीति में सक्रिय भूमिका:** भारत की स्वतंत्र विदेश नीति ने इसे विश्व राजनीति में सक्रिय भूमिका निभाने तथा नव स्वतंत्र राष्ट्रों को समर्थन देने में सक्षम बनाया।
- **दोनों गुटों से सहयोग प्राप्त करना:** भारत की गुटनिरपेक्षता ने पश्चिमी तथा सोवियत दोनों गुटों से आर्थिक सहयोग को सुगम बनाया, जिससे इसे प्रौद्योगिकी तथा खाद्य सहायता प्राप्त करने में सहायता मिली।

पंचशील नीति: पंचशील, जिसे शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के पाँच सिद्धांतों के रूप में भी जाना जाता है, भारत की विदेश नीति का एक मूलभूत तत्त्व है। यह संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता के लिए आपसी सम्मान, आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने, समानता और पारस्परिक लाभ तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व पर ज़ोर देता है।

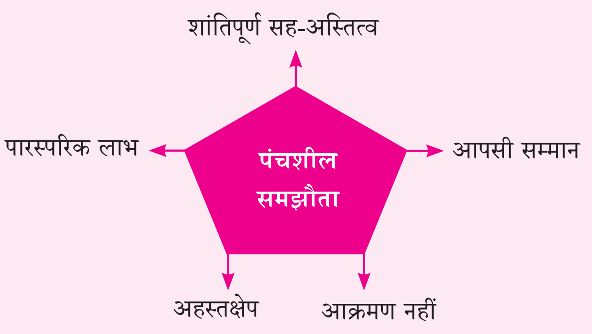

गुजराल सिद्धांत: पूर्व प्रधानमंत्री आई.के. गुजराल के नाम पर बना गुजराल सिद्धांत, गैर-पारस्परिकता और गैर-हस्तक्षेप के सिद्धांतों के आधार पर भारत के पड़ोसियों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाने पर जोर देता है। यह भारत को बदले में कुछ भी उम्मीद किए बिना अपने पड़ोसी देशों की एकतरफा सहायता करने के लिए सक्रिय कदम उठाने के लिए प्रोत्साहित करता है।

जैसे-जैसे भारत विकसित होता जा रहा है, इसकी विदेश नीति में भी बदलाव की उम्मीद है, जो देश की बदलती प्राथमिकताओं और गतिशील अंतरराष्ट्रीय माहौल को दर्शाता है। भारत की विदेश नीति के बदलावों और आयामों को समझना वैश्विक राजनीति और भविष्य की रणनीतिक दिशाओं में इसकी भूमिका को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

उपनिवेशवाद का उन्मूलन, गुटनिरपेक्षता, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का लोकतंत्रीकरण, बहु-संरेखण, आदर्शवाद, यथार्थवाद, विश्व शांति और परमाणु निरस्त्रीकरण, मैत्री संधि, बहुध्रुवीय विश्व, संयुक्त राष्ट्र निकाय, आईएमएफ, विश्व बैंक, पंचशील नीति, स्वतंत्रता, सत्ता संघर्ष, गुजराल सिद्धांत, पश्चिमी और सोवियत गुट

स्वतंत्रता के पश्चात: अंतरराष्ट्रीय मामलों में भारत की भूमिका

स्वतंत्रता के बाद, भारत ने अंतरराष्ट्रीय मामलों में सक्रिय भूमिका निभाई और वैश्विक मंच पर एक प्रमुख खिलाड़ी के रूप में अपनी स्थिति की पुष्टि की।

अंतरराष्ट्रीय घटनाक्रम	भारत की भूमिका
कोरियाई युद्ध: द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, कोरिया दो भागों में विभाजित हो गया - सोवियत संघ के प्रभाव वाला साम्यवादी उत्तर कोरिया और पश्चिमी शक्तियों के अधीन दक्षिण कोरिया।	1950 में जब उत्तर कोरिया ने दक्षिण कोरिया पर आक्रमण किया तो भारत ने अमेरिका का समर्थन करते हुए उत्तर कोरिया को आक्रामक घोषित कर दिया। जब अमेरिका ने कोरिया में एकीकृत कमान का प्रस्ताव रखा, तो भारत ने संघर्ष में बाहरी शक्तियों के हस्तक्षेप को रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र में मतदान में भाग नहीं लिया। जैसे-जैसे संघर्ष बढ़ता गया, चीन ने अमेरिकी सेना के खिलाफ उत्तर कोरिया का समर्थन किया, भारत ने संयुक्त राष्ट्र में चीन को आक्रामक घोषित करने वाले प्रस्ताव के खिलाफ मतदान किया, क्योंकि भारत का मानना था कि अमेरिका एक अपराधी है। कोरियाई मुद्दे के समाधान के लिए भारत के **कृष्ण मेनन** द्वारा प्रस्तावित फार्मूला स्वीकार कर लिया गया, जिसके परिणामस्वरूप **तटस्थ राष्ट्र** प्रत्यावर्तन आयोग की स्थापना हुई, जिसके अध्यक्ष एक भारतीय, **जनरल थिमय्या** थे।
फ्रांसीसी इंडो-चीन संघर्ष :भारत ने फ्रांसीसी इंडो-चीन संघर्ष में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा संघर्ष समाधान में मध्यस्थ और पर्यवेक्षक के रूप में कार्य किया। फ्रांसीसी इंडो-चीन में वियतनाम, लाओस और कंबोडिया सहित दक्षिण पूर्व एशिया के फ्रांसीसी औपनिवेशिक क्षेत्र शामिल थे।	भारत ने कंबोडिया और लाओस को तटस्थ बनाने के लिए चीन से गारंटी हासिल की, बदले में ब्रिटेन और फ्रांस ने इस क्षेत्र में अमेरिकी ठिकानों को रोकने के लिए प्रतिबद्धता जताई। अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण आयोग के अध्यक्ष के रूप में, भारत ने इन क्षेत्रों में विदेशी हथियारों के आयात की निगरानी की।
स्वेज नहर संकट स्वेज नहर संकट एक कूटनीतिक और सैन्य टकराव था, जहाँ भारत ने शांति और स्थिरता को बढ़ावा देते हुए **मिस्र के अधिकारों** को बरकरार रखा।अमेरिका और ब्रिटेन द्वारा अपनी गुटनिरपेक्ष नीति को त्यागने के दबाव के जवाब में, मिस्र ने 1956 में स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर दिया। इस कदम का नहर के प्राथमिक उपयोगकर्ताओं, ब्रिटेन और फ्रांस ने विरोध किया।	भारत ने मिस्र का समर्थन करते हुए कहा कि **कांस्टेंटिनोपल कन्वेंशन (1888)** के अनुसार स्वेज नहर मिस्र का अभिन्न अंग है। भारत ने एक समाधान प्रस्तावित किया जिसमें मिस्र ने नहर पर नियंत्रण बनाए रखा और उपयोगकर्ताओं के लिए सलाहकार की भूमिका निभाई। शांतिपूर्ण प्रस्तावों के बावजूद, ब्रिटेन और फ्रांस ने इजरायल के साथ मिलकर मिस्र पर हमला करने की योजना बनाई। संयुक्त राष्ट्र की निगरानी में विदेशी सैनिक मिस्र से वापस चले गए, जिसमें भारतीय सैनिकों ने शांति सेना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
हंगरी का विद्रोह: जब सोवियत संघ ने हंगरी में विद्रोह को कुचल दिया, जो सोवियत गुट से अलग होने का प्रयास कर रहा था।	भारत ने आधिकारिक तौर पर इस कार्रवाई की निंदा नहीं की, लेकिन दो वर्षों तक बुडापेस्ट में अपना राजदूत न भेजकर अपनी नाराजगी जाहिर की। 1956 के हंगरी विद्रोह में सोवियत संघ के हस्तक्षेप के प्रति भारत की सूक्ष्म अस्वीकृति देखी गई।
कांगों संकट बेल्जियम से कांगो की स्वतंत्रता के बाद संघर्ष उत्पन्न हो गया, क्योंकि बेल्जियम के समर्थन से कटंगा प्रांत (Katanga Province) ने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी।	प्रधानमंत्री लुमुम्बा की हत्या के बाद, भारत ने विदेशी सैन्य उपस्थिति को समाप्त करने, गृह युद्ध को रोकने, संसद को बुलाने और नई सरकार बनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र के हस्तक्षेप की माँग की। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद ने 1961 में गृह युद्ध को रोकने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें भारतीय सेनाओं ने शांति बहाल करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

निष्कर्ष रूप में, इन अंतरराष्ट्रीय मामलों में भारत की भूमिका शांति, स्वतंत्रता, गुटनिरपेक्षता और व्यावहारिक कूटनीति के प्रति देश की प्रतिबद्धता और वैश्विक राजनीति में अपना पक्ष रखने की उसकी इच्छा को दर्शाती है। इन उदाहरणों ने अंतरराष्ट्रीय मामलों में भारत के निरंतर और बढ़ते प्रभाव का मार्ग प्रशस्त किया है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

साम्यवादी उत्तर कोरिया, कांगो संकट, पश्चिमी शक्तियाँ, फ्रांसीसी इंडो-चीन संघर्ष, शांति बहाल करना, अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण आयोग, स्वेज नहर, कॉन्स्टेंटिनोपल कन्वेंशन, व्यावहारिक कूटनीति, तटस्थ राष्ट्र प्रत्यावर्तन आयोग

महाशक्तियों के साथ संबंध

संयुक्त राज्य अमेरिका: प्रौद्योगिकी, मशीनरी, खाद्यान्न विकास और राष्ट्र निर्माण में नैतिक समर्थन के लिए भारत-अमेरिका मैत्री।

शीत युद्ध के दौरान प्रमुख बाधाओं में शामिल थे:

- भारत द्वारा साम्यवादी चीन को मान्यता देना।
- पाकिस्तान को अमेरिका का समर्थन.
- कोरियाई युद्ध तथा गोवा के भारत में एकीकरण जैसे अंतरराष्ट्रीय मुद्दों पर भिन्न-भिन्न रुख।

महाशक्तियों के मध्य संबंधों के सकारात्मक पक्ष:

- कैनेडी प्रशासन काल के दौरान और भारत पर चीन के हमले के बाद संबंधों में उल्लेखनीय सुधार हुआ।
- अमेरिका के प्रौद्योगिकी और मशीनरी का स्रोत बनने से आर्थिक संबंधों में प्रगाढ़ता आई है।
- लोगों से लोगों के मध्य संबंध मैत्रीपूर्ण बने रहे।

वर्तमान स्थिति:

- भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौते के बाद से दोनों देशों के मध्य संबंधों में महत्त्वपूर्ण सकारात्मक मोड़ आया।

संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ किए गए प्रमुख समझौते

- **भारत-अमेरिका असैनिक परमाणु समझौता, 2008**
- **द्विपक्षीय व्यापार समझौता**
- **अंतिम-उपयोगकर्ता सत्यापन अनुबंध**
- **भारत-अमेरिका स्वास्थ्य पहल**
- **कृषि पर ज्ञान पहल**
- **अंतरिक्ष सहयोग**
- **भारत-यूएसए साइबर फ्रेमवर्क**

- व्यापार, रक्षा और सुरक्षा, शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा असैन्य परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी और अनुप्रयोग, पर्यावरण एवं स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में बहुआयामी सहयोग को बढ़ावा मिला है।
- छात्र आदान-प्रदान, पर्यटन और अमेरिका में भारतीय प्रवासियों के योगदान द्वारा चिह्नित सांस्कृतिक साझाकरण।
- जलवायु परिवर्तन और साइबर सुरक्षा जैसे वैश्विक मुद्दों पर सहयोग में वृद्धि हुई है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

लोगों से लोगों का संपर्क, राष्ट्र निर्माण, बहुआयामी सहयोग, कैनेडी प्रशासन, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, असैन्य परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी, रणनीतिक साझेदारी तथा प्रवासी इत्यादि।

रूस (पूर्व सोवियत संघ)

ऐतिहासिक संबंध:

- भारत के गुटनिरपेक्ष रुख और साम्राज्यवादी प्रभाव के कारण प्रारंभिक स्तर पर दोनों देशों के मध्य संबंधों में ढील महसूस की गई।
- समय के साथ दोनों देशों के मध्य संबंधों में प्रगाढ़ता बढ़ती गई और सोवियत संघ ने कोरियाई युद्ध संकट, गोवा के एकीकरण तथा चीन-भारत युद्ध के दौरान महत्त्वपूर्ण समर्थन प्रदान किया।
- सोवियत संघ ने भारत के आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई और भिलाई तथा बोकारो में इस्पात संयंत्रों की स्थापना में सहायता की।

भारत और सोवियत संघ के मध्य शांति, मैत्री और सहयोग से संबंधित संधि:

- **संधि पर हस्ताक्षर (1971):** शांति, मैत्री और सहयोग की संधि पर भारत और यूएसएसआर ने 9 अगस्त, 1971 को हस्ताक्षर किए थे।
    - इसने शीत युद्ध के रुख में एक सार्थक परिवर्तन और दोनों देशों के मध्य संबंधों की प्रगाढ़ता में योगदान दिया।
- **सामरिक भागीदारी:** यह संधि दोनों देशों के मध्य सिर्फ एक समझौता भर ही नहीं था, बल्कि यह एक रणनीतिक समझौता भी था। इसमें किए गए एक प्रावधान के अनुसार किसी तीसरे पक्ष द्वारा हमला या धमकी की स्थिति में दोनों पक्षों को एक-दूसरे से परामर्श करना अनिवार्य होगा, जो कि पड़ोसी देशों के साथ तनावपूर्ण संबंधों के संदर्भ में भारत के लिए एक सुरक्षा परिदृश्य प्रदान करना विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण था।
- **आर्थिक और तकनीकी सहयोग:** इस संधि के माध्यम से आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग का भी आह्वान किया गया है। यूएसएसआर ने इस अवधि के दौरान प्रमुख औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना सहित भारत के आर्थिक विकास की दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- **अवधि एवं नवीनीकरण:** ध्यातव्य है कि इस संधि पर मूलतः 20 वर्षों के लिए हस्ताक्षर किये गये थे किन्तु सोवियत संघ के विघटन से कुछ समय पूर्व अर्थात वर्ष 1991के दौरान इसे 20 वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया था। इसके बाद, सोवियत संघ के उत्तराधिकारी राज्य के रूप में रूस ने भारत के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखे, यद्यपि संधि की विशिष्ट शर्तें अब लागू नहीं होती।

वर्तमान स्थिति:

- **सामरिक साझेदारी:** भारत और रूस के बीच दीर्घकालिक सामरिक साझेदारी है, जिसमें रक्षा, ऊर्जा, अंतरिक्ष और प्रौद्योगिकी जैसे विभिन्न क्षेत्र शामिल हैं।
- **रक्षा सहयोग:** रक्षा सहयोग द्विपक्षीय संबंधों की आधारशिला बना हुआ है। भारत विमान, टैंक, मिसाइल और पनडुब्बियों सहित रूसी सैन्य हार्डवेयर का एक महत्त्वपूर्ण आयातक है। दोनों देश संयुक्त सैन्य अभ्यास, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और सहयोगी रक्षा परियोजनाओं में संलग्न हैं।
- **ऊर्जा सहयोग:** भारत और रूस ऊर्जा सहयोग के अवसरों की तलाश कर रहे हैं, खासकर तेल और गैस क्षेत्र में। रूस भारत को कच्चे तेल का एक प्रमुख आपूर्तिकर्ता है, और दोनों देशों ने परमाणु ऊर्जा में सहयोग बढ़ाने की संभावना पर चर्चा की है।
- **क्षेत्रीय और वैश्विक कूटनीति:** भारत और रूस अक्सर संयुक्त राष्ट्र, ब्रिक्स और एससीओ (शंघाई सहयोग संगठन) जैसे बहुपक्षीय मंचों पर क्षेत्रीय और वैश्विक मुद्दों पर अपनी स्थिति का समन्वय करते हैं।
- **आर्थिक भागीदारी:** व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के प्रयास किए गए हैं, यद्यपि साझेदारी के अन्य पहलुओं की तुलना में आर्थिक संबंध अपनी पूर्ण क्षमता तक नहीं पहुँच पाए हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

ऊर्जा सहयोग, आर्थिक जुड़ाव, रणनीतिक साझेदारी, शांति, मैत्री और सहयोग की संधि, वैश्विक कूटनीति।

पड़ोसियों के साथ संबंध

नेपाल

ऐतिहासिक संबंध:

- 1950 में शांति और मैत्री की संधि।
- नेपाल की संप्रभुता और एक-दूसरे की सुरक्षा के लिए संयुक्त जिम्मेदारी सुनिश्चित की।

भारत और नेपाल के मध्य शांति और मैत्री की संधि पर 1950 में हस्ताक्षर किए गए थे, जिससे दोनों देशों के मध्य घनिष्ठ रणनीतिक संबंध स्थापित हुए। यह संधि दोनों देशों के बीच लोगों और वस्तुओं की मुक्त आवाजाही और विदेशी मामलों में घनिष्ठ संबंध की अनुमति देती है।

वर्तमान स्थिति:

- चीन का बढ़ता प्रभाव, खास तौर पर बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव के ज़रिए।
- नेपाल का लिम्पियाधुरा, कालापानी और लिपुलेख के भारतीय क्षेत्रों पर विवादास्पद दावा।
- सीमा विवादों के समाधान के लिए भारत की कूटनीतिक भागीदारी।
- भारत द्वारा वैक्सीन कूटनीति और बुनियादी ढांचे में निवेश।

- **महाकाली संधि (1996):** महाकाली नदी के जल के साझा उपयोग के लिए एक द्विपक्षीय समझौता।
- **मोटर वाहन समझौता (2014):** इसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच बस सेवा की अनुमति देना है ताकि संपर्क और पर्यटन को बढ़ावा दिया जा सके।
- **दीर्घकालिक विद्युत व्यापार समझौता:** भारत और नेपाल ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किए, जिसका लक्ष्य आने वाले वर्षों में नेपाल से 10,000 मेगावाट बिजली आयात करना है।
- **पारगमन संधि**, जो नेपाल को भारत के अंतर्देशीय जलमार्गों तक पहुँच प्रदान करेगी।
- **संयुक्त सैन्य अभ्यास सूर्य किरण** नेपाल और भारत में बारी-बारी से आयोजित किया जाता है।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ: महाकाली संधि, मोटर वाहन समझौता, विद्युत व्यापार समझौता, वैक्सीन कूटनीति, शांति और मैत्री संधि, सूर्य किरण, बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव।

भूटान

ऐतिहासिक संबंध:

- भारत-भूटान संबंध 1968 में कूटनीतिक रूप से थिम्पू में भारत के एक विशेष कार्यालय की स्थापना के साथ स्थापित हुए।
- भारत-भूटान मैत्री और सहयोग संधि पर 1949 में हस्ताक्षर हुए और फरवरी 2007 में इसमें संशोधन किया गया।
- 1960 के दशक की शुरुआत से ही भारत भूटान के विकास के लिए आर्थिक सहायता दे रहा है।

वर्तमान स्थिति:

- 720 मेगावाट मंगदेछू जैसी हाइड्रो परियोजना
- दक्षिण एशियाई सैटेलाइट के उपयोग के लिए इसरो का ग्राउंड अर्थ स्टेशन।
- भूटान-भारत और चीन के बीच बफर क्षेत्र के रूप में कार्य करता है।
- भारत-भूटान व्यापार, वाणिज्य और पारगमन समझौता एक मुक्त व्यापार व्यवस्था स्थापित करता है और तीसरे देशों को भूटानी निर्यात के शुल्क मुक्त पारगमन का भी प्रावधान करता है।

चुनौतियाँ:

- **भूटान और चीन के बीच संबंधों को सामान्य बनाना:** चीन के लिए, भूटान के साथ राजनयिक संबंध और विवाद समाधान, एशियाई शक्ति के रूप में उसकी स्थिति के लिए तथा भारत के प्रति उसकी आक्रामक स्थिति में बढ़त के लिए महत्त्वपूर्ण है।
- **सुरक्षा चिंताएँ:** भारत के उत्तर-पूर्व को देश के बाकी हिस्सों से जोड़ने वाले महत्त्वपूर्ण सिलीगुड़ी कॉरिडोर के निकट ट्राइजंक्शन पर भारत के लिए सुरक्षा चिंताएँ।
- **भूटान की बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (BRI) में शामिल होने की सम्भावना:** बीआरआई और क्षेत्र पर इसके प्रभाव, विशेष रूप से संप्रभुता और ऋण निहितार्थ के संदर्भ में भारत की आपत्तियां, भूटान की रणनीतिक स्थिति को देखते हुए टकराव पैदा कर सकती हैं।

भूटान नरेश जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक ने नवंबर 2023 में भारत की आठ दिवसीय यात्रा शुरू की। यह यात्रा भूटान और चीन द्वारा अपने सीमा विवाद के शीघ्र समाधान के लिए नए सिरे से किए जा रहे प्रयासों के बीच हो रही है। भूटान नरेश क्षेत्रीय गतिशीलता के बीच भारत की आठ दिवसीय यात्रा पर आ रहे हैं, ऐसे में दोनों देशों के बीच बहुआयामी संबंधों को बनाए रखना और बढ़ाना महत्त्वपूर्ण हो जाता है, जिसके लिए कूटनीतिक कौशल, मजबूत सुरक्षा सहयोग और निरंतर आर्थिक विविधीकरण प्रयासों की आवश्यकता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

व्यापार, वाणिज्य और पारगमन समझौता, मैत्री और सहयोग संधि, सिलीगुड़ी कॉरिडोर, बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव (बीआरआई), बफर स्टेट (BUFFER STATE)।

म्याँमार (बर्मा)

ऐतिहासिक संबंध:

- भारतीय प्रवासियों और लंबे समय से अज्ञात क्षेत्र से संबंधित मुद्दों का सौहार्दपूर्ण समाधान।
- बुनियादी ढांचे और कनेक्टिविटी परियोजनाओं में निवेश।

वर्तमान स्थिति:

- भारत के लिए म्याँमार का रणनीतिक महत्त्व।
- रोहिंग्या संकट और हालिया सैन्य तख्तापलट से उत्पन्न चुनौतियाँ।

समझौते और सहयोग के क्षेत्र:

- **कलादान मल्टी-मॉडल ट्रांजिट ट्रांसपोर्ट परियोजना:** म्याँमार के माध्यम से भारतीय मुख्य भूमि को इसके उत्तर-पूर्वी राज्यों से जोड़ने के लिए एक बुनियादी ढाँचा परियोजना।
- **भारत-म्याँमार-थाईलैंड त्रिपक्षीय राजमार्ग:** कनेक्टिविटी को बढ़ावा देने और व्यापार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के लिए एक राजमार्ग परियोजना।

चुनौतियाँ:

- **राजनीतिक अस्थिरता:** म्याँमार में हाल ही में हुए सैन्य तख्तापलट से राजनीतिक अस्थिरता पैदा हो गई है, जिससे द्विपक्षीय संबंध और क्षेत्रीय सुरक्षा प्रभावित हुई है।
- **रोहिंग्या शरणार्थी संकट:** रोहिंग्या आबादी के विस्थापन से उत्पन्न मानवीय संकट ने क्षेत्रीय स्थिरता और मानवाधिकार मुद्दों के संदर्भ में चुनौतियाँ उत्पन्न कर दी हैं।

मुक्त आवागमन व्यवस्था

यह पहाड़ी जनजातियों के प्रत्येक सदस्य को, जो या तो भारत का नागरिक है या म्याँमार का नागरिक है और जो सीमा के दोनों ओर 16 किलोमीटर के भीतर किसी भी क्षेत्र का निवासी है, एक वर्ष की वैधता वाले सीमा पास के प्रदर्शन पर सीमा पार करने की अनुमति देता है और दो सप्ताह तक रह सकता है - बिना वीजा प्रतिबंध के।

भारत और म्याँमार के बीच ऐतिहासिक संबंध हैं, जो भारतीय प्रवासियों और अनसुलझे सीमा क्षेत्रों से संबंधित मुद्दों के समाधान से चिह्नित हैं। भारत ने कलादान मल्टी-मॉडल ट्रांजिट ट्रांसपोर्ट प्रोजेक्ट और भारत-म्याँमार-थाईलैंड त्रिपक्षीय राजमार्ग जैसी बुनियादी ढांचे और कनेक्टिविटी परियोजनाओं में निवेश किया है। वर्तमान में, म्याँमार भारत के लिए रणनीतिक महत्त्व रखता है, लेकिन इस रिश्ते को हाल ही में हुए सैन्य तख्तापलट और चल रहे रोहिंग्या शरणार्थी संकट के बाद राजनीतिक अस्थिरता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

मुक्त आवागमन व्यवस्था, राजनीतिक अस्थिरता, कलादान मल्टी-मॉडल ट्रांजिट ट्रांसपोर्ट परियोजना, त्रिपक्षीय राजमार्ग, सौहार्दपूर्ण समझौता।

मालदीव

ऐतिहासिक कड़ियाँ

भारत-मालदीव संबंध: भारत और मालदीव के बीच प्राचीन काल से जातीय, भाषाई, सांस्कृतिक, धार्मिक और वाणिज्यिक संबंध रहे हैं तथा दोनों देशों के बीच घनिष्ठ, सौहार्दपूर्ण और बहुआयामी संबंध हैं।

मान्यता और राजनयिक संबंध: भारत 1965 में मालदीव की स्वतंत्रता के बाद उसे मान्यता देने वाले तथा उसके साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने वाले प्रथम देशों में से था।

उच्चायोग: भारत ने 1972 में अपना मिशन तथा 1980 में स्थानीय उच्चायुक्त की स्थापना की। मालदीव ने नवंबर 2004 दिल्ली में अपना पूर्ण उच्चायोग खोला।

वर्तमान स्थिति:

- **सामरिक महत्त्व:** मालदीव भारत के लिए एक महत्त्वपूर्ण साझेदार है, क्योंकि यह हिंद महासागर में प्रमुख अंतरराष्ट्रीय शिपिंग लेन के संबंध में रणनीतिक रूप से स्थित है, जो भारत, चीन और जापान जैसे देशों को निर्बाध ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करता है।
- मालदीव भौगोलिक दृष्टि से **एक ओर अदन की खाड़ी और होर्मुज जलडमरूमध्य के पश्चिमी हिंद महासागर के चोकपॉइंट्स तथा दूसरी ओर मलक्का जलडमरूमध्य के पूर्वी हिंद महासागर के चोकपॉइंट** के बीच एक 'टोल गेट' की तरह स्थित है।
- **शुद्ध सुरक्षा प्रदाता के रूप में भारत की भूमिका:** प्रमुख दक्षिण एशियाई शक्ति और हिंद महासागर क्षेत्र में एक 'शुद्ध सुरक्षा प्रदाता' के रूप में, भारत को सुरक्षा और रक्षा क्षेत्रों में मालदीव के साथ सहयोग करने की आवश्यकता है।
- **क्षेत्रीय समूहों में सहयोग:** मालदीव दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC) का भी सदस्य है और इस क्षेत्र में अपना नेतृत्व बनाए रखने के लिए भारत के लिए मालदीव को अपने साथ जोड़ना महत्त्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए, मालदीव उरी हमले के बाद पाकिस्तान में SAARC शिखर सम्मेलन के बहिष्कार के भारत के आह्वान का पालन करने में अनिच्छुक था।
- **भारतीय प्रवासियों की सुरक्षा सुनिश्चित करना:** मालदीव में भारतीय प्रवासी समुदाय की संख्या लगभग 27,000 है, जो मालदीववासियों और अन्य प्रवासियों के साथ शांतिपूर्वक रह रहे हैं तथा उन्हें किसी बड़ी समस्या का सामना नहीं करना पड़ रहा है।

आगे की राह

मालदीव के लिए: भारत इस क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक और सुरक्षा केंद्र बना हुआ है, जिससे यह ज़रूरी हो जाता है कि आपसी संवेदनशीलता का सम्मान किया जाए। संबंधों को और मज़बूत करने के लिए नई सरकार को दक्षिण एशिया में चीन के बढ़ते प्रभाव को कम करके भारत विरोधी रुख़ छोड़ना होगा।

भारत के लिए: भारतीय कूटनीति मालदीव सहित पड़ोसी देशों के विभिन्न पक्षों को शामिल करने के लिए पर्याप्त लचीली हो सकती है। इससे सत्ता में बैठे लोगों के साथ जुड़ने में मदद मिलेगी, न कि केवल सत्ता में बैठे लोगों के साथ। ट्रेंडिंग हैशटैग "मालदीव का बहिष्कार" आत्मघाती है क्योंकि चीन इस स्थिति का फायदा उठाने के लिए मालदीव में अच्छी स्थिति में है। इसके अलावा, किसी भी रूप में मालदीव का बहिष्कार करने से द्वीपों में भारत का प्रभाव कम ही होगा। इसलिए, भारत को मालदीव के साथ दृढ़ लेकिन धैर्यपूर्ण जुड़ाव सुनिश्चित करना चाहिए।

ऑपरेशन कैक्टस क्या है?

ऑपरेशन कैक्टस 1988 में मालदीव में भारतीय सशस्त्र बलों द्वारा चलाया गया एक मिशन था, जिसमें उसने तख्तापलट की कोशिश को रोका था। तख्तापलट की कोशिश राष्ट्रपति अब्दुल गयूम के नेतृत्व वाली मालदीव सरकार के खिलाफ थी।

हाइड्रोग्राफी संधि

भारत के प्रधान मंत्री ने 2019 में राजकीय यात्रा के लिए मालदीव की यात्रा की, और इस यात्रा के दौरान विभिन्न समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किए गए, जिसमें भारतीय नौसेना और मालदीव राष्ट्रीय रक्षा बल (MNDF) के बीच हाइड्रोग्राफी के क्षेत्र में सहयोग के लिए एक समझौता भी शामिल था। हाइड्रोग्राफिक सर्वेक्षण: वे समुद्री परिवहन की दक्षता और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए पानी की गहराई, समुद्र तल और तटरेखा के आकार, संभावित अवरोधों के स्थान और जल निकायों की भौतिक विशेषताओं का पता लगाने में मदद करते हैं।

महत्त्वपूर्ण शब्दावलियाँ:
ऑपरेशन कैक्टस, हाइड्रोग्राफी संधि, सामरिक महत्त्व, चोकपॉइंट, भारतीय प्रवासी, दक्षिण एशियाई शक्ति, शुद्ध सुरक्षा प्रदाता।

पाकिस्तान

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:

- सांस्कृतिक, भौगोलिक, भाषाई और आर्थिक संबंधों के बावजूद जटिल संबंध।
- विभाजन से जुड़ी हिंसा और विस्थापन।
- कश्मीर और अन्य क्षेत्रीय विवादों पर विभिन्न युद्ध।

1965 का युद्ध

- कच्छ के रण पर पाकिस्तान का कब्ज़ा और उसके बाद अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता।
- कश्मीर में पाकिस्तान द्वारा अघोषित युद्ध।
- भारत की आक्रामक प्रतिक्रिया और क्षेत्रीय लाभ।
- संयुक्त राष्ट्र के दबाव में युद्ध विराम और ताशकंद समझौता।
- भारत के लिए गौरव की बहाली लेकिन रणनीतिक स्थानों का नुकसान।

ताशकंद समझौता (1966)

- **प्रादेशिक बहाली:** इसके तहत युद्ध के दौरान दोनों पक्षों द्वारा कब्जा किए गए क्षेत्रों को वापस किया गया, जिसमें भारत द्वारा कब्जा किए गए रणनीतिक स्थान भी शामिल थे।
- **युद्ध विराम और सैनिकों की वापसी:** 1965 के भारत-पाक युद्ध के बाद हस्ताक्षरित इस समझौते में युद्ध विराम और सैनिकों की युद्ध-पूर्व स्थिति में वापसी का प्रावधान था।
- **शांतिपूर्ण समाधान:** समझौते में दोनों पक्षों की शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व और शांतिपूर्ण तरीकों से विवादों के समाधान के प्रति प्रतिबद्धता की भी पुष्टि की गई।
- **आर्थिक और राजनयिक संबंधों की बहाली:** समझौते में भारत और पाकिस्तान के मध्य राजनयिक और आर्थिक संबंधों को फिर से शुरू करने का आह्वान किया गया, जो संघर्ष के दौरान टूट गए थे।
- **कोई ठोस समाधान नहीं:** इन उपायों के बावजूद, समझौते में अंतर्निहित मुद्दों, विशेष रूप से कश्मीर विवाद का समाधान नहीं किया गया, जिससे भविष्य में संघर्ष की संभावना बनी रहेगी।

1971-72 का युद्ध

- पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच संघर्ष से युद्ध की शुरुआत ।
- पूर्वी पाकिस्तान में प्रदर्शनों के दमन के कारण भारत में शरणार्थियों का आगमन हुआ।
- भारत के हस्तक्षेप के साथ बांग्लादेश का निर्माण हुआ।

शिमला समझौता (1972)

- **नियंत्रण रेखा:** इसके परिणामस्वरूप जम्मू और कश्मीर में नियंत्रण रेखा (LoC) की औपचारिक स्थापना हुई, जिसका उद्देश्य कश्मीर मुद्दे के अंतिम समाधान तक शांति और सौहार्द बनाए रखना था।
- **द्विपक्षीय समाधान:** समझौते में इस बात पर जोर दिया गया कि भारत और पाकिस्तान दोनों द्विपक्षीय वार्ता के माध्यम से शांतिपूर्ण तरीके से अपने मतभेदों को सुलझाएंगे, जिससे तीसरे पक्ष की मध्यस्थता पर निर्भरता कम होगी।
- **संप्रभुता के प्रति सम्मान:** इस संधि ने एक दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता के प्रति सम्मान को सुदृढ़ किया, जिसका उद्देश्य भविष्य में किसी भी सैन्य संघर्ष को रोकना था।
- **युद्धबंदी:** समझौते के तहत दोनों देशों ने युद्धबंदियों का आदान-प्रदान करने की प्रतिबद्धता जताई।
- **मैत्रीपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देना:** समझौते में दोनों देशों के बीच संबंधों को सामान्य बनाने और मैत्रीपूर्ण आदान-प्रदान को बढ़ावा देने की दिशा में कदम उठाने का आह्वान किया गया।
- इन सकारात्मक उपायों के बावजूद, ताशकंद समझौते की तरह शिमला समझौता भी कश्मीर पर भारत-पाक विवाद का स्थायी समाधान नहीं कर सका और तनाव कायम रहा।

1999 का कारगिल युद्ध

- **प्रारंभ:** संघर्ष तब शुरू हुआ जब पाकिस्तानी सेना ने नियंत्रण रेखा (LoC) के भारतीय हिस्से पर आक्रमण कर रणनीतिक स्थानों पर नियंत्रण कर लिया।
- **परिणाम:** जवाबी हमले के माध्यम से भारत ने इन क्षेत्रों पर पुनः नियंत्रण प्राप्त कर लिया तथा पाकिस्तानी सेना को नियंत्रण रेखा पर उनकी मूल स्थिति में वापस धकेल दिया।

युद्ध का प्रभाव

- **परमाणु परीक्षण के बाद पहला युद्ध:** यह भारत और पाकिस्तान के बीच पहला बड़ा संघर्ष था, जब दोनों देशों ने परमाणु हथियारों का परीक्षण किया था।
- **वैश्विक भागीदारी:** युद्ध ने परमाणु हमले के जोखिम को रेखांकित किया, जिससे वैश्विक शक्तियों का हस्तक्षेप हुआ। विशेष रूप से, संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने पाकिस्तान पर पीछे हटने का दबाव बनाया।

वर्तमान स्थिति

- **चल रहे संघर्ष:** 21वीं सदी में कई संघर्ष हुए हैं, जो अक्सर पाकिस्तान द्वारा उकसाए गए छद्म युद्धों के रूप में होते हैं। इनमें से एक उल्लेखनीय घटना 2019 में पुलवामा में हुआ आतंकवादी हमला है, जिसमें सीआरपीएफ के 40 जवान शहीद हो गए थे।
- **शांति की दिशा में प्रयास:** फरवरी 2021 में, भारत और पाकिस्तान ने कई वर्षों में पहली बार एक संयुक्त बयान जारी किया, जिसमें घोषणा की गई कि वे नियंत्रण रेखा पर 2003 के युद्धविराम समझौते को कायम रखेंगे।

भारत की नीति

अंतरराष्ट्रीय अलगाव: भारत पाकिस्तान को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अलग-थलग करने के अपने प्रयासों में लगातार लगा हुआ है। सीमा पार आतंकवाद को समर्थन देने में पाकिस्तान की कथित भूमिका को उजागर करते हुए, भारत ने लगातार पाकिस्तान के लिए अंतरराष्ट्रीय समर्थन को खत्म करने का काम किया है और उसे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय ब्लैकलिस्ट में डालने के लिए दबाव डाला है।

आतंक और वार्ता एक साथ संभव नहीं: भारत ने इस बात पर कड़ा रुख अपनाया है कि जब तक पाकिस्तान अपने क्षेत्र का इस्तेमाल भारत के खिलाफ आतंकवादी गतिविधियों के लिए करने की अनुमति देता रहेगा, तब तक रचनात्मक बातचीत नहीं हो सकती। इस नीति ने हाल के वर्षों में भारत-पाकिस्तान संबंधों की दिशा को काफी हद तक निर्देशित किया है।

21वीं सदी में भारत और पाकिस्तान के बीच लगातार संघर्ष देखने को मिले हैं, जो अक्सर पाकिस्तान द्वारा उकसाए जाते हैं और छद्म रूप से अंजाम दिए जाते हैं, जैसे कि **2019 में पुलवामा आतंकवादी हमला, जिसके परिणामस्वरूप 40 सीआरपीएफ जवान शहीद हो गए थे**। इन शत्रुताओं के बीच, शांति की दिशा में प्रयास भी हुए हैं। उल्लेखनीय है कि **फरवरी 2021 में, भारत और पाकिस्तान ने नियंत्रण रेखा (एलओसी) पर 2003 के संघर्ष विराम समझौते को बरकरार**

रखने के लिए एक संयुक्त बयान जारी किया था। हालांकि, भारत सीमा पार आतंकवाद के लिए उसके कथित समर्थन के कारण पाकिस्तान को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अलग-थलग करने की अपनी नीति पर कायम है। इसके अतिरिक्त, भारत का रुख दृढ़ है कि सार्थक बातचीत और आतंकवादी गतिविधियाँ एक साथ नहीं चल सकतीं, जो भारत-पाक संबंधों की गतिशीलता को आकार देती हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

अंतर्राष्ट्रीय अलगाव, आतंक और वार्ता एक साथ नहीं चल सकते, नियंत्रण रेखा, ताशकंद समझौता, शिमला समझौता, पुलवामा आतंकवादी हमला।

चीन

- **प्रारंभिक मैत्री नीति:** यह जानते हुए भी कि शक्तिशाली चीन संभावित रूप से विस्तारवादी हो सकता है, भारत ने पाकिस्तान और चीन दोनों के साथ दो मोर्चों पर युद्ध से बचने के लिए मैत्री नीति अपनाने का विकल्प चुना।
- **पारस्परिक मान्यता:** 1 अप्रैल 1950 को भारत चीन के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने वाला पहला गैर-समाजवादी देश बन गया और 1954 में भारत ने पंचशील समझौते के तहत तिब्बत पर चीन की संप्रभुता को स्वीकार कर लिया।
- **तनाव:** 1959 में भारत द्वारा दलाई लामा को शरण दिए जाने से सीमा पर झड़पें शुरू हो गईं और दोनों देशों के बीच तनाव बढ़ गया।

1962 का चीन का आक्रमण

- **प्रारंभ:** संघर्ष की शुरुआत सितंबर 1962 में थगला रिज पर चीनी हमले से हुई, जिसके बाद अक्टूबर में उत्तर-पूर्व सीमांत एजेंसी (नेफा) क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण सैन्य घुसपैठ हुई।
- **परिणाम:** कई भारतीय चौकियों पर कब्जा करने के बाद चीनी सेना ने एकतरफा वापसी की घोषणा कर दी।

युद्ध का प्रभाव

- **राष्ट्रीय गौरव:** इस संघर्ष ने भारत के राष्ट्रीय गौरव को गहरा आघात पहुँचाया तथा इसके गंभीर राजनीतिक परिणाम हुए।
- **विदेश नीति:** 1962 के युद्ध ने भारत की गुटनिरपेक्ष नीति की सीमाओं को भी उजागर कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप पश्चिमी शक्तियों, विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ घनिष्ठ संबंधों की ओर पुनः झुकाव हुआ।

वर्तमान स्थिति

- **चल रहे विवाद:** सुलह के प्रयासों के बावजूद, भारत और चीन के बीच संबंध क्षेत्रीय विवादों के कारण तनावपूर्ण बने हुए हैं, जैसे कि गलवान घाटी में चल रहा गतिरोध।

भारत और चीन के मध्य वर्तमान मुद्दे

- **सुरक्षा चिंताएं:** चीन के नेतृत्व वाली बेल्ट एंड रोड पहल, विशेष रूप से चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सीपीईसी), जो पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर से होकर गुजरता है, तथा हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन की बढ़ती आक्रामकता को भारत प्रमुख सुरक्षा चिंता के रूप में देखता है।
- **डोकलाम गतिरोध:** 2017 में डोकलाम गतिरोध चीन द्वारा उस क्षेत्र में सड़क निर्माण के कारण शुरू हुआ था जिस पर चीन और भारत के करीबी सहयोगी भूटान दोनों दावा करते हैं। इससे तनाव और बढ़ गया है।
- **गलवान घाटी संघर्ष:** विवादित अक्साई चिन क्षेत्र के हिस्से गलवान घाटी में 2020 की झड़प में चार दशकों से अधिक समय में भारत-चीन सीमा संघर्ष में पहली सैन्य हताहत हुई, जिससे तनाव बढ़ गया।

प्रमुख शब्दावलियाँ

डोकलाम गतिरोध, बीआरआई, पंचशील समझौता, गलवान घाटी संघर्ष, उत्तर-पूर्व सीमांत एजेंसी

श्रीलंका

- **तमिल मुद्दा:** भारत-श्रीलंका संबंधों का मुख्य केन्द्र बिन्दु श्रीलंकाई तमिलों का मुद्दा रहा है।
- **तमिल पलायन:** संघर्ष 1983 में बढ़ गया जब लिबरेशन टाइगर्स ऑफ़ तमिल ईलम (LTTE) के विरुद्ध श्रीलंका सरकार द्वारा किये गए कठोर दमन के बाद हजारों तमिलों ने भारत के तमिलनाडु में शरण ली।
- **राजीव गांधी-जयवर्धने समझौता:** 1987 में, इस समझौते में तमिलों के लिए पर्याप्त स्वायत्तता के साथ एक प्रांत का वादा किया गया था, लेकिन लिट्टे के साथ परामर्श की कमी के कारण भारतीय सेना और तमिल छापामारों के बीच हिंसक झड़पें हुईं।

ऑपरेशन पवन (1987-1990)

यह कोड नाम **भारतीय शांति सेना (IPKF)** के उस मिशन को दिया गया था, जिसका उद्देश्य भारत-श्रीलंका समझौते के तहत **लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम (LTTE)** से जाफना प्रायद्वीप पर नियंत्रण प्राप्त करना था। इसका उद्देश्य शांति स्थापित करना और समझौते के क्रियान्वयन के लिए माहौल बनाना था। हालांकि, इसकी वजह से **LTTE के साथ हिंसक टकराव हुआ, जिसने भारत-श्रीलंका संबंधों में एक महत्त्वपूर्ण मोड़** ला दिया।

परिणाम

- **समर्थन में कमी:** 1991 में लिट्टे के एक आत्मघाती हमलावर द्वारा राजीव गांधी की हत्या के बाद तमिलनाडु में श्री लंकाई तमिलों विशेषकर लिट्टे के प्रति समर्थन कम हो गया।
- **लिट्टे की हार:** लिट्टे को अंततः 2009 में पराजित कर दिया गया, जिससे श्रीलंका के इतिहास के एक लंबे और हिंसक अध्याय का अंत हो गया।

वर्तमान स्थिति

- **वर्तमान चुनौतियाँ:** वर्तमान भारत-श्रीलंका संबंध कई मुद्दों से प्रभावित हैं, जिनमें श्रीलंका में चीन का प्रभाव, मछुआरों से संबंधित विवाद और श्रीलंका के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद का प्रस्ताव शामिल हैं।

हालिया घटनाक्रम

- श्रीलंका के त्रिंकोमाली जिले में आर्थिक विकास परियोजनाएँ
- नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग।
- श्रीलंका में एकीकृत भुगतान इंटरफ़ेस (UPI) आवेदन स्वीकृति।

- सैमपुर सौर ऊर्जा परियोजना के लिए ऊर्जा परमिट।
- भारत ने आर्थिक पुनर्गठन के लिए अनुदान प्रदान करके और IMF सौदों का समर्थन करके श्रीलंका को ऋण संकट में मदद की।
- कच्चाथीवु द्वीप खबरों में: कच्चाथीवु एक निर्जन द्वीप है जो 1974 तक विवादित रहा जब श्रीलंका और भारत ने इसे पूर्व के क्षेत्र के रूप में मान्यता दी।

प्रमुख शब्दावलियाँ

सैमपुर सौर ऊर्जा परियोजना, कच्चातीवु द्वीप, ऑपरेशन पवन, लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम, भारतीय शांति सेना, ऋण संकट।

भारत की विदेश नीति का विकास

भारत की विदेश नीति वैश्विक राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था में बदलाव के अनुसार विकसित हुई है, और इसे तीन प्रमुख चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

चरण 1: 1947 से 1991: गुटनिरपेक्षता

- विश्व युद्धों के बाद, वैश्विक राजनीति मुख्य रूप से दो महाशक्तियों के बीच विभाजित थी: यूएसए और यूएसएसआर। द्वितीय विश्व युद्ध के विजयी सहयोगियों के नेतृत्व में संयुक्त राष्ट्र के निर्माण ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और कूटनीति में एक नए युग की शुरुआत की। वैश्विक आर्थिक प्रणाली मुख्य रूप से विश्व बैंक और आईएमएफ जैसे ब्रेटन वुड्स संस्थानों के माध्यम से यूएसए और उसके यूरोपीय सहयोगियों के प्रभाव में थी।
- **गुटनिरपेक्षता:** इस ध्रुवीकृत अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य के जवाब में, भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई, जिसके तहत रणनीतिक रूप से किसी भी महाशक्ति के साथ गठबंधन से परहेज किया गया तथा दोनों खेमों से समर्थन माँगा गया।

चरण 2: 1991 से 2008: बहु-संरेखण

- सोवियत संघ का विघटन और भारत में भुगतान संतुलन का संकट वैश्विक शक्ति संरचनाओं में बदलाव का संकेत था। अमेरिका प्रमुख राजनीतिक, आर्थिक और सैन्य शक्ति के रूप में उभरा, जबकि अन्य क्षेत्रीय शक्तियाँ भी आगे आईं।
- **गुटनिरपेक्षता से बहु-संरेखण की ओर:** इन परिवर्तनों के प्रत्युत्तर में, भारत गुटनिरपेक्षता से बहु-संरेखण की ओर परिवर्तित हो गया, तथा अनेक देशों और शक्ति समूहों के साथ राजनयिक संबंध बनाए रखा।
- **उदारीकरण:** भारत ने आर्थिक उदारीकरण के मार्ग पर कदम बढ़ाया, वैश्वीकरण के लिए खुला रुख अपनाया तथा निकटतम पड़ोसियों के साथ संबंधों पर जोर दिया।

चरण 3: 2008 से वर्तमान समय तक

- अमेरिका में सब-प्राइम संकट के कारण दुनिया भर में आर्थिक मंदी आई, जिसका असर उन्नत और उभरती हुई दोनों अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ा। जबकि अमेरिका ने अपना प्रभुत्व बनाए रखा, वैश्विक प्रभाव का उसका हिस्सा चीन और अन्य उभरती हुई शक्तियों की ओर स्थानांतरित होने लगा। यूरोपीय संघ, आसियान, रूस, जापान, ब्रिक्स आदि जैसे कई प्रभावशाली खिलाड़ियों का उदय तेज हो गया है, जो एक अधिक बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था की ओर बदलाव को दर्शाता है।

आर्थिक कूटनीति पर ध्यान: भारत की विदेश नीति का विस्तार उसके निकटतम पड़ोस से आगे बढ़कर आर्थिक कूटनीति और अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के साथ संबंधों को बढ़ावा देने पर हुआ।

आरंभिक विदेश नीति: 1947-1964

NAM का उदय: NAM का उदय तब हुआ जब वैश्विक परिदृश्य दो विरोधी गुटों में विभाजित हो गया, एक ओर संयुक्त राज्य अमेरिका और उसके पश्चिमी सहयोगी तथा दूसरी ओर सोवियत संघ का नेतृत्व था।

प्रारंभिक चरण के दौरान, नेहरू के अधीन जो स्वतंत्र भारत के विदेश मंत्री भी थे, भारत की विदेशी राजनीति में तीन मूल्य हावी थे। **साम्राज्यवाद विरोधी, फासीवाद विरोधी और समायोजनवादी**।

1964 से 1977 तक विदेश नीति

लाल बहादुर शास्त्री के समय विदेश नीति:

अक्टूबर 1964 में काहिरा घोषणापत्र (NAM) में पुष्टि की गई कि गुटनिरपेक्षता के सिद्धांत विश्व स्तर पर शांति और कल्याण के लिए एक गतिशील शक्ति बन रहे हैं।

सिरीमावो-शास्त्री समझौता

अक्टूबर 1964 में हस्ताक्षरित सिरीमावो-शास्त्री संधि का उद्देश्य सीलोन (श्रीलंका) में राज्यविहीन व्यक्तियों के मुद्दे को हल करना था। इसमें 975,000 व्यक्तियों की पहचान की गई, जिनमें से 525,000 को भारत वापस भेजा जाना था, 300,000 को 15 वर्षों में श्रीलंका की नागरिकता प्रदान की गई, तथा शेष 150,000 का भाग्य भविष्य के निर्णय के लिए छोड़ दिया गया।

इंदिरा गांधी के शासनकाल के दौरान विदेश नीति

भारत-अमेरिका संबंध

निक्सन के कार्यकाल में तनावपूर्ण संबंध एवं (1971) बांग्लादेश मुक्ति युद्ध: निक्सन ने पाकिस्तान का पक्ष लिया, जिसके कारण भारत ने इसकी आलोचना की। निक्सन ने बांग्लादेश संकट में भारत की संलिप्तता के कारण भारत को दी जाने वाली आर्थिक सहायता और रक्षा उपकरणों की आपूर्ति पूरी तरह से बंद करने का आदेश दिया।

भारत-सोवियत संबंध

इंदिरा गांधी के शासन के दौरान भारत-सोवियत संबंध के रणनीतिक महत्त्व थे, विशेष रूप से क्षेत्रीय भूराजनीति के संदर्भ में।

मैत्री संधि और महत्त्वपूर्ण क्षणों में सोवियत समर्थन ने इस साझेदारी को आकार देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1971 में अरब-मुस्लिम राज्यों की दुविधा

भारत-पाक युद्ध का प्रभाव: 1971 के भारत-पाकिस्तान युद्ध ने अरब और मुस्लिम राज्यों को दुविधा में डाल दिया क्योंकि भारत और पाकिस्तान दोनों ही अरबों के मित्रवत थे।

- 1971 के युद्ध में भारत-ईरान संबंध बाधा बने

जनता सरकार के दौरान विदेश नीति

कोई बंदूक नहीं, बल्कि केवल भाईचारा ही समस्याओं का समाधान कर सकता है। अटल बिहारी वाजपेयी ने 1977 में जनता पार्टी की सरकार बनने के तुरंत बाद चीन के साथ कूटनीतिक प्रयास शुरू किए थे। 1979 में अटल बिहारी वाजपेयी ने चीन का दौरा किया और इससे 1962 के युद्ध से उपजे तनाव के बाद संबंधों को सुधारने में मदद मिली।

राजीव गांधी की विदेश नीति

पड़ोस की नीति

राजीव गांधी की विदेश नीति में पड़ोसी देशों के प्रति हमेशा दोहरी नीति अपनाई गई। सबसे पहले, पड़ोसी देशों द्वारा सहायता माँगे जाने पर त्वरित सहायता प्रदान की गई, जिससे भारत के हितों की रक्षा करते हुए एक आश्वस्त भावना पैदा हुई। दूसरा, पड़ोसी देशों और नई दिल्ली के बीच मजबूत संबंधों को बढ़ावा देने के लिए नीतियाँ बनाई गई।

शीत युद्ध और अमेरिकी नियंत्रण रणनीति के संदर्भ में, राजीव गांधी ने भारत-अमेरिका संबंधों को बेहतर बनाने की कोशिश की, उन्होंने सोवियत संघ के सहयोगी के रूप में भारत की धारणा को कम करने की आवश्यकता को पहचाना। जून 1985 में उनकी अमेरिका यात्रा को सहयोग बढ़ाने के लिए एक संभावित उत्प्रेरक माना गया। अमेरिका के संयुक्त सत्र में अपने भाषण के दौरान राजीव ने दोनों देशों के बीच बेहतर समझ को बढ़ावा देने के बारे में आशा व्यक्त की।

1990 के दशक के दौरान विदेश नीतियाँ

पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार की विदेश नीति

पी.वी. नरसिंह राव ने आर्थिक सुधारों की आवश्यकता को पहचाना और पश्चिमी देशों, खासकर संयुक्त राज्य अमेरिका से समर्थन के महत्त्व को समझते हुए, यू.एस.-भारत संबंधों के पुनरुद्धार के लिए आधार तैयार किया। उन्होंने **1992 में इजरायल के साथ पूर्ण राजनयिक संबंध स्थापित किए**, जो किसी भी पिछले प्रधानमंत्री द्वारा किया गया अभूतपूर्व कदम था। साथ ही, उन्होंने ईरान का भी दौरा किया, जो 1979 की इस्लामी क्रांति के बाद किसी भारतीय प्रधानमंत्री की पहली यात्रा थी।

गुजराल सिद्धांत

विदेश मंत्री के रूप में गुजराल के दूसरे कार्यकाल के दौरान, उन्होंने भारत के पड़ोसियों के प्रति अपना दृष्टिकोण तैयार किया, जिसे बाद में गुजराल सिद्धांत के रूप में जाना गया और इसमें पाँच बुनियादी सिद्धांत शामिल थे।

इंडिया शाइनिंग: 1991-2003

नीति में बदलाव ('लुक ईस्ट' अथवा 'पूर्व की ओर देखो नीति' और आसियान) भारत सरकार की पूर्व की ओर देखो नीति ने देश के वैश्विक दृष्टिकोण में रणनीतिक बदलाव का संकेत दिया। इसे प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव (1991-1996) की सरकार के दौरान तैयार कर , कानून बनाया गया था और अटल बिहारी वाजपेयी प्रशासन (1998-2004) द्वारा इसे सख्ती से लागू किया गया था।

स्थापित नीतियों का पुनरुत्थान: 2004-2014

पड़ोस प्रथम नीति (Neighbourhood First Policy): पड़ोस प्रथम नीति की अवधारणा 2008 में अस्तित्व में आई। इसे अफगानिस्तान, बांग्लादेश, मालदीव, म्याँमार, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका जैसे कुछ प्राथमिकता वाले देशों के साथ संबंधों को मजबूत करने के लिए तैयार किया गया था। 2006 में ब्राज़ील, रूस, भारत और चीन ने मिलकर "ब्रिक" समूह बनाया। 2010 में दक्षिण अफ्रीका भी इसमें शामिल हुआ, जिससे यह "ब्रिक्स" बन गया। इस समूह का उद्देश्य दुनिया के सबसे महत्त्वपूर्ण विकासशील देशों को एक साथ लाना था, ताकि उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के अमीर देशों की राजनीतिक और आर्थिक शक्ति को चुनौती दी जा सके।

नया भारत: 2014 और उसके बाद

2014 के बाद भारत की विदेश नीति और कूटनीति, अपने वैश्विक और क्षेत्रीय प्रभाव को बढ़ाने के साथ-साथ बदलती अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में उभरती चुनौतियों और अवसरों का समाधान करने के लिए एक सक्रिय और व्यावहारिक दृष्टिकोण की विशेषता रही है।

देश ने एक्ट ईस्ट पॉलिसी, QUAD, I2U2 जैसी पहलों और 2018 अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन शिखर सम्मेलन और G20 शिखर सम्मेलन जैसे अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों की सफल मेजबानी के माध्यम से भारत के वैश्विक कद को बढ़ाने पर फिर से ध्यान केंद्रित किया। चुनौतियों का सामना करने के बावजूद, प्रगति हासिल करने के लिए भारत की लचीलापन और दृढ़ संकल्प स्पष्ट है। जैसा कि भारत एक अग्रणी वैश्विक शक्ति बनने की दिशा में अपनी यात्रा जारी रखता है, इस दशक के विकास देश की क्षमता और भविष्य के लिए वादे के प्रमाण के रूप में कार्य करते हैं।

सामरिक स्वायत्तता और भू-राजनीतिक जुड़ाव

- **सामरिक स्वायत्तता:** भारत अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सामरिक स्वायत्तता की अपनी नीति को बनाए रखना चाहता है, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि वह किसी एक प्रमुख शक्ति के साथ अत्यधिक संबद्ध या निर्भर न हो जाए।
- **एक्ट ईस्ट नीति:** भारत की विदेश नीति में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव 'लुक ईस्ट' नीति थी, जिसे बाद में 'एक्ट ईस्ट' नीति में परिवर्तित किया गया, जो आर्थिक और रणनीतिक संबंधों को मजबूत करने के लिए दक्षिण पूर्व एशिया और पूर्वी एशिया के प्रति अधिक सक्रिय और संलग्न दृष्टिकोण को दर्शाता है।
- **भू-राजनीति में सक्रिय भूमिका:** भारत ने भू-राजनीतिक मंचों जैसे इंडो-पैसिफिक और क्वाड (चतुर्भुज सुरक्षा वार्ता) में सक्रिय भूमिका निभाई है, जिसमें अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया शामिल हैं। यह नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था और इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में नौवहन और उड़ान की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए भारत की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

वर्तमान स्थिति: 2019 रायसीना डायलॉग में **विदेश सचिव विजय गोखले ने कहा कि भारत अपने गुटनिरपेक्ष अतीत से आगे बढ़ चुका है** और मुद्दा-आधारित गठबंधनों पर एक 'संरेखित' राष्ट्र बन गया है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

एक्ट ईस्ट नीति, विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र, पड़ोसी प्रथम नीति, ब्रेटन वुड्स संस्थान, बहु-संरेखण, रायसीना वार्ता, द्विध्रुवीयता, रणनीतिक स्वायत्तता, नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था, बहुध्रुवीय विश्व, चतुर्भुज सुरक्षा वार्ता, संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद।

4 स्वतंत्र भारत के बाद की भारतीय अर्थव्यवस्था

ब्रिटिश काल के दौरान, "भारत ब्रिटिश ताज का सबसे चमकीला रत्न था।" एंगस मैडिसन के अनुसार, विश्व सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में भारत का हिस्सा 1700 ई. के 24.4% से गिरकर 1950 ई. में 4.2% हो गया।

स्वतंत्र भारत की अभिलाषा

"किसी भी देश के पास, चाहे वह विकसित हो, अल्पविकसित हो या अतिविकसित हो, अपने लोगों के बारे में भारत जितनी जानकारी नहीं है।" - एडवर्ड्स डेमिंग (Edwards Deming)

- **कराची अधिवेशन (1931):** कांग्रेस ने अपने कराची अधिवेशन में स्वतंत्र भारत के लिए बड़े पैमाने के उद्योगों और खनिज संसाधनों, शिपिंग और रेलवे जैसी सेवाओं के विकास और राज्य के स्वामित्व का समर्थन किया।
- **अर्थव्यवस्था पर गांधीजी के विचार:** गांधीजी भी बड़े पैमाने के उद्योगों पर राज्य के नियंत्रण के समर्थक थे। उन्होंने मशीनों द्वारा मानव श्रम के विस्थापन का विरोध किया। नेहरू की तरह ही वे भी ऐसे वैज्ञानिक आविष्कारों के पक्षधर थे जिनसे सभी को लाभ हो।
- **राष्ट्रवादी विचार:** दादाभाई नौरोजी, तिलक, गांधीजी और नेहरू जैसे कई राष्ट्रवादी विदेशी पूंजी को पिछड़ेपन का साधन मानते थे। वे इसे स्वदेशी पूंजी के दमन का साधन मानते थे और इसके भविष्य के विकास को मुश्किल बनाते थे।
- **1944 में, भारत के लिए आर्थिक विकास की योजना:** जिसे बॉम्बे योजना के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय व्यापारिक नेताओं द्वारा तैयार की गई थी। इस योजना में सार्वजनिक क्षेत्र को व्यावसायिक सहायता देने का समर्थन किया गया था और नियोजन को स्वतंत्र पूंजीवाद को बढ़ावा देने के साधन के रूप में देखा गया था।

आर्थिक आधार की स्थापना (1947-1991)

- **मिश्रित अर्थव्यवस्था:** भारतीय नेतृत्व ने संतुलित दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने 1948 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में वर्णित मिश्रित अर्थव्यवस्था की अवधारणा को अपनाया। इस नीति में जे.आर.डी. टाटा और जी.डी. बिड़ला जैसे प्रभावशाली उद्योगपतियों द्वारा बॉम्बे योजना में प्रस्तावित विचारों को प्रतिबिंबित किया गया, जिसमें स्वदेशी उद्योगों की सुरक्षा के लिए राज्य के नियमों द्वारा पूरक एवं सक्षम सार्वजनिक क्षेत्र की वकालत की गई।
- **प्रारंभिक संघर्ष और निर्णय:** स्वतंत्रता के समय, वैश्विक आय में भारत की हिस्सेदारी 1700 ई. के 22.6% से घटकर 1952 ई. में 3.8% रह गई थी। प्रश्न यह था कि क्या संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप की तरह उदार-पूंजीवादी मॉडल अपनाया जाए, या सोवियत संघ की तरह समाजवादी मॉडल अपनाया जाए।
- **योजना आयोग और पहली पंचवर्षीय योजना:** भारत ने सोवियत मॉडल से प्रेरित होकर व्यापक पंचवर्षीय योजनाएँ विकसित करने और उन्हें लागू करने के लिए 1950 में योजना आयोग की स्थापना की। 1951 में शुरू की गई इन योजनाओं में से पहली योजना 'हैरोड-डोमर मॉडल' (Harrod-Domar Model) पर आधारित थी और इसमें 'घरेलू खाद्य उत्पादन में सुधार' और 'आयात निर्भरता को कम करने के लिए कृषि और सिंचाई को प्राथमिकता' दी गई थी।

भारत की आर्थिक बुनियाद पर लेनिन की आर्थिक नीति का प्रभाव

- **नियोजित अर्थव्यवस्था:** भारत में 1950 में योजना आयोग की स्थापना का निर्णय, लेनिन की नियोजित अर्थव्यवस्था की नीति से प्रभावित था। यह आयोग, सोवियत संघ के आर्थिक नियोजन के दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हुए पंचवर्षीय योजनाओं को तैयार करने के लिए जिम्मेदार था।
- **राज्य नियंत्रण:** जिस प्रकार लेनिन ने अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों पर राज्य नियंत्रण की वकालत की थी, उसी प्रकार भारत में 1948 के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में सार्वजनिक क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका के साथ-साथ स्वदेशी उद्योगों की सुरक्षा के लिए विनियमन की बात कही गई थी।
- **संतुलित दृष्टिकोण:** लेनिन की नई आर्थिक नीति की तरह, जिसमें राज्य नियंत्रण के साथ-साथ कुछ हद तक निजी उद्यम को भी अनुमति दी गई थी, भारत ने भी मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल को चुना, इस प्रकार समाजवाद और पूंजीवाद दोनों की विशेषताओं को सम्मिश्रित किया गया।

औद्योगिक नीतियाँ: भारत ने इस चरण के दौरान कई औद्योगिक नीतियाँ बनाईं, जिनमें उद्योगों को उनके रणनीतिक महत्त्व के आधार पर श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया और प्रत्येक में सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की भूमिकाएँ परिभाषित की गईं। इन नीतियों में स्वदेशी या आत्मनिर्भरता की भावना समाहित थी और औद्योगिक विकास को प्रोत्साहन देने की कोशिश की गई थी।

उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (1991 से वर्तमान)

1991 में भारत ने एक नई आर्थिक यात्रा शुरू की, नियंत्रित अर्थव्यवस्था से बाज़ार-उन्मुख अर्थव्यवस्था में संक्रमण किया। यह परिवर्तन **भुगतान संतुलन संकट** से शुरू हुआ, जिसके कारण **उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG)** के रूप में जाने जाने वाले संरचनात्मक सुधार हुए।

- **आर्थिक उदारीकरण:** इसमें निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित करने के लिए आर्थिक गतिविधियों पर राज्य के नियंत्रण को कम करना शामिल था। लाइसेंस राज प्रणाली, जो लाइसेंस और विनियमन के जटिल जाल से जुड़ी थी, को खत्म कर दिया गया, जिससे औद्योगिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ।
- **निजीकरण:** कई उद्योगों पर सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार कम कर दिया गया, और निजी क्षेत्र को निर्णय लेने और संचालन में अधिक स्वायत्तता दी गई। इस परिवर्तन से भारतीय उद्योगों में दक्षता और प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ी।

- **वैश्वीकरण:** भारत ने विदेशी निवेश और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए अपने दरवाजे खोल दिए। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था का वैश्विक बाजारों के साथ अधिक एकीकरण हुआ, जिससे विकास और वृद्धि को बढ़ावा मिला।

भारत के उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) चरण के दौरान उठाए गए कदम:

- **विनियमन-मुक्ति:** सरकार ने कई उद्योगों को विनियमन-मुक्त कर दिया, जिससे नौकरशाही की निगरानी कम हो गई और निजी संस्थाओं को स्वायत्त परिचालन निर्णय लेने की अनुमति मिल गई।
- **लाइसेंस राज का उन्मूलन:** सुरक्षा, रणनीतिक चिंताओं और पर्यावरण संबंधी विचारों से संबंधित 18 उद्योगों को छोड़कर (जिनकी संख्या में उत्तरोत्तर कमी की गई), अन्य सभी उद्योगों को विस्तार या नई उत्पादन सुविधाएँ स्थापित करने के लिए औद्योगिक लाइसेंस प्राप्त करने की आवश्यकता से मुक्त कर दिया गया।
- **मुक्त बाजार मॉडल:** भारत ने मुक्त बाजार मॉडल की ओर कदम बढ़ाया तथा अधिक प्रतिस्पर्धा और औद्योगिक विकास के लिए अपनी पारंपरिक लाइसेंस राज प्रणाली को समाप्त कर दिया।
- **प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI):** भारत ने विदेशी निवेशकों के लिए अपने दरवाजे खोल दिए, जिससे पूंजी और प्रौद्योगिकी का प्रवाह हुआ, जिससे आर्थिक विकास को बढ़ावा मिला।
- **सार्वजनिक क्षेत्र का नियंत्रण:** निजीकरण की ओर बदलाव के बावजूद, कुछ क्षेत्र अपने रणनीतिक महत्त्व के कारण मुख्य रूप से सरकारी नियंत्रण में रहे। इनमें रक्षा, परमाणु ऊर्जा, रेलवे (हालाँकि हाल ही में निजी भागीदारी की अनुमति दी गई है) और अंतरिक्ष और विमानन उद्योग के कुछ क्षेत्र शामिल हैं।

संक्षेप में, स्वतंत्रता के बाद से भारत की आर्थिक यात्रा, रणनीतिक निर्णय लेने, आत्मनिर्भरता के लिए दृढ़ संकल्प और वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ क्रमिक एकीकरण द्वारा चिह्नित की गई है। इसके अनूठे दृष्टिकोण ने काफी वृद्धि और प्रगति प्रदान की है, साथ ही कुछ सबक और चुनौतियाँ भी प्रस्तुत की हैं जो इसके आर्थिक पथ को आकार देना जारी रखती हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI), मुक्त बाजार मॉडल, उदारीकरण-निजीकरण -वैश्वीकरण (LPG), सामरिक महत्त्व, लाइसेंस राज प्रणाली, भुगतान संतुलन संकट, हैरोड-डोमर मॉडल, नई आर्थिक नीति, विऔद्योगीकरण, नियोजित अर्थव्यवस्था, मिश्रित अर्थव्यवस्था, समाजवाद तथा पूँजीवाद।

नेहरू युग की आर्थिक नीति: विश्लेषण और विस्तार

पहली पंचवर्षीय योजना: नेहरू का उद्देश्य भारत को एक औद्योगिक शक्ति के रूप में बदलना था, और इस दिशा में पहला कदम वर्ष 1951 में पंचवर्षीय योजना की शुरुआत थी। इस योजना ने उम्मीदों से बेहतर प्रदर्शन किया, 3.6% की वार्षिक वृद्धि दर हासिल की, जो लक्षित 2.1% से काफी अधिक थी। यह कुछ संशोधनों के साथ हैरोड-डोमर (बचत→निवेश→विकास→बचत) मॉडल पर आधारित था।

- **उद्योग और आयात प्रतिस्थापन:** पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं में उद्योग क्षेत्र में 1951 से 1965 तक 7.1% प्रति वर्ष की चक्रवृद्धि दर से वृद्धि देखी गई। जबकि यह मजबूत वृद्धि प्रशंसनीय है, हमें विकास की गुणवत्ता, औद्योगिक उन्नति में विविधता और इसके परिणामस्वरूप रोजगार सृजन की भी जाँच करनी चाहिए। इसके अलावा, इस अवधि में भारत ने आयात प्रतिस्थापन को लागू किया, जिसका उद्देश्य आत्मनिर्भरता हासिल करना और बाहरी निर्भरता को कम करना था। इस रणनीति ने कुछ उद्योगों के विकास को प्रोत्साहित किया, लेकिन संभव है की इसने अंतरराष्ट्रीय बाजार में अक्षमताओं और प्रतिस्पर्धा की कमी को भी बढ़ावा दिया हो।
- **कृषि क्षेत्र और दूसरी पंचवर्षीय योजना:** भारतीय आबादी का एक बड़ा हिस्सा कृषि में लगा होने के बावजूद, इस क्षेत्र पर कम ध्यान दिया गया, खास तौर पर दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान जब कृषि व्यय लगभग आधा होकर 14% रह गया था। हालाँकि पहली तीन योजनाओं के दौरान इस क्षेत्र में 3% से ज़्यादा की वार्षिक दर से वृद्धि हुई, लेकिन यह प्रश्न विचारणीय है कि अगर इस क्षेत्र के लिए ज़्यादा संसाधन आवंटित किए गए होते तो क्या इसकी विकास दर और भी ज़्यादा हो सकती थी।
- **शिक्षा प्रणाली:** नेहरू युग में अभूतपूर्व आर्थिक और औद्योगिक विकास हुआ। हालाँकि, शिक्षा प्रणाली को उतनी प्राथमिकता नहीं दी गई। इसके दूरगामी परिणाम हुए, क्योंकि एक अविकसित और कमज़ोर शिक्षा प्रणाली कौशल और ज्ञान तक पहुँच को लोकतांत्रिक बनाने में विफल रही, जो सामाजिक गतिशीलता और आर्थिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

योजना आयोग (1950) आर्थिक कार्यक्रम समिति, 1947: नेहरू के नेतृत्व में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति (AICC) ने 1947 में आर्थिक कार्यक्रम समिति (EPC) का गठन किया, जिसने रक्षा, प्रमुख उद्योगों और सार्वजनिक उपयोगिताओं जैसे क्षेत्रों को प्राथमिकता देने की सिफारिश की, जो सार्वजनिक क्षेत्र के अधीन होंगे।

योजना आयोग का गठन, 1950: चेट्टी (Chetty) के बाद वित्त मंत्री जॉन मथाई ने 1949-50 के केंद्रीय बजट के साथ योजना आयोग की घोषणा की। यह पहली बार एकीकृत भारत के लिए वित्तीय योजना का प्रतिनिधित्व करता था, जिसमें सभी रियासतों की अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखा गया था।

पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56): यह **हैरोड-डोमर मॉडल** पर आधारित थी और के.एन. राज द्वारा इसका मसौदा तैयार किया गया था। इस योजना का मुख्य उद्देश्य विभाजन के बाद सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र, कृषि पर था।

- **बाँधों पर ध्यान:** सिंचाई पर ध्यान केंद्रित किया गया जिसके परिणामस्वरूप हीराकुंड और भाखड़ा नांगल जैसे बाँधों का निर्माण किया गया।

दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-61): नेहरू-महालनोबिस मॉडल को दूसरी पंचवर्षीय योजना में बड़े पैमाने पर शामिल किया गया था, यही वजह है कि इसे महालनोबिस योजना के नाम से जाना जाता है। आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए, इस योजना में निवेश वस्तुओं और भारी उद्योगों के त्वरित विकास को प्राथमिकता दी गई।

मुंद्रा घोटाला (Mundhra Scandal): 1956 में स्थापित सरकारी स्वामित्व वाली भारतीय जीवन बीमा निगम (LIC) ने सितंबर 1957 में कानपुर में हरिदास मुंद्रा की निजी फर्म में भारी निवेश किया। इसने संसदीय बहस को जन्म दिया। वित्त मंत्री टी. टी. कृष्णमाचारी और कांग्रेस सरकार को फिरोज गांधी और अन्य लोगों से कठिन सवालों का सामना करना पड़ा। उन्होंने दावा किया कि मुंद्रा के शेयरों का मूल्य अधिक था। दो न्यायिक जांचों ने अनियमितताओं की पुष्टि की और LIC की अपनी 'ब्लू-चिप' नीति का उल्लंघन करने के लिए आलोचना की, जिसके तहत LIC को केवल उच्च प्रतिष्ठा और अच्छे प्रबंधन वाली फर्मों में ही पैसा लगाने के लिए बाध्य किया गया था।

भूमि सुधार और सहकारिता

- **जमींदारी उन्मूलन:** बिचौलियों के उन्मूलन का उद्देश्य किसानों और सरकार के बीच सीधा संबंध स्थापित करना था, जिसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में पूर्व किरायेदार ज़मीन के मालिक बन गए। बिचौलियों के उन्मूलन के परिणामस्वरूप, लगभग 2 करोड़ किरायेदारों के राज्य के साथ सीधे संपर्क में आने का अनुमान है, जिससे वे ज़मीन के मालिक बन गए।
- **किरायेदारी सुधार:** 1950 और 60 के दशक में किरायेदारी सुधारों का उद्देश्य किरायेदारों को कार्यकाल की सुरक्षा प्रदान करना और उचित किराया सुनिश्चित करना था। हालाँकि, ये सुधार सभी राज्यों में समान रूप से सफल नहीं हुए।
- **भूमि स्वामित्व की अधिकतम सीमा:** भूमि स्वामित्व की अधिकतम सीमा की नीति का उद्देश्य न्यायसंगत भूमि वितरण को बढ़ावा देना था, लेकिन उच्च अधिकतम सीमा, बेनामी लेनदेन और कानून में खामियों के कारण इसे महत्त्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ा। राज्यों में इसकी सफलता में बहुत भिन्नता थी, जो अधिक सूक्ष्म कार्यान्वयन रणनीतियों की आवश्यकता को दर्शाता है।
- **सहकारी समितियों की भूमिका:** कृषि उत्पादकता में सुधार, छोटे किसानों को सशक्त बनाने और ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने में कृषि सहकारी समितियों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भविष्य के विकास के लिए उनका योगदान और क्षमता अन्वेषण के योग्य है।

भारत में भूमि सुधार अधिनियम और चुनौतियाँ:

अधिनियम और योजनाएँ:

- **जमींदारी उन्मूलन अधिनियम:** सरकार और कृषकों के बीच बिचौलियों को हटाने के लिए 1950 के दशक के प्रारंभ में विभिन्न राज्यों द्वारा लागू किया गया।
- **किरायेदारी अधिनियम:** 1950 और 60 के दशक में विभिन्न राज्य अधिनियमों ने किरायेदारों के लिए किरायेदारी की सुरक्षा और विनियमित किराए का प्रावधान किया।
- **भूमि हदबंदी अधिनियम:** 1960 के दशक के अंत से 1970 के दशक के प्रारंभ तक लागू किया गया, जिसका उद्देश्य किसी एक इकाई या व्यक्ति के स्वामित्व वाली अधिकतम भूमि को सीमित करना था, तथा अतिरिक्त भूमि को भूमिहीन किसानों में पुनर्वितरित करना था।

भूमि सुधार से संबंधित चुनौतियाँ

- **विविध कार्यान्वयन:** विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों के कारण इन सुधारों का कार्यान्वयन और प्रभाव राज्यों में काफी भिन्न रहा।
- **खामियाँ और अस्पष्टता :** उच्च अधिकतम सीमा, बेनामी लेनदेन (अधिकतम सीमा कानूनों को दरकिनार करने के लिए दूसरों के नाम पर भूमि का स्वामित्व) और कानून में खामियों ने भूमि अधिकतम सीमा अधिनियमों की प्रभावशीलता को कमजोर कर दिया।
- **व्यापक भूमि संबंधी जानकारियों का अभाव:** व्यापक और अद्यतन भूमि संबंधी जानकारियों का अभाव भूमि सुधारों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए एक बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष रूप में, नेहरू युग की आर्थिक नीति और भूमि सुधारों के व्यापक विश्लेषण में भारत के सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य पर उनके प्रभावों को समझने के लिए इन आयामों पर विचार करना चाहिए।

प्रमुख शब्दावलियाँ

आयात प्रतिस्थापन, जमींदारी उन्मूलन अधिनियम, पंचवर्षीय योजना, नेहरूवादी युग, औद्योगिक शक्ति, बिचौलियों का उन्मूलन, काश्तकारी सुधार, भूमि हदबंदी अधिनियम, भूमि जोत की अधिकतम सीमा, उच्च अधिकतम सीमा, बेनामी लेनदेन, व्यापक भूमि अभिलेख, अकुशलता को बढ़ावा, हैरोड-डोमर मॉडल।

भूदान आंदोलन

- भूदान आंदोलन की शुरुआत **1951 में आचार्य विनोबा भावे** ने स्वैच्छिक भूमि पुनर्वितरण के सिद्धांत पर की थी।
- विनोबा भावे ने रचनात्मक कार्यकर्ताओं के एक संघ, सर्वोदय समाज की शुरुआत की।
- विनोबा भावे ने अपने समर्थकों के साथ पदयात्रा कर भूमि मालिकों को **अपनी जमीन का कम से कम 1/6 भाग भूमिहीन लोगों को दान** करने के लिए प्रोत्साहित किया।
- इस आंदोलन का **लक्ष्य 50 मिलियन एकड़ भूमि** एकत्रित करना था, जो कुल कृषि योग्य भूमि का लगभग 1/6 भाग था।
- यह आंदोलन आंध्र प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र के **पोचमपल्ली गाँव** में शुरू हुआ और शुरुआती दौर में इसे **4 मिलियन एकड़** से अधिक भूमि दान के रूप में प्राप्त हुई।
- हालाँकि, कुछ समय बाद आंदोलन की गति धीमी पड़ने लगी और दान की गई अधिकांश भूमि या तो विवादित हो गई या खेती के लिए उपयुक्त नहीं थी।

चुनौतियाँ

- **दान की गई भूमि की गुणवत्ता:** दान की गई अधिकांश भूमि या तो बंजर, अनुपजाऊ थी या खेती के लिए उपयुक्त नहीं थी, जिससे यह भूमिहीन प्राप्तकर्ताओं के लिए कम लाभकारी थी।
- **भूमि विवाद:** दान की गई भूमि के स्वामित्व से संबंधित कई विवाद थे, जिसके परिणामस्वरूप कानूनी संघर्ष हुआ और पुनर्वितरण प्रक्रिया में और देरी हुई।
- **अपूर्ण कार्यान्वयन:** 50 मिलियन एकड़ भूमि एकत्र करने के महान लक्ष्य के बावजूद, आंदोलन प्रारंभिक चरणों में केवल 4 मिलियन एकड़ भूमि ही एकत्र कर सका, और अंततः इसने गति खो दी।

विचारणीय तथ्य

विनोबा भावे को वर्ष 1958 में सामुदायिक नेतृत्व के लिए रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्रदान किया गया था, विनोबा भावे रेमन मैग्सेसे पुरस्कार प्राप्त करने वाले पहले भारतीय थे। इस पुरस्कार को एशिया में नोबेल पुरस्कार के समकक्ष माना जाता है।

उत्तर प्रदेश में ज़मींदार अपनी 'व्यक्तिगत खेती' के तहत ज़मीन रख सकते थे, जिसे अस्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया था और इसमें कई प्रकार के भूमि उपयोगकर्ता शामिल थे, जैसे- मिट्टी जोतने वाला, देखरेख करने वाला, किसी रिश्तेदार के ज़रिए इसकी देखरेख करने वाला। शुरू में, इस बात की कोई सीमा नहीं थी कि वे कितनी ज़मीन को 'व्यक्तिगत खेती' के रूप में दावा कर सकते हैं, भले ही कुमारप्पा समिति ने सिफारिश की थी कि केवल वे ही लोग ऐसा कर सकते हैं जिन्होंने न्यूनतम शारीरिक श्रम किया हो और वास्तविक कृषि कार्यों में भाग लिया हो।

ग्रामदान आंदोलन

- ग्रामदान आंदोलन 1955 में भूदान आंदोलन से विकसित हुआ।
- गांधीजी के इस दर्शन पर आधारित कि गाँव की सारी भूमि भगवान की है, ग्रामदान आंदोलन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि ग्रामदान **गाँव की भूमि सामूहिक रूप से सभी ग्रामीणों** की हो।
- इस आंदोलन को **सबसे अधिक सफलता ओडिशा में मिली**, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ वर्ग भेद पूरी तरह से स्थापित नहीं हुआ था।

चुनौतियाँ

- **कानूनी मान्यता का अभाव:** सामूहिक ग्राम स्वामित्व के विचार को प्रायः कानूनी रूप से मान्यता नहीं दी जाती थी या लागू नहीं किया जाता था, जिससे साझा भूमि स्वामित्व का सिद्धांत कमजोर हो जाता था।
- **सामाजिक प्रतिरोध:** जिन क्षेत्रों में जाति और वर्ग भेद कठोर रूप से परिभाषित थे, वहाँ ग्रामदान की अवधारणा को प्रतिरोध का सामना करना पड़ा, क्योंकि यह स्थापित सामाजिक पदानुक्रम का खंडन करती थी।
- **प्रशासनिक चुनौतियाँ:** सामूहिक स्वामित्व की अवधारणा ने भूमि उपयोग निर्णय लेने और विवाद समाधान के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक चुनौतियाँ उत्पन्न कीं।

भूदान और ग्रामदान आंदोलनों की सफलता का आलोचनात्मक मूल्यांकन

भूमिहीनता पर सीमित प्रभाव: हालाँकि इन आंदोलनों का उद्देश्य भूमिहीनता को संबोधित करना था, लेकिन इस मुद्दे पर उनका समग्र प्रभाव सीमित था। भूदान के माध्यम से प्राप्त भूमि अक्सर बंजर, खंडित या भूमिहीन परिवारों के प्रतिपालन हेतु अपर्याप्त थी।

अल्पकालिक गति: भूदान और ग्रामदान आंदोलनों के लिए शुरुआती उत्साह समय के साथ-साथ कम होता गया। जैसे-जैसे सरकार की नीतियाँ, जैसे भूमि हदबंदी कानून और भूमि सुधार, लागू की गईं; इन स्वैच्छिक आंदोलनों से ध्यान हट गया।

भूमि दान: भूदान आंदोलन ने भूमि दान के मामले में कुछ सफलता हासिल की। हालांकि, भूमिहीन गरीबों के बीच पुनर्वितरित की गई वास्तविक भूमि, दान की गई भूमि से काफी कम थी, जिसके लिए खराब भूमि रिकॉर्ड, कानूनी विवाद और कुछ भूस्वामियों की अनिच्छा जैसे विभिन्न कारक जिम्मेदार थे।

ग्रामदान के मिश्रित परिणाम: ग्रामदान आंदोलन को कुछ क्षेत्रों में कुछ सफलता मिली, जहाँ कई गाँवों ने सामूहिक भूमि स्वामित्व और स्वशासन को अपनाया। हालाँकि, आंशिक रूप से गहरे सामाजिक पदानुक्रम और शक्तिशाली भूस्वामी वर्गों के प्रतिरोध के कारण यह व्यापक स्वीकृति पाने में विफल रहा।

सहकारिता और सामुदायिक विकास कार्यक्रम

- सहकारिता का सुझाव **जे.सी. कुमारप्पा** की कृषि सुधार समिति द्वारा दिया गया था और इसे प्रथम पंचवर्षीय योजना में शामिल किया गया था।
- सरकार ने सेवा सहकारी समितियों को प्राथमिकता दी तथा सहकारी खेती को केवल परिपक्व परिस्थितियों में ही स्वैच्छिक रूप से प्रोत्साहित किया गया।
- इस आंदोलन को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जैसे - भूमि सीमा निर्धारण नियमों को दरकिनार करने के लिए धनी किसानों द्वारा छद्म खेती, धन का दुरुपयोग, राजनीतिकरण और प्रतिभागियों में सच्ची प्रेरणा का अभाव।

भूमि सुधार के प्रथम चरण का आलोचनात्मक विश्लेषण

- **क्षेत्रीय भिन्नताएँ:** भूमि सुधारों की सफलता विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न रही, जिसका मुख्य कारण अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ थे। केरल और पश्चिम बंगाल जैसे कुछ राज्यों ने अन्य की तुलना में सुधारों को अधिक सफलतापूर्वक लागू किया।
- **छोटी जोतों का उदय:** यद्यपि भूमि सुधारों का उद्देश्य भूमि को अधिक समान रूप से वितरित करना था, लेकिन अनजाने में ही इनसे छोटी और खंडित जोतों में वृद्धि हुई, जिससे कृषि उत्पादकता और आय पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा।
- **नियमों से बचना:** कई बड़े भूस्वामियों ने कानून में खामियाँ ढूँढ़ लीं, भूमि हदबंदी नियमों से बचने के लिए अक्सर भूमि को अपने परिवार के सदस्यों को हस्तांतरित कर दिया या भूमि के उपयोग को बदल दिया। उदाहरण के लिए व्यक्तिगत खेती के नियमों का दुरुपयोग।
- **कानूनी प्रक्रिया में देरी:** भूमि विवादों को अदालतों में निपटाने की लंबी प्रक्रिया और जटिल भूमि अभिलेख प्रणाली के कारण अक्सर इच्छित लाभार्थियों को स्वामित्व अधिकारों के वास्तविक हस्तांतरण में देरी होती है।
- **अनुपूरक उपायों का अभाव:** भूमि सुधारों को पर्याप्त समर्थन प्रणालियों, जैसे ऋण, प्रौद्योगिकी और बाजारों तक पहुँच के साथ अनुपूरित नहीं किया गया, जिससे नए भूमि मालिकों के लिए अपनी भूमि की क्षमता को अधिकतम करना चुनौतीपूर्ण हो गया।
- **बढ़ती जनसंख्या का दबाव:** भूमि पर बढ़ती जनसंख्या का दबाव अक्सर भूमि पुनर्वितरण के सकारात्मक प्रभावों को नकार देता है, क्योंकि प्रति व्यक्ति भूमि न्यूनतम बनी हुई है, जिसके कारण ग्रामीण गरीबी लगातार बनी हुई है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

विनियमनों से बचना, सर्वोदय समाज, दान की गई भूमि का स्वामित्व, क्षेत्रीय विविधताएं, साझा भूमि स्वामित्व का सिद्धांत, कृषि सुधार समिति, कानून में खामियां, छोटी और खंडित भूमि जोत, सामाजिक प्रतिरोध, विवाद समाधान, खंडित भूमि जोत।

हरित क्रांति

यह 1960 के दशक के मध्य में कृषि क्षेत्र में शुरू हुए आमूलचूल परिवर्तन की अवधि को दर्शाता है। यह बीजों की उच्च पैदावार वाली किस्मों की शुरूआत, उर्वरकों और कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग, सिंचाई तकनीकों के आधुनिकीकरण और मशीनीकृत कृषि उपकरणों द्वारा चिह्नित किया गया था। इसका प्राथमिक उद्देश्य खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि, आत्मनिर्भरता प्राप्त करना और आयात पर निर्भरता कम करना था। इसके घटक हैं:

1. **बीजों की उच्च उपज देने वाली किस्में (HYV):** हरित क्रांति का मुख्य आधार बीजों की उच्च उपज देने वाली किस्में थीं, खास तौर पर गेहूं और चावल जैसी मुख्य फसलों के लिए। उत्पादकता को बेहतर बनाने के लिए इन बीजों को आनुवंशिक रूप से चुना गया था और इनकी विशेषता थी कि ये छोटी परिपक्वता अवधि और रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोधक क्षमता वाले थे।
2. **रासायनिक उर्वरक:** मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और फसल की पैदावार बढ़ाने के लिए सिंथेटिक उर्वरकों (नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम - NPK) के उपयोग को बढ़ावा दिया गया। ये उर्वरक आवश्यक पोषक तत्त्व प्रदान करते हैं जो अक्सर गहन कृषि पद्धतियों के कारण मिट्टी में समाप्त हो जाते हैं।
3. **कीटनाशक और शाकनाशी:** रासायनिक कीटनाशकों और शाकनाशियों के बढ़ते उपयोग ने कृषि कीटों और खरपतवारों की एक विस्तृत श्रृंखला को नियंत्रित करने में मदद की जो संभावित रूप से फसल की पैदावार को कम कर सकते थे। ये रसायन HYV फसलों के उच्च उत्पादकता स्तर को बनाए रखने के लिए आवश्यक थे।
4. **सिंचाई अवसंरचना:** सिंचाई अवसंरचना का विस्तार और सुधार एक और महत्त्वपूर्ण तत्त्व था। ट्यूबवेल, पंप और नहरों जैसी प्रणालियों के माध्यम से विश्वसनीय जल स्रोतों ने बहु-फसल (एक ही भूमि पर प्रति वर्ष एक से अधिक फसल उगाना) को सक्षम किया और मानसून की बारिश पर निर्भरता कम की।
5. **कृषि मशीनरी:** ट्रैक्टरों, थ्रेशरों और हार्वेस्टरों के उपयोग से कृषि के मशीनीकरण से कृषि कार्य अधिक तेज और कुशल हो गए, जिससे श्रम लागत में काफी कमी आई और खेती योग्य क्षेत्र में वृद्धि हुई।
6. **सरकारी नीतियाँ:** हरित क्रांति में सहायक सरकारी नीतियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इनमें उर्वरकों और मशीनरी जैसे कृषि इनपुट के लिए सब्सिडी, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के माध्यम से फसल की कीमतों की गारंटी और किसानों को नई तकनीकों के बारे में शिक्षित करने के लिए कृषि विश्वविद्यालयों और विस्तार सेवाओं की स्थापना शामिल थी।
7. **ऋण सुविधाएं:** कृषि ऋण तक बेहतर पहुँच ने किसानों को हरित क्रांति प्रथाओं को लागू करने के लिए आवश्यक नई प्रौद्योगिकियों में निवेश करने की अनुमति दी। किसानों को रियायती दरों पर ऋण प्रदान करने के लिए सहकारी समितियों और ग्रामीण बैंकों जैसी संस्थाओं को मजबूत किया गया।

भौगोलिक सीमाएँ:

- **उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र तक सीमित:** हरित क्रांति मुख्य रूप से भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र तक ही सीमित थी, जिसमें पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश शामिल थे।
- **पूर्व बुनियादी ढांचे की आवश्यकता:** इन क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाएँ और बाजारों तक पहुँच जैसी आवश्यक बुनियादी संरचना मौजूद थी, जिससे नई कृषि पद्धतियों और प्रौद्योगिकियों को अपनाने में सुविधा हुई।
- **लाभों का असमान वितरण:** हरित क्रांति के लाभ पूरे देश में समान रूप से वितरित नहीं हुए, जिसके कारण कृषि विकास में क्षेत्रीय असमानताएँ पैदा हुई।

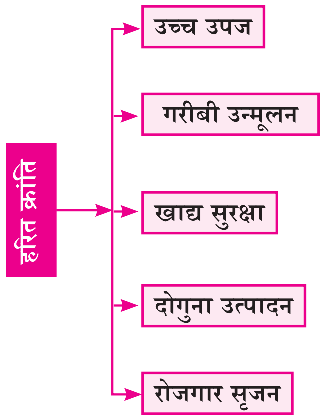

हरित क्रांति 2.0

हरित क्रांति 2.0, जिसे G.R. 2.0 के नाम से भी जाना जाता है, का उद्देश्य पहली हरित क्रांति की सीमाओं को दूर करना और इसके लाभों को वर्षा आधारित और शुष्क भूमि वाले क्षेत्रों, विशेष रूप से पूर्वी भारत तक पहुँचाना है। G.R. 2.0 के मुख्य आयामों में शामिल हैं:

- **जैविक खेती:** प्राकृतिक पदार्थों को बढ़ावा देना, कृत्रिम रसायनों से बचना, तथा जैव विविधता और मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाना।
- **जलवायु स्मार्ट कृषि (CSA):** विकास का समर्थन करने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए कृषि प्रणालियों को बदलना।
- **शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF):** लागत कम करने, जैव विविधता में सुधार करने और जलवायु लचीलापन बढ़ाने के लिए प्राकृतिक आगतों का उपयोग करना।
- **फसलों का विविधीकरण:** बाजरा, दालें और तिलहन जैसी पौष्टिक और लचीली फसलों को बढ़ावा देकर चावल और गेहूं से आगे बढ़ना।
- **मोटे अनाज:** खाद्य सुरक्षा बढ़ाने, मृदा स्वास्थ्य में सुधार लाने और किसानों की आय बढ़ाने के लिए अत्यधिक पौष्टिक और जलवायु-अनुकूल मोटे अनाजों की खेती को पुनर्जीवित करना।
- **प्रौद्योगिकी एकीकरण:** G.R. 2.0 में कृषि उत्पादकता और स्थिरता बढ़ाने के लिए सटीक कृषि, रिमोट सेंसिंग और अन्य प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाना।
- G.R. 2.0 में टिकाऊ कृषि पद्धतियाँ, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और फसलों का विविधीकरण शामिल है, जिसमें वर्षा आधारित और शुष्क भूमि क्षेत्रों, विशेष रूप से पूर्वी भारत में समावेशी और लचीली कृषि पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

सदाबहार क्रांति

- हरित क्रांति के पर्यावरणीय और स्वास्थ्य संबंधी परिणामों को देखते हुए, भारत में हरित क्रांति के जनक के रूप में जाने जाने वाले **डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन** ने सदाबहार क्रांति की आवश्यकता पर बल दिया।
- **संधारणीय कृषि पद्धतियाँ:** हरित क्रांति के विपरीत, जो रासायनिक आगतों पर बहुत अधिक निर्भर थी, सदाबहार क्रांति संधारणीय कृषि पद्धतियों पर जोर देती है जो मृदा स्वास्थ्य, जैव विविधता और प्राकृतिक संसाधन संरक्षण को बढ़ावा देती हैं। इसमें जैविक खेती, कृषि पारिस्थितिकी, संरक्षण कृषि, एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) और सटीक खेती तकनीक जैसी पद्धतियाँ शामिल हैं।

- **फसल विविधीकरण:** सदाबहार क्रांति फसल विविधीकरण को बढ़ावा देती है ताकि एकल फसल से जुड़े जोखिम कम हो सकें और कीटों, बीमारियों और जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन बढ़ सके। किसानों को पोषण विविधता में सुधार करने और सीमित संख्या में फसलों पर निर्भरता कम करने के लिए पारंपरिक और देशी किस्मों सहित विभिन्न प्रकार की फसलों की खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
- **जल संरक्षण और प्रबंधन:** बढ़ती जल कमी और जल संसाधनों के असंवहनीय उपयोग को देखते हुए, सदाबहार क्रांति जल संरक्षण और कुशल जल प्रबंधन प्रथाओं पर जोर देती है। इसमें वर्षा जल संचयन, ड्रिप सिंचाई और कृषि में जल उपयोग को अनुकूलित करने के लिए जल-बचत प्रौद्योगिकियों का उपयोग जैसे उपाय शामिल हैं।
- **जलवायु-स्मार्ट कृषि:** सदाबहार क्रांति जलवायु-स्मार्ट कृषि पद्धतियों को एकीकृत करती है जो किसानों को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को अनुकूलित करने और कम करने में मदद करती है। इसमें जलवायु-लचीली फसल किस्मों, कृषि वानिकी प्रणालियों और ऐसी प्रथाओं को अपनाना शामिल है जो कार्बन पृथक्करण को बढ़ाती हैं और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करती हैं।
- **छोटे किसानों का सशक्तिकरण:** सदाबहार क्रांति छोटे किसानों, विशेष रूप से महिलाओं और उपेक्षित समुदायों को स्थायी कृषि में भाग लेने के लिए सशक्त बनाने के महत्त्व को पहचानती है। यह किसान-केंद्रित दृष्टिकोण, सहभागी अनुसंधान और विस्तार सेवाओं को बढ़ावा देती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कृषि नवाचार स्थानीय संदर्भों के अनुरूप हों और छोटे किसानों की ज़रूरतों को पूरा कर सकें।
- **प्रौद्योगिकी और नवाचार:** संधारणीय प्रथाओं को प्राथमिकता देते हुए, सदाबहार क्रांति उत्पादकता, दक्षता और लचीलेपन में सुधार के लिए कृषि विज्ञान में तकनीकी नवाचारों और प्रगति का भी लाभ उठाती है। इसमें जलवायु-प्रतिरोधी फसल किस्मों, डिजिटल कृषि उपकरणों और सटीक कृषि प्रौद्योगिकियों का विकास शामिल है जो संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करते हैं और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हैं।

हरित क्रांति की खामियां

- **पर्यावरण पर प्रभाव:** रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से मृदा क्षरण, भूजल प्रदूषण और स्वास्थ्य संबंधी खतरे उत्पन्न हुए।
- **स्थानीय किस्मों की उपेक्षा:** अपनी सफलताओं के बावजूद, हरित क्रांति में कुछ कमियाँ भी थीं। उच्च उपज देने वाली किस्मों पर ध्यान केंद्रित करने से स्थानीय किस्मों की उपेक्षा हुई और जैव विविधता का नुकसान हुआ।
- **जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन:** गहन कृषि पद्धतियों के परिणामस्वरूप जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन हुआ, जिससे जल की कमी और पर्यावरण क्षरण हुआ।
- **एकल कृषि की ओर रुझान:** इससे मिट्टी की उर्वरता कम हो रही है और पोषण संबंधी परिणाम भी कम हो रहे हैं।

हरित क्रांति, भारत के कृषि इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुई, जिसने देश को खाद्यान्न की कमी वाले देश से खाद्यान्न-अधिशेष वाले देश में बदल दिया। हालांकि, लंबे समय में कृषि उत्पादकता और ग्रामीण आजीविका को स्थायी रूप से बढ़ाने के लिए इसके पर्यावरणीय और सामाजिक-आर्थिक प्रभावों पर ध्यान देना आवश्यक है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन, बीजों की अधिक उपज देने वाली किस्में, अधिक जल की आवश्यकता वाली फसलें, रसायनों का अत्यधिक उपयोग, मृदा क्षरण, सतत कृषि पद्धतियां, क्षेत्रीय असमानता, जलवायु अनुकूल कृषि, स्वास्थ्य संबंधी खतरे, जैविक खेती, फसल विविधीकरण, शून्य बजट प्राकृतिक खेती, जलवायु अनुकूल कृषि, पर्यावरण क्षरण, प्रौद्योगिकी एकीकरण।

भारत में सहकारिता: एक ऐतिहासिक अवलोकन और नीतिगत परिप्रेक्ष्य

परिचय

- भारत में सहकारी आंदोलन की शुरुआत 1904 में सहकारी ऋण समिति अधिनियम के पारित होने के साथ हुई।
- 1912 के सहकारी समिति अधिनियम ने गैर-ऋण समितियों और सहकारी संघों को शामिल करने के लिए इसके दायरे का विस्तार किया।
- सहकारी क्षेत्र का उद्देश्य आर्थिक शक्ति के संकेन्द्रण को रोकना, उत्पादक पूंजी के स्वामित्व का विस्तार, विकास में नागरिकों की भागीदारी को बढ़ावा देना और गरीबी और बेरोजगारी को मिटाना था।

नीतिगत बदलाव और रणनीतियाँ

- **1949 की कुमारप्पा समिति** ने सुझाव दिया था कि राज्यों को विभिन्न प्रकार की खेती के लिए अलग-अलग स्तर पर सहयोग लागू करने का अधिकार होना चाहिए।
- **प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56)** में सावधानीपूर्वक यह वकालत की गई कि छोटे और मध्यम आकार के खेतों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए तथा सहकारी कृषि समितियाँ बनाने में सहायता प्रदान की जानी चाहिए।
- **दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-61)** में सहकारी खेती के लिए आधार तैयार करने पर ध्यान केंद्रित किया गया तथा इसका उद्देश्य दस वर्षों में कृषि भूमि के एक बड़े हिस्से को सहकारी खेती के अंतर्गत लाना था।
- **1959 में कांग्रेस पार्टी के नागपुर प्रस्ताव** में सहकारी खेती पर आधारित भावी कृषि संरचना की परिकल्पना की गई थी, जिसे तीन वर्षों के भीतर हासिल किया जाना था।
- **तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-66)** में इस महत्त्वाकांक्षा को कम किया गया और प्रत्येक राज्य में सहकारी खेती के लिए दस पायलट परियोजनाएँ प्रस्तावित की गईं, जिनमें सहकारी खेती को सामान्य कृषि प्रयासों के साथ एकीकृत किया गया तथा ऋण, विपणन, वितरण और प्रसंस्करण में प्रगति की गई।

अमूल (AMUL) की सफलता की कहानी

- अमूल ने भारत में डेयरी सहकारी आंदोलन की शुरुआत की और गुजरात सहकारी दुग्ध विपणन संघ लिमिटेड (GCMMF) नामक शीर्ष सहकारी संगठन का गठन किया, जिसका संयुक्त स्वामित्व गुजरात के लगभग 2.2 मिलियन दुग्ध उत्पादकों के पास है।
- डॉ. वर्गीस कुरियन द्वारा स्थापित इस संगठन ने डेयरी उद्योग में क्रांति ला दी, जिससे 'श्वेत क्रांति' हुई और भारत दुनिया के सबसे बड़े दुग्ध उत्पादकों में से एक बन गया।

अमूल का प्रभाव

- **महिला सशक्तिकरण:** SEWA जैसे गैर सरकारी संगठनों के सहयोग से AMUL के ऑपरेशन फ्लड से महिला सशक्तिकरण को काफी बढ़ावा मिला।
- **स्पिलओवर प्रभाव:** ऑपरेशन फ्लड से अन्य सहकारी समितियों को भी लाभ हुआ, जिससे फल और सब्जी उत्पादकों, तिलहन उत्पादकों, छोटे पैमाने पर नमक उत्पादकों और वृक्ष उत्पादकों के लिए सफल सहकारी समितियों का गठन हुआ।
- **रोजगार सृजन:** अमूल के विकास ने दूध संग्रह, प्रसंस्करण, वितरण और विपणन सहित डेयरी मूल्य श्रृंखला में रोजगार के अवसर पैदा किए हैं। अमूल की सहकारी समितियों और संबद्ध व्यवसायों सहित डेयरी उद्योग लाखों लोगों को आजीविका प्रदान करता है, ग्रामीण विकास और आर्थिक विकास में योगदान देता है।
- **खाद्य सुरक्षा और पोषण:** दूध, मक्खन, पनीर और दही सहित अमूल के डेयरी उत्पाद लाखों भारतीयों के आहार का मुख्य हिस्सा बन गए हैं, जो आवश्यक पोषक तत्त्व प्रदान करते हैं और खाद्य सुरक्षा और पोषण में योगदान करते हैं। किफायती और पौष्टिक डेयरी उत्पादों की उपलब्धता ने कुपोषण से निपटने में मदद की है, विशेष रूप से बच्चों और कमजोर आबादी के बीच।

भारत में सहकारी आंदोलन का विश्लेषण

- अपनी सफलताओं के बावजूद, सहकारी समितियों को महत्त्वपूर्ण चुनौतियों और आलोचनाओं का सामना करना पड़ा।
- SEWA सहकारी समितियों ने कृषि सहकारी समितियों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन किया, लेकिन पाया गया कि वे जाति-आधारित पदानुक्रमिक प्रणाली को मजबूत करती हैं।
- सहकारी समितियों का नेतृत्व अक्सर व्यापारिक और धन-उधार देने वाले समुदायों से आता था, जिससे व्यापक भागीदारी सीमित हो जाती थी।
- 1971 में राष्ट्रीय कृषि आयोग द्वारा पाया गया कि ऋण सहकारी समितियों के माध्यम से ऋण प्राप्त करने से भूमिहीनों को काफी हद तक बाहर रखा गया था।
- ऋण चूक की उच्च दर ऋण सहकारी समितियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा थी, जिसमें गरीब और छोटे किसानों की तुलना में धनी भूमि मालिकों के दिवालिया होने की अधिक संभावना थी।

आगे की राह

- **बेहतर प्रशासन और अधिक समावेशी नीतियां:** इन चुनौतियों पर काबू पाने के लिए सहकारी समितियों को बेहतर प्रशासन और अधिक समावेशी नीतियों की आवश्यकता है।
- **सहकारी कानूनों का आधुनिकीकरण:** जैसे कानूनी और नियामक सुधार, ताकि उन्हें सहकारी क्षेत्र की आवश्यकताओं के प्रति अधिक संवेदनशील बनाया जा सके और उन्हें समकालीन आर्थिक वास्तविकताओं के साथ संरेखित किया जा सके।
- **विनियामक ढाँचे को सरल बनाना:** नौकरशाही बाधाओं को कम करने और सहकारी समितियों के लिए व्यापार करने में आसानी को बढ़ावा देने के लिए विनियामक प्रक्रियाओं को सरल और कारगर बनाना।
- **व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रम** विकसित करना और सहकारी सदस्यों की वित्तीय साक्षरता को बढ़ाना बेहतर वित्तीय प्रबंधन की ओर ले जा सकता है।
- **आधुनिक व्यावसायिक अभ्यास और प्रौद्योगिकियाँ:** सहकारी समितियों को अपनी प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के लिए आधुनिक व्यावसायिक अभ्यास और प्रौद्योगिकियाँ अपनाने की आवश्यकता है।
- **युवाओं को प्रोत्साहित करना:** युवा लोगों और महिलाओं को सहकारी समितियों में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान किए जाने चाहिए।
- **सहकारी समितियों के बुनियादी ढाँचे और सेवाओं** को बेहतर बनाने के लिए सार्वजनिक-निजी भागीदारी की संभावनाएँ तलाशी जा सकती हैं।

सहकारी आंदोलन, अपनी सीमाओं के बावजूद, भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास में योगदान करने की महत्त्वपूर्ण क्षमता रखता है। सही रणनीतियों और सहायक नीति उपायों के साथ, सहकारी समितियाँ वास्तव में अधिक समावेशी और टिकाऊ अर्थव्यवस्था बनाने का एक साधन बन सकती हैं।

प्रमुख शब्दावलियाँ

सार्वजनिक-निजी भागीदारी, नियामक ढाँचा, सहकारी ऋण समिति अधिनियम, खाद्य सुरक्षा और पोषण, गैर-ऋण समितियां, नागपुर संकल्प, समावेशी नीतियां, गुजरात सहकारी दूध विपणन संघ लिमिटेड (GCMMF), स्पिलओवर प्रभाव, श्वेत क्रांति, अमूल का ऑपरेशन फ्लड, राष्ट्रीय कृषि आयोग, कुमारप्पा समिति।

1965-1991 तक भारतीय अर्थव्यवस्था: अवलोकन और विश्लेषण

चरण 1: आर्थिक संकट की शुरुआत (1965-1980)

संदर्भ: 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद, प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने भारत का आर्थिक ध्यान कृषि, निजी उद्यम, विदेशी निवेश की ओर स्थानांतरित कर दिया और योजना आयोग की भूमिका में कटौती कर दी।

प्रमुख आर्थिक मुद्दे एवं नीतियाँ

- 1965 और 1966 में लगातार मानसून की विफलता के कारण भारत को कृषि संकट का सामना करना पड़ा।
- दो युद्धों (1962 में चीन के साथ, 1965 में पाकिस्तान के साथ) के कारण रक्षा व्यय में भारी वृद्धि हुई तथा 1966-67 तक संचयी राजकोषीय घाटा सकल घरेलू उत्पाद का 7.3% हो गया।
- भुगतान संतुलन और भी कमजोर हो गया, 1964-65 में विदेशी मुद्रा भंडार दो महीने से भी कम के आयात को कवर कर सका।

इन मुद्दों से निपटने के लिए प्रमुख आर्थिक नीतियाँ लागू की गईं:

- **राष्ट्रीयकरण:** 1969 में 14 प्रमुख निजी वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण, इसके बाद 1972 में बीमा क्षेत्र का राष्ट्रीयकरण, 1973 में कोयला उद्योग का राष्ट्रीयकरण।
- बड़े व्यापारिक घरानों की गतिविधियों को सीमित करने के लिए 1969 में **एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम (MRTP)** की शुरूआत।
- भारत में विदेशी निवेश और विदेशी कंपनियों के संचालन को विनियमित करने के लिए 1973 में **विदेशी मुद्रा और विनियमन अधिनियम (FERA)** का अधिनियमन।

प्रभाव और विश्लेषण

- बैंकों के राष्ट्रीयकरण से कृषि ऋण और अन्य प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण देने में वृद्धि हुई, तथा वित्तीय बचत में वृद्धि हुई। हालांकि, इसने राजनीतिक रूप से प्रभावित ऋण निर्णयों और क्रोनी पूंजीवाद को भी जन्म दिया।
- **भुगतान संतुलन संकट** से निपटने के लिए, 1966 में भारतीय रुपये का 57% अवमूल्यन किया गया, जिसका उद्देश्य निर्यात बढ़ाना था, लेकिन इसके बजाय मुद्रास्फीति में तेजी आई।

चरण 2: उच्च वृद्धि (1980-1991)

संदर्भ: प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण प्राप्त करने के लिए महत्त्वपूर्ण आर्थिक सुधारों की शुरुआत की।

प्रमुख आर्थिक नीतियाँ

- **छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85)** के तहत, सरकार ने मूल्य नियंत्रण हटा दिया, राजकोषीय सुधार शुरू किए, सार्वजनिक क्षेत्र का पुनरुद्धार किया, आयात शुल्क कम किया और घरेलू उद्योग को नियंत्रण मुक्त किया।
- **राजीव गांधी सरकार (1984-89)** ने लाइसेंसिंग में ढील, आयात प्रतिबंधों में कमी, निर्यात प्रोत्साहन की शुरूआत, MRTP परिसंपत्ति सीमा में संशोधन और पूंजी बाजारों में ढील जैसे सुधार पेश किए।
- इन सुधारों के परिणामस्वरूप 1980 के दशक में 5.5% से अधिक की वृद्धि दर हुई, जो पिछले तीन दशकों में अनुभव की गई 3.5% की वृद्धि दर (जिसे "हिंदू विकास दर" कहा जाता है) से अधिक थी।

प्रभाव और विश्लेषण

- उच्च विकास दर के बावजूद, ये सुधार नियंत्रण से **मौलिक बदलाव के बजाय शिथिलता** का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- **दीर्घकालिक संरचनात्मक कमजोरियाँ:** जिनमें व्यापक औद्योगिक नियंत्रण, लाइसेंस राज, बैंकों और अन्य उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, तथा अंतर्मुखी व्यापार नीति शामिल हैं, बनी रहीं।
- निर्यात की तुलना में आयात के उच्च स्तर के कारण 1980 के दशक के अंत तक व्यापार घाटा काफी बढ़ गया तथा अल्पकालिक उधार पर निर्भरता बढ़ गई।
- 1990-91 तक भारत उच्च राजकोषीय घाटे (8.4%), पर्याप्त चालू खाता घाटा (3.1%), उच्च मुद्रास्फीति (17%), तथा पर्याप्त विदेशी ऋण से जूझ रहा था, जिससे भुगतान संतुलन (BoP) पर दबाव पड़ रहा था।
- भारत के आर्थिक इतिहास में इस अवधि ने 1991 में आने वाले आर्थिक उदारीकरण के लिए मंच तैयार किया, जिसमें दशकों से चली आ रही संरचनात्मक समस्याओं को संबोधित किया गया। हालाँकि, यह एक विकासशील अर्थव्यवस्था के प्रबंधन और आर्थिक विकास, स्थिरता और सामाजिक समानता की ज़रूरतों को संतुलित करने से जुड़ी चुनौतियों को भी उजागर करता है।

हिंदू वृद्धि दर

"हिंदू विकास दर" शब्द को भारतीय अर्थशास्त्री राज कृष्ण द्वारा वर्ष 1990 के उदारीकरण के काल से पहले, 1950 से 1980 के दशक तक **नियोजित आर्थिक विकास की अवधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था की धीमी, लगभग 3.5% वार्षिक विकास दर** का वर्णन करने के लिए गढ़ा गया था।

यह शब्द हिंदू जीवन शैली से जुड़ी आर्थिक वृद्धि और विकास की धीमी दर की रूढ़िवादी धारणा को दर्शाता है।

हालांकि, यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि इस शब्द को स्वयं ही अपमानजनक और भ्रामक माना जाता है, क्योंकि यह न तो हिंदू धर्म के किसी अंतर्निहित पहलू को दर्शाता है और न ही उस काल के दौरान भारत की जटिल सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता को दर्शाता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

"हिंदू विकास दर", संरचनात्मक कमज़ोरियाँ, राष्ट्रीयकरण, एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम, सामाजिक समानता। उच्च मुद्रास्फीति, भुगतान संतुलन संकट, विदेशी ऋण, हिंदू विकास दर, नियोजित आर्थिक विकास, विदेशी मुद्रा और विनियमन अधिनियम, योजना आयोग।

सुधारवादी युग - 1991 के बाद

1991 के आर्थिक संकट ने भारत की आर्थिक नीति में एक बड़ा बदलाव किया। इस संकट के तीन महत्त्वपूर्ण कारक थे: उच्च अल्पकालिक ऋण, चलायमान मुद्रा (वह मुद्रा जो वित्तीय बाजारों के बीच तीव्र और नियमित रूप से प्रचलन में है) की तेजी से निकासी, और विदेशी मुद्रा भंडार में भारी कमी। प्रतिक्रिया के रूप में, भारत ने विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) से 7 बिलियन डॉलर का ऋण माँगा, जिसके कारण भारतीय अर्थव्यवस्था को उदार बनाने के उद्देश्य से नई आर्थिक नीति की शुरुआत हुई।

स्थिरीकरण और संरचनात्मक सुधार के उपाय

अल्पकालिक आर्थिक स्थिरता और सुधार सुनिश्चित करने के लिए स्थिरीकरण उपाय किए गए, और उनमें शामिल थे:

- राजकोषीय घाटे में कमी
- भारतीय रुपए का अवमूल्यन
- मौद्रिक और ऋण नीति को कड़ा करना

संरचनात्मक सुधार उपाय दीर्घकालिक उपाय थे जिन्हें अर्थव्यवस्था की दक्षता बढ़ाने और इसकी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के लिए निर्मित किया गया था। इनमें शामिल हैं:

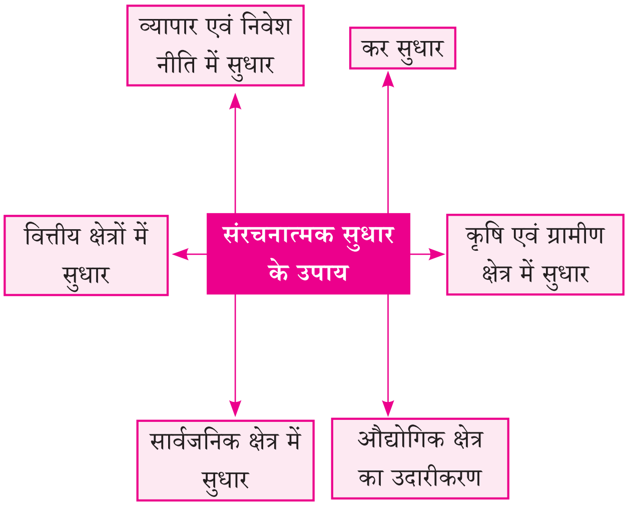

इस युग के दौरान शुरू की गई उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) नीतियों का भारतीय अर्थव्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा।

उदारीकरण

- इसमें **निजी क्षेत्र की भागीदारी को सुविधाजनक बनाने के लिए आर्थिक गतिविधियों में सरकारी विनियमन और प्रतिबंधों** को कम करना शामिल था।
- परिणामस्वरूप, दूरसंचार, बीमा और विमानन जैसे उद्योग निजी क्षेत्र के लिए खोल दिये गये।
- **कुछ खतरनाक और पर्यावरण** के प्रति संवेदनशील उद्योगों को छोड़कर आयात लाइसेंसिंग को समाप्त कर दिया गया।
- वित्तीय बाजार सुधारों के कारण **निजी बैंकों का उदय हुआ और कर सुधारों से प्रक्रियाएँ सरल हुई** तथा धीरे-धीरे दरें कम हुई।
- राजकोषीय नीति सुधार जैसे 'कर ढांचे को सरल बनाने के लिए करों का युक्तिकरण', 'कर आधार को व्यापक बनाना, तथा निवेश और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए कर दरों को कम करना', 'व्यय को युक्तिकरण और राजस्व वृद्धि उपायों के माध्यम से राजकोषीय घाटे में कमी करना' किये गए।

निजीकरण

- निजीकरण की पहलों में **सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को कम करना और निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाना** शामिल था।
- राज्य के स्वामित्व वाली संपत्तियों को बेच दिया गया और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों (PSUs) को प्रबंधकीय निर्णय लेने की स्वायत्तता दी गई, जिससे दक्षता में वृद्धि हुई।

वैश्वीकरण/भूमंडलीकरण

- वैश्वीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत करने का प्रतिनिधित्व किया।
- वैश्वीकरण ने बहुराष्ट्रीय निगमों (MNCs) द्वारा नए बाजारों, संसाधनों और प्रतिभा तक पहुँचने के लिए अधिक सीमा पार निवेश को प्रोत्साहित किया है।
- प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) प्रवाह में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, जिससे विभिन्न देशों और उद्योगों में विदेशी सहायक कंपनियों, संयुक्त उद्यमों और रणनीतिक गठबंधनों की स्थापना हुई है।
- वैश्वीकरण ने विभिन्न देशों में उत्पादन प्रक्रियाओं के विखंडन और वाह्य स्रोतों पर आधारित उत्पादन को जन्म दिया है, जिससे जटिल वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाएँ बन गई हैं।
- कंपनियाँ घटकों का स्रोत बनाती हैं, उत्पादों को जोड़ती हैं, तथा कई देशों में माल वितरित करती हैं, जिससे लागत, दक्षता और बाजार पहुँच का अनुकूलन होता है।
- परिणामस्वरूप, विभिन्न देशों में सूचना, प्रौद्योगिकी, माल, सेवाओं और पूंजी का मुक्त प्रवाह हुआ।
- इससे बाजारों और संस्कृतियों की कनेक्टिविटी और एकीकरण में वृद्धि हुई है।

नई सहस्राब्दी में भारतीय अर्थव्यवस्था: LPG सुधार के 30 वर्ष

1991 में शुरू किए गए उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) सुधारों के बाद के तीन दशकों में भारतीय अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय वृद्धि और विकास हुआ।

सकारात्मक प्रभाव

- **सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में सुधार:** भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के अनुसार, सकल घरेलू उत्पाद (GDP) की वृद्धि दर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, जो 1991-92 के संकट वर्ष के दौरान मात्र 0.8% से बढ़कर 1992 से 2017 तक औसतन 7% हो गई है।
- **घाटे में कमी:** भारत सरकार के वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार, राजकोषीय घाटा, जो सुधार-पूर्व अवधि के दौरान एक बड़ी चिंता का विषय था, LPG सुधारों के बाद प्रभावी रूप से कम हो गया।
- **बाह्य क्षेत्र को बढ़ावा:** बाह्य क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि हुई, 1993-96 के बीच निर्यात वृद्धि औसतन लगभग 20% रही। यह जानकारी वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार से प्राप्त हुई है।
- **गरीबी में कमी:** सामाजिक सेवाओं और ग्रामीण विकास पर खर्च बढ़ने से गरीबी में उल्लेखनीय कमी आई है। विश्व बैंक ने LPG सुधारों के बाद गरीबी के स्तर में उल्लेखनीय गिरावट दर्शाने वाले आंकड़ों के साथ इसकी पुष्टि की है।
- **उच्च जीवन स्तर:** संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) की रिपोर्ट के अनुसार, वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के कारण भारत में जीवन स्तर में उल्लेखनीय सुधार हुआ है।
- **बेहतर सामाजिक बुनियादी ढाँचा:** भारत के सामाजिक बुनियादी ढांचे में उल्लेखनीय सुधार हुए हैं। उदाहरण के लिए, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने जीवन प्रत्याशा में वृद्धि के साथ-साथ शिशु और मातृ मृत्यु दर में उल्लेखनीय कमी की सूचना दी है।

LPG सुधारों के नकारात्मक प्रभाव

यद्यपि LPG सुधारों ने भारतीय अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव डाला, किन्तु इससे कुछ चिंताएँ भी उत्पन्न हुई:

- **बढ़ती असमानताएँ:** सुधारों के बाद भारत में आर्थिक असमानता में वृद्धि देखी गई। कुशल और अकुशल श्रमिकों के बीच वेतन का अंतर बढ़ गया, जैसा कि ऑक्सफैम असमानता रिपोर्ट में विस्तृत रूप से बताया गया है।
- **उपेक्षित वर्गों की असुरक्षा:** समाज के कम सुविधा प्राप्त वर्गों को आर्थिक सुधारों का उतना लाभ नहीं मिला जितना कि संपन्न वर्गों को। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) के आंकड़ों से पता चलता है कि विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच आर्थिक असमानताएँ बढ़ी हैं, जिससे वंचित समुदायों का और अधिक हाशिए पर जाना हुआ है।
- **सामाजिक अशांति:** विभिन्न सामाजिक अनुसंधान संगठनों द्वारा दी गई रिपोर्ट के अनुसार, बढ़ती असमानता ने विभिन्न सामाजिक श्रेणियों और राज्यों के बीच सामाजिक अशांति को बढ़ावा दिया है।
- **क्रोनी कैपिटलिज्म का उदय:** आर्थिक सुधारों ने सभी के लिए समान अवसर सुनिश्चित करने में सफलता नहीं पाई। इससे क्रोनी कैपिटलिज्म में वृद्धि हुई है, यह शब्द ऐसी अर्थव्यवस्था को दर्शाता है जहाँ व्यवसाय में सफलता व्यापारियों और सरकारी अधिकारियों के बीच घनिष्ठ संबंधों से निर्धारित होती है।
- **रोजगार विहीन वृद्धि:** गैर-कृषि क्षेत्र ने कृषि क्षेत्र से विस्थापित लोगों या श्रम बल में नए प्रवेशकों को प्रभावी ढंग से शामिल नहीं किया है, जिससे बेरोज़गारी वृद्धि की स्थिति पैदा हो रही है। सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (CMIE) के आंकड़ों से इस चिंता की पुष्टि होती है।

कराधान सुधार

- वस्तु एवं सेवा कर (GST) के लागू होने से भारत की कर संरचना काफी सरल हो गई।
- विभिन्न केन्द्रीय और राज्य कर कानूनों को एकीकृत करके, इसने राज्यों के बीच कर बाधाओं को हटा दिया, जिससे एक साझा बाजार का निर्माण हुआ और वस्तुओं के मुक्त प्रवाह को बढ़ावा मिला।
- इसके कार्यान्वयन के बाद **कर आधार लगभग दोगुना** हो गया है, यह तथ्य भारत सरकार के वित्त मंत्रालय द्वारा भी स्वीकार किया गया है।
- प्रत्यक्ष कराधान में भी ई-मूल्यांकन जैसे सुधार हुए।
- भारतीय आयकर विभाग की रिपोर्ट के अनुसार, कर प्रक्रियाओं के डिजिटलीकरण की ओर कदम, जिसका उद्देश्य मानवीय हस्तक्षेप को कम करना है, से कर अनुपालन में पारदर्शिता और आसानी आई है।

समग्रतः, LPG सुधार भारतीय अर्थव्यवस्था को बदलने में सहायक रहे, जिससे वृद्धि और विकास में वृद्धि हुई। कुछ नकारात्मक प्रभावों के बावजूद, इन सुधारों ने एक मजबूत और लचीली अर्थव्यवस्था की नींव रखी है। हालाँकि, आय असमानता, प्रभावहीनता और बेरोज़गारी वृद्धि जैसे मुद्दों को हल करने के लिए और अधिक काम करने की आवश्यकता है। इसके अलावा, स्वास्थ्य, शिक्षा और पर्यावरण के क्षेत्रों में सुधार किए जाने चाहिए ताकि टिकाऊ और समावेशी विकास हो सके।

प्रमुख शब्दावलियाँ

प्रत्यक्ष कराधान, हाशिए पर जाना, बेरोज़गारी विकास, सामाजिक अशांति, क्रोनी पूंजीवाद, उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG), संरचनात्मक सुधार।

भारत में बैंकिंग क्षेत्र का विकास

1947 तक बैंकिंग और जीवन बीमा में भारतीय पूंजी काफ़ी आगे बढ़ चुकी थी। सभी बैंक जमाओं का लगभग 64% भारतीय संयुक्त स्टॉक बैंकों के पास था, और देश में जीवन बीमा व्यवसाय का 75 प्रतिशत भारतीय स्वामित्व वाली जीवन बीमा कंपनियों द्वारा नियंत्रित था। भारतीय व्यापारियों ने अधिकांश आंतरिक व्यापार और कुछ विदेशी व्यापार पर भी अपना दबदबा कायम रखा। 1947 के बाद, बैंकिंग प्रणाली को बदलने का समय आ गया था जो ग्रामीण विकास पर ध्यान केंद्रित करते हुए देश के समग्र विकास में सहायक होता।

बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949: बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949 को बाद में वर्ष 1966 में बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 में बदल दिया गया। इस कानून का उद्देश्य भारत में वाणिज्यिक बैंकों को नियंत्रित और विनियमित करना था। 1966 में संशोधन के बाद, अधिनियम में सहकारी बैंकों को भी शामिल किया गया। यह अधिनियम भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) को किसी बैंक को लाइसेंस जारी करने की शक्ति देता है, यदि उसके पास पर्याप्त पूंजी है। यह लाइसेंस देने से पहले बैंक के सार्वजनिक हितों की सुरक्षा पर भी जोर देता है। केवल RBI से बैंकिंग लाइसेंस प्राप्त कंपनियाँ ही अपने व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए अपने नाम में बैंक शब्द का उपयोग कर सकती हैं। यदि बैंक निर्दिष्ट मानदंडों को पूरा नहीं करता है, तो लाइसेंस जारी करने वाला RBI इसे रद्द भी कर सकता है।

हिल्टन यंग कमीशन की सिफारिशों के आधार पर **भारतीय रिजर्व बैंक (RBI)** की स्थापना की गई। इसने 1 अप्रैल, 1935 को परिचालन शुरू किया। जापानी कब्जे तक और बाद में अप्रैल 1947 तक रिजर्व बैंक बर्मा के केंद्रीय बैंक के रूप में काम करता रहा, भले ही बर्मा (म्यांमार) 1937 में भारतीय संघ से अलग हो गया था। जून 1948 तक रिजर्व बैंक पाकिस्तान के केंद्रीय बैंक के रूप में भी काम करता रहा, जब स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान ने परिचालन शुरू किया। 1949 में बैंक का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया।

- **भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम, 1955:** 1951 में पहली पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण भारत के विकास को प्राथमिकता दी गई। इसके परिणामस्वरूप अगस्त 1951 में RBI द्वारा अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण करने के लिए एक निर्देश समिति की नियुक्ति की गई। एक प्रमुख अनुशंसा यह थी कि इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया और पूर्व राज्य के स्वामित्व वाले या राज्य के सहयोगी बैंकों का अधिग्रहण करके भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना की जाए, जो एक राज्य-भागीदार और राज्य-प्रायोजित बैंक हो।
- मई 1955 में संसद में अधिनियम पारित होने के बाद 1 जुलाई 1955 को भारतीय स्टेट बैंक का गठन किया गया। राज्य को भारतीय बैंकिंग प्रणाली के एक चौथाई से अधिक संसाधनों पर सीधा नियंत्रण प्राप्त हुआ। 1959 में भारतीय स्टेट बैंक (सहायक बैंक) अधिनियम ने भारतीय स्टेट बैंक को आठ पूर्व राज्य-संबद्ध बैंकों को अपनी सहायक कंपनियों (बाद में सहयोगी) के रूप में अपने अधीन करने की अनुमति दी।
- **विकास वित्तीय संस्थान (DFI):** विकास वित्तीय संस्थान (DFI) या विकास वित्त कंपनियाँ (DFC) ऐसी संस्थाएँ हैं जो राज्य या सार्वजनिक निकायों से संबंधित हैं और बड़े पैमाने पर या बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं को वित्तपोषित करती हैं जो बड़े बैंकों के लिए बहुत जोखिम भरी या महंगी होती हैं। DFI की भूमिका, वित्तीय क्षेत्र के संस्थानों और बाजारों में अंतराल की पहचान करना और उन्हें भरना है। वे दो प्रकार के फंड प्रदान करते हैं- मध्यम (1-5 वर्ष) और बड़े (5 वर्ष से अधिक)।
- **DFI की स्थापना:** भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (IFCI) पहला DFI था जिसे 1948 में स्थापित किया गया था। उसके बाद विश्व बैंक की एक पहल, भारतीय औद्योगिक ऋण और निवेश निगम लिमिटेड (ICICI) की स्थापना 1955 में की गई थी। यह निजी क्षेत्र का पहला DFI था। 1964 में, भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) के तहत भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (IDBI) की स्थापना की गई थी। 1976 में, IDBI का स्वामित्व केंद्र सरकार को हस्तांतरित कर दिया गया था।

प्रमुख शब्दावलियाँ

हिल्टन यंग आयोग, बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949, नई आर्थिक नीति, अवमूल्यन, जीवन प्रत्याशा, मातृ मृत्यु दर, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय, पंचवर्षीय योजना, क्रोनी पूंजीवाद, भारतीय अर्थव्यवस्था निगरानी केंद्र, ई-मूल्यांकन, विकास वित्तीय संस्थान।

COVID-19 संकट का आर्थिक प्रभाव

- **विकास में गिरावट: सांख्यिकी मंत्रालय** के अनुसार, वित्त वर्ष 2020 की चौथी तिमाही में भारत की GDP वृद्धि मात्र 3.1% रह गई।
- **नौकरी छूटना और गरीबी:** महामारी ने भारत की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था को गंभीर रूप से प्रभावित किया, जिससे व्यापक बेरोजगारी और गरीबी के स्तर में वृद्धि हुई।
- **प्रवासी श्रमिक संकट:** लॉकडाउन के कारण प्रवासी श्रमिकों को अपने गृह राज्यों को लौटने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिससे मानवीय संकट उत्पन्न हो गया।
- **भविष्य के अनुमान:** विश्व आर्थिक आउटलुक रिपोर्ट 2021 में भारत की अर्थव्यवस्था में 2021 में 12.5% और 2022 में 6.9% की वृद्धि के साथ सुधार की भविष्यवाणी की गई है।

आत्मनिर्भर भारत अभियान (आत्मनिर्भर भारत मिशन)

- **प्रोत्साहन पैकेज:** मई 2020 में घोषित, यह 20 लाख करोड़ रुपये (GDP का लगभग 10%) का आर्थिक पैकेज है।

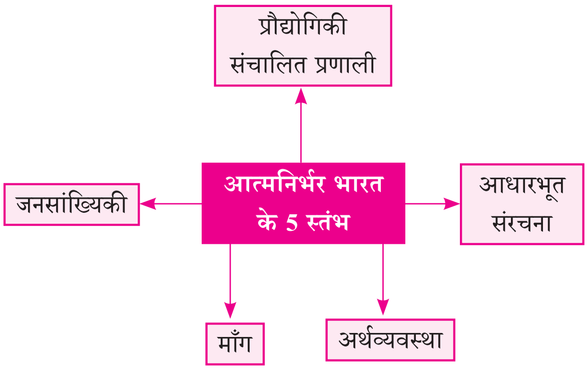

- **शामिल किए गए क्षेत्र:** पैकेज में कुटीर उद्योग, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम(MSME), मजदूर, मध्यम वर्ग और उद्योग सहित विभिन्न क्षेत्रों को शामिल किया गया है।
- **संरचनात्मक सुधार:** इस पहल में कोयला, खनिज, रक्षा उत्पादन, नागरिक उड्डयन, विद्युत वितरण, अंतरिक्ष और परमाणु ऊर्जा सहित आठ क्षेत्रों में संरचनात्मक सुधार भी शामिल थे।

आगे की राह

- नीतियों और कार्यक्रमों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि आर्थिक विकास का लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुँचे। स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा जाल में निवेश एक लचीले समाज के निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण है।
- सुधारों से उद्यमशीलता, कार्यबल के कौशल विकास और श्रम-गहन उद्योगों के विकास को बढ़ावा मिलना चाहिए।
- नीतियों में आर्थिक विकास को पर्यावरणीय स्थिरता के साथ संतुलित करना चाहिए, स्वच्छ ऊर्जा, टिकाऊ कृषि और संसाधनों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देना चाहिए।

- **गरीबी में कमी:** भारत ने 2011 से 2019 तक अपनी अत्यधिक गरीबी दर को आधा कर दिया, जो कई देशों की तुलना में एक उत्कृष्ट उपलब्धि है।
- **असमानता और सामाजिक चुनौतियाँ:** लगभग 35 के गिनी सूचकांक के बावजूद, जो लगातार उपभोग असमानता और उच्च बाल कुपोषण दर का संकेत देता है, भारत की अर्थव्यवस्था निरंतर बढ़ रही है।
- **आर्थिक विकास:** भारत ने वित्त वर्ष 22/23 में 6.9% की प्रभावशाली GDP वृद्धि के साथ महामारी से उबरते हुए कई विकसित और विकासशील देशों को पीछे छोड़ दिया।
- **राजकोषीय प्रबंधन:** राजकोषीय घाटे में वित्त वर्ष 2020/21 के 13% से घटकर वित्त वर्ष 2022/23 में अनुमानित 9.4% तक की कमी, तथा सार्वजनिक ऋण में सकल घरेलू उत्पाद के 87% से घटकर लगभग 83% तक आना, वैश्विक आर्थिक चुनौतियों के बीच भारत के सुदृढ़ राजकोषीय प्रबंधन को उजागर करता है।
- **भविष्य में होने वाली वृद्धि:** आर्थिक प्रतिकूलताओं के बावजूद, भारत ने वित्त वर्ष 2023/24 में 6.3% की मजबूत वृद्धि का अनुमान लगाया है, जो लचीलेपन और अनुकूलनशीलता को दर्शाता है।

ये रणनीतियाँ भारत के लिए एक व्यापक, विस्तृत रणनीति का हिस्सा होनी चाहिए ताकि वह सही मायने में आर्थिक लचीलापन और आत्मनिर्भरता हासिल कर सके। सुधारों को विकास में आने वाली संरचनात्मक बाधाओं से निपटना चाहिए, और एक ऐसी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना चाहिए जो अधिक न्यायसंगत, समावेशी और टिकाऊ हो।

प्रमुख शब्दावलियाँ

राजकोषीय प्रबंधन, विकास मंदी, संरचनात्मक सुधार, विश्व आर्थिक आउटलुक रिपोर्ट, प्रोत्साहन पैकेज, लचीला समाज, टिकाऊ कृषि, गिनी सूचकांक, समावेशी, श्रम-गहन, टिकाऊ, संरचनात्मक अड़चनें।

विगत वर्षों में पूछे गए प्रश्न

1. भारत में मानव विकास, आर्थिक विकास के साथ कदमताल करने में विफल क्यों हुआ? **(2023)**
2. 1960 के दशक में शुद्ध खाद्य आयातक से, भारत विश्व में एक शुद्ध खाद्य निर्यातक के रूप में उभरा। कारण दीजिए। **(2023)**
3. कोविड-19 महामारी ने भारत में वर्ग असमानताओं एवं गरीबी को गति दे दी है। टिप्पणी कीजिये। **(2020)**
4. आचार्य विनोबा भावे के भूदान व ग्रामदान आन्दोलनों के उद्देश्यों की समालोचनात्मक विवेचना कीजिए और उनकी सफलता का आकलन कीजिए। **(2013)**

5 तकनीकी विकास

"बहुत से लोगों को शायद यह नहीं पता होगा कि विज्ञान पर इतना जोर क्यों दिया जा रहा है। इतना पैसा क्यों खर्च किया जा रहा है? मुझे दिल्ली से आने की जहमत क्यों उठानी पड़ी? बड़े देशों के पास अधिक शक्ति है जबकि हमारा देश गरीब बना हुआ है.... अगर हम अपने देश को सशक्त बनाना चाहते हैं, जोकि अब स्वतंत्र है, तो हमें एक मजबूत नींव बनानी होगी - ताकि हम बुनियादी बातें सीख सकें... हो सकता है कि इससे तुरंत नतीजे न दिखें लेकिन आखिर में देश का उत्थान होगा।"

-जवाहरलाल नेहरू

भारत का प्रौद्योगिकी विकास: एक ऐतिहासिक अवलोकन

- **ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन:** भारत की स्वतंत्रता के बाद, ब्रिटिश इसे एक गरीब, आर्थिक रूप से पिछड़े राष्ट्र के रूप में छोड़ गए, जो काफी हद तक दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर था।

चरण I: नेहरू युग (1950-1960 ई.)

- **नेहरू का दृष्टिकोण:** नेहरू के अनुसार विज्ञान "एंजाइम ऑफ होप" (आशा का उत्प्रेरक) था, जो राष्ट्र निर्माण में सहायक था।
- **शैक्षिक एवं अनुसंधान संस्थान: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (IITs) और वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषदों (CSIRs)** जैसे प्रमुख संस्थानों का निर्माण, जो भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान के स्तंभ बन गए हैं।
- **औद्योगिकीकरण और बुनियादी ढाँचा:** प्रमुख इस्पात संयंत्रों और बाँधों का निर्माण, जिन्हें 'आधुनिक भारत के नए मंदिर' कहा गया, ने भारी औद्योगीकरण की शुरुआत की।
- **रक्षा एवं परमाणु ऊर्जा: रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (DRDO)** का गठन और परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का विकास, रक्षा एवं ऊर्जा क्षेत्र में नेहरू की दूरदर्शिता को दर्शाता है।

वैज्ञानिक नीति संकल्प, 1958 : मार्च, 1958 में पारित इस संकल्प में नेहरू के कल्याणकारी राज्य के दृष्टिकोण की झलक मिलती है, जिसके अनुसार विज्ञान और प्रौद्योगिकी में निवेश, भारत के सामाजिक परिवर्तन को संभव बनाएगा। वैज्ञानिक नीति संकल्प (1958) का उद्देश्य एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और कार्यप्रणाली को अपनाना तथा वैज्ञानिक ज्ञान का अनुप्रयोग करना था जो देश के सभी नागरिकों के हित में हो। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा इस क्षमता की पहचान से उभरी है।

भारत सरकार ने अपनी वैज्ञानिक नीति के लिए निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए:

- सभी रूपों में विज्ञान और वैज्ञानिक अनुसंधान का समर्थन एवं रखरखाव करना
- राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने हेतु उच्च योग्यता वाले अनुसंधान वैज्ञानिकों को उपलब्ध कराना तथा उन्हें मान्यता प्रदान करना;
- विज्ञान में पुरुषों और महिलाओं की रचनात्मक क्षमता में अभिवृद्धि;
- शैक्षणिक स्वतंत्रता के साथ, शिक्षण के व्यक्तिगत प्रयासों को बढ़ावा देना, और
- यह सुनिश्चित करना कि देश के लोग वैज्ञानिक ज्ञान और उसके अनुप्रयोगों का लाभ उठा सकें।

विभिन्न वैज्ञानिक संस्थानों की स्थापना

- **वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद (CSIR), 1942**: CSIR की स्थापना 1942 ई. में हुई थी, लेकिन इसके कार्यों का दायरा 1947 ई. के बाद काफी बढ़ गया।
- **शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार:** विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य को सम्मानित करने के लिए CSIR, शांति स्वरूप भटनागर पुरस्कार प्रदान करता है। शांति स्वरूप भटनागर CSIR के संस्थापक, निदेशक और बाद में प्रथम महानिदेशक तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के प्रथम अध्यक्ष थे।
- **टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च (TIFR), 1945** : TIFR की स्थापना जून, 1945 में डॉ. होमी जहांगीर भाभा के दृष्टिकोण के तहत सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट के समर्थन से की गई थी।
- **राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, 1947**: वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद (CSIR) के तहत राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला की स्थापना जनवरी, 1947 में की गई थी और यह भारत की पहली राष्ट्रीय प्रयोगशाला थी।
- **परमाणु ऊर्जा आयोग, 1948:** परमाणु ऊर्जा आयोग पहली बार अगस्त, 1948 में वैज्ञानिक अनुसंधान विभाग में स्थापित किया गया था। होमी जहांगीर भाभा भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग के पहले अध्यक्ष थे।
- **भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT):** मैसाशुएट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के मॉडल का अनुसरण करते हुए, पाँच (5) प्रौद्योगिकी संस्थानों में से पहला 1951 ई. में खड़गपुर में स्थापित किया गया था। आईआईटी खड़गपुर की नई इमारत की आधारशिला मार्च, 1952 को पंडित नेहरू ने रखी थी और शेष चार (4) मद्रास, बॉम्बे, कानपुर और दिल्ली में स्थापित किए गए थे।
- **रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन:** रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (DRDO) की स्थापना 1958 ई. में हुई।
- **भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन:** 1962 ई. में, DAE के तहत, नेहरू ने भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति (INCOSPAR) की स्थापना की, जिसके पहले अध्यक्ष भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के जनक डॉ. विक्रम ए. साराभाई थे। 1969 ई. में इसका नाम बदलकर भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) कर दिया गया।

चरण II: 1970-वर्तमान

- **परमाणु ऊर्जा:** 1974 ई. में परमाणु बम के प्रथम सफल परीक्षण से भारत का परमाणु शक्ति संपन्न देशों की श्रेणी में प्रवेश हुआ।
- **अंतरिक्ष एवं उपग्रह संचार: आर्यभट्ट उपग्रह और इन्सैट (INSAT) श्रृंखला** के सफल प्रक्षेपण के साथ, भारत ने उपग्रह संचार और मौसम पूर्वानुमान के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण प्रगति की है।
- **सूचना प्रौद्योगिकी: 1970 ई. में इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग की** स्थापना से सूचना प्रौद्योगिकी (IT) क्रांति की शुरुआत हुई। ECIL (इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड) और CMC (कंप्यूटर मैनेजमेंट कॉर्पोरेशन) जैसी सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों की स्थापना हुई।
- **राजीव गांधी की** सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी (IT) और कम्प्यूटरीकरण को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- **जैव प्रौद्योगिकी:** आज, भारत को **'विश्व की फार्मेसी' के रूप में जाना जाता है, जो** वैश्विक स्तर पर सस्ती दवाएँ और टीके उपलब्ध कराता है।
- **दूरसंचार:** स्वदेशी इलेक्ट्रॉनिक एक्सचेंज और वीसैट (VSAT) प्रौद्योगिकी के विकास ने भारत में दूरसंचार में क्रांति ला दी।
- **अंटार्कटिका अन्वेषण:** 1981 ई. में शुरू किया गया भारत का अंटार्कटिका कार्यक्रम, जिसमें 'दक्षिण गंगोत्री', 'मैत्री' और नवीनतम स्थापित 'भारती' जैसे केंद्रों की स्थापना की गयी; ध्रुवीय अनुसंधान में देश की महत्वाकांक्षा को दर्शाता है।
- **राष्ट्रीय क्वांटम मिशन:** केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 19 अप्रैल, 2023 को वर्ष 2023-24 से 2030-31 की समयावधि हेतु राष्ट्रीय क्वांटम मिशन (NQM) को मंजूरी दी। इस मिशन का लक्ष्य वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देना और क्वांटम टेक्नोलॉजी (QT) में एक जीवंत और अभिनव पारिस्थितिकी तंत्र बनाना है।

नवीन उपलब्धियाँ

इसरो (ISRO): चंद्रयान मिशन, मंगलयान मिशन, आदित्य L1 मिशन और एस्ट्रोसैट (ASTROSAT) इसरो के भावी कार्यक्रमों में **एक्सपोसैट (EXPOSAT)**, **निसार (NISAR)** उपग्रह, गगनयान और **स्पैडेक्स (SPADEX)** शामिल हैं।

DRDO (रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन)

लड़ाकू विमान - LCA तेजस; UAV - लक्ष्य, निशांत आदि
अग्नि, पृथ्वी और धनुष जैसी सामरिक मिसाइलें; आकाश, नाग और त्रिशूल जैसी सामरिक मिसाइलें; क्रूज मिसाइल- ब्रह्मोस आदि।

भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी नीति का विकास

- **वैज्ञानिक नीति संकल्प (SPR), 1958:** SPR 1958 ने भारत की वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति की आधारशिला रखी। इसका मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा देना और स्वदेशी अनुसंधान को बढ़ावा देना था।
- **प्रौद्योगिकी नीति वक्तव्य, 1983:** इस नीति का उद्देश्य आत्मनिर्भरता के लिए स्वदेशी प्रौद्योगिकी विकसित करना था। इसमें स्थानीय, मानवीय और भौतिक दोनों संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने और विदेशी प्रौद्योगिकी पर निर्भरता कम करने के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया।
- **विज्ञान और प्रौद्योगिकी नीति, 2003** वैश्वीकरण की पृष्ठभूमि के दौरान, अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति के साथ तालमेल बनाए रखने के लिए इस नीति को पेश किया गया था। इसने सतत विकास और समानता पर जोर दिया और अनुसंधान एवं विकास में व्यापक सरकारी निवेश का प्रस्ताव रखा ताकि इसे सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के 2% तक बढ़ाया जा सके।
- **विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार नीति, 2013:** इस नीति ने 'नवाचार के दशक' (2010-2020) की शुरुआत की थी। इसने वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्द्धी बने रहने के लिए ज्ञान-आधारित अर्थव्यवस्था में बदलाव की आवश्यकता पर जोर दिया। इसने एक मजबूत राष्ट्रीय नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- **राष्ट्रीय विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार नीति (STIP) का 5वाँ मसौदा, (समीक्षाधीन):** नवीनतम मसौदा नीति पिछली नीतियों के टॉप-डाउन दृष्टिकोण से अलग है, जिसमें विकेंद्रीकरण, साक्ष्य-सूचित निर्णय लेना, बॉटम अप दृष्टिकोण और समावेशिता शामिल है। यह नई चुनौतियों पर प्रतिक्रिया देने और तीव्र वैश्विक तकनीकी प्रगति द्वारा प्रस्तुत अवसरों का लाभ उठाने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

- **जैव प्रौद्योगिकी और जीनोम अनुक्रमण:** भारत ने जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण प्रगति की है। जैव प्रौद्योगिकी विभाग (DBT) द्वारा समर्थित जीनोम अनुक्रमण में देश का व्यापक अनुसंधान आनुवंशिक रोगों की समझ और प्रभावी उपचार विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कोविड-19 महामारी के समय से, भारतीय प्रयोगशालाओं ने भी वायरस के विभिन्न प्रकारों का पता लगाने और उनका अध्ययन करने के लिए अपने जीनोम अनुक्रमण प्रयासों में तेजी ला दी है।
- **नैनो प्रौद्योगिकी:** भारत ने नैनो प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ाने के लिए मजबूत प्रतिबद्धता दिखाई है। भारत सरकार द्वारा शुरू किए गए नैनो मिशन (2007) का उद्देश्य नैनो विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए बुनियादी अनुसंधान, मानव संसाधन विकास और अवसंरचना विकास को बढ़ावा देना है। इससे स्वास्थ्य, कृषि और जल प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में नवाचार को बढ़ावा मिला है, जिससे भारत नैनो प्रौद्योगिकी अनुसंधान और विकास में अग्रणी स्थान पर आ गया है।

क्या आप जानते हैं?

समरेंद्र कुमार मित्रा ने भारतीय सांख्यिकी संस्थान, कलकत्ता (1953-54 ई.) में भारत का पहला स्वदेशी इलेक्ट्रॉनिक एनालॉग कंप्यूटर बनाया। 1954 ई. में पहला कण त्वरक 'साइक्लोट्रॉन' शुरू हो गया था। खगोल भौतिकीविद् **मेघनाद साहा** और बाद में परमाणु भौतिक विज्ञानी **बी.डी. नागचौधरी ने** कलकत्ता विश्वविद्यालय में इसे बनाने वाली टीम का नेतृत्व किया। 1960 ई. में केंद्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान (CFTRI) ने भैंस के दूध (अमूल) से पहला बेबी मिल्क फूड विकसित किया, जब बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारत में विनिर्माण सुविधा स्थापित करने से इनकार कर दिया क्योंकि देश में गाय के दूध की कमी थी और भैंस का दूध उपयुक्त नहीं था क्योंकि इसमें बहुत अधिक वसा होती है। 1963 ई. में **जी.एन. रामचंद्रन, सी. रामकृष्णन और वी. शशि शेखरन ने 'रामचंद्रन प्लॉट'** का विकास किया जो प्रोटीन संरचना समझ के क्षेत्र में सार्वभौमिक रूप से उपयोग किया जाने वाला एक उपकरण है।

निष्कर्ष

भारत की विज्ञान और प्रौद्योगिकी नीति का विकास, सामाजिक-आर्थिक प्रगति को आगे बढ़ाने में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार की क्षमता का दोहन करने के लिए देश की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। विघटनकारी प्रौद्योगिकियों के आगमन के साथ, नई चुनौतियाँ और अवसर पैदा होते हैं। उदाहरण के लिए, कोविड-19 महामारी ने अनुसंधान एवं विकास संस्थानों, शिक्षाविदों और उद्योगों के बीच सहयोगात्मक प्रयासों के महत्त्व को रेखांकित किया है। जैसे-जैसे भारत इस डिजिटल युग में अपने भविष्य को आगे बढ़ा रहा है, ये सहयोग; समावेशी और सतत विकास के लिए तकनीकी प्रगति का लाभ उठाने में सहायक सिद्ध होंगे।

प्रमुख शब्दावलियाँ

रामचंद्रन प्लॉट, जीनोम अनुक्रमण, नैनो-प्रौद्योगिकी, नैनो मिशन, जीनोम सीक्वेंसिंग के प्रयास, बॉटम-अप दृष्टिकोण, नवाचार का दशक, जैव प्रौद्योगिकी, अंटार्कटिका अन्वेषण, चंद्रयान, मंगलयान, वैज्ञानिक नीति संकल्प, 1958, जैव प्रौद्योगिकी विभाग (DBT),

6 भारत में स्वतंत्रता के बाद के सामाजिक आंदोलन

1947 ई. में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद से, भारत ने स्वतंत्रता पश्चात सामाजिक आंदोलनों की एक समृद्ध श्रृंखला का अनुभव किया, जिनमें से प्रत्येक की अपनी अलग-अलग विशेषताएँ, लक्ष्य और संदर्भ रहे हैं। इन आंदोलनों ने देश की सामाजिक और राजनीतिक गतिशीलता को गहराई से प्रभावित किया है।

भारत में सामाजिक आंदोलनों की पाँच सामान्य विशेषताएँ हैं:

- **अहिंसक प्रतिरोध:** महात्मा गांधी जैसे नेताओं के दर्शन और उनकी विचारधारा से प्रेरित होकर, कई आंदोलनों, जैसे चिपको आंदोलन और अन्ना हजारे के नेतृत्व में भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन, ने विरोध के अहिंसक तरीकों को अपनाया है।
- **बॉटम-अप दृष्टिकोण:** भारत में कई सामाजिक आंदोलन जमीनी स्तर से शुरू होते हैं, जो आम नागरिकों और स्थानीय समुदायों द्वारा संचालित होते हैं। वे उपेक्षित समूह के लोगों की आवाज का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- **विविधता और बहुलता:** भारतीय सामाजिक आंदोलनों की विशेषता यह है कि वे जो मुद्दे उठाते हैं और जिस आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं, उनमें बहुत विविधता और बहुलता होती है। उदाहरण- अरक (शराब) विरोधी आंदोलन, पर्यावरण आंदोलन, दहेज विरोधी आंदोलन आदि।
- **अंतरसंबद्धता:** आंदोलन उत्पीड़न के विभिन्न रूपों, जैसे जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता, धार्मिक असहिष्णुता और पर्यावरण क्षरण के बीच अंतर-संबंधों को दर्शाते हैं।
- **मीडिया और प्रौद्योगिकी का सक्रिय उपयोग:** भारतीय सामाजिक आंदोलनों ने लोगों को संगठित करने, जागरूकता बढ़ाने के लिए मीडिया और प्रौद्योगिकी के उपयोग को तेजी से अपनाया है। ट्विटर, फेसबुक और व्हाट्सएप जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों ने सूचना प्रसारित करने, विरोध प्रदर्शन आयोजित करने और आवाज बुलंद करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
- **भारत में पुराने और नए सामाजिक आंदोलनों के बीच अंतर करना अत्यधिक कठिन है। भारतीय आंदोलनों में पुराने और नए सामाजिक आंदोलनों की विशेषताओं का मिश्रण है।**

पुराने सामाजिक आंदोलन

- पुराने सामाजिक आंदोलन राजनीतिक दलों के ढाँचे के भीतर कार्य करते थे।
- पुराने सामाजिक आंदोलनों में स्पष्ट रूप से सत्ता संबंधों की पुनर्संरचना को केंद्रीय लक्ष्य के रूप में रखा जाता था।
- ये प्रकृति में अधिक क्षेत्रीय थे।

नए सामाजिक आंदोलन

- 'नए' सामाजिक आंदोलन समाज में सत्ता के वितरण पर केंद्रित नहीं थे, बल्कि स्वच्छ पर्यावरण जैसे जीवन की गुणवत्ता के मुद्दों से संबंधित थे।
- नए आंदोलन अधिकांशतः राजनीतिक दलों के दायरे में रहकर काम नहीं करते, बल्कि अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वृहत सिविल सोसाइटी संगठनों और गैर-सरकारी संगठनों का सहारा लेते हैं।
- ये प्रकृति में अधिक वैश्विक भी होते हैं।

इन तथ्यों के साथ यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि भारत में सामाजिक आंदोलन विशिष्ट संदर्भ, मुद्दे और समयावधि के आधार पर भिन्नता प्रदर्शित कर सकते हैं।

महिला आंदोलन

19वीं शताब्दी में महिला आंदोलन

- स्वतंत्रता पूर्व, भारत में महिला आंदोलनों का नेतृत्व बड़े पैमाने पर सुधारवादी पुरुषों द्वारा किया जाता था, जिनका ध्यान बाल विवाह, सती प्रथा और विधवा पुनर्विवाह जैसे सामाजिक मुद्दों पर केंद्रित था।
- राजा राम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर और पंडिता रमाबाई जैसे नेता इन आंदोलनों के प्रमुख चेहरे थे, जो महिला शिक्षा, विधवा पुनर्विवाह और समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए कानूनी सुधारों की वकालत कर रहे थे।
- इस युग के प्रमुख संगठनों में ब्रह्म समाज और आर्य समाज शामिल हैं। हालाँकि, इनमे महिलाओं की भागीदारी बहुत कम थी जबकि तुलनात्मक रूप से स्वतंत्रता संग्राम में उनकी भागीदारी अधिक थी।

20वीं शताब्दी (स्वतंत्रता पूर्व) में महिला आंदोलन

- स्वतंत्रता पश्चात् महिला आंदोलनों के नेतृत्व और उनके उद्देश्यों में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव को चिह्नित किया गया।
- स्वतंत्रता संग्राम में अपनी भागीदारी से सशक्त हुई महिलाओं ने अपने अधिकारों की वकालत में अग्रणी भूमिका निभानी शुरू कर दी।
- सुचेता कृपलानी और अरुणा आसफ अली जैसी महिलाएँ प्रमुख नेत्री बन गई।
- 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' जैसे संगठनों ने महिला अधिकारों की वकालत की।

स्वतंत्रता पश्चात महिला आंदोलन

- आंदोलनों का ध्यान सामाजिक सुधारों से बढ़कर व्यापक मुद्दों तक पहुँच गया, जैसे- लैंगिक समानता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आर्थिक समानता और कानूनी अधिकार आदि।
- 'भारतीय राष्ट्रीय महिला महासंघ' जैसे संगठनों ने महिलाओं के लिए समान अधिकार सुनिश्चित करने हेतु कानूनों और नीतियों की वकालत करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे भारत में समकालीन महिला आंदोलनों का मार्ग प्रशस्त हुआ।

संवैधानिक सुधार और लैंगिक समानता

- भारतीय संविधान में लैंगिक समानता का सिद्धांत प्रारंभ से ही निहित था।
- अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता की गारंटी देता है और अनुच्छेद 15 लिंग के आधार पर भेदभाव को रोकता है।
- इसके अलावा, अनुच्छेद 15(3) एक विशेष प्रावधान करता है जो राज्य को महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव करने में सक्षम बनाता है।

प्रशासन में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि

- 1990 के दशक में 73वें और 74वें संविधान संशोधन द्वारा स्थानीय स्वशासन में महिलाओं के लिए 33% सीटें आरक्षित करना, महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाने में एक प्रमुख कदम था।
- 1992 ई. में राष्ट्रीय महिला आयोग जैसी संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य महिलाओं की स्थिति में सुधार लाना था।
- समय के साथ-साथ, अधिकाधिक महिलाएँ प्रमुख पदों पर आसीन हुई हैं, जैसे कि लोकसभा अध्यक्ष के रूप में मीरा कुमार, प्रधानमंत्री के रूप में इंदिरा गांधी, राष्ट्रपति के रूप में प्रतिभा पाटिल, तथा वित्त मंत्री के रूप में निर्मला सीतारमण आदि।

नारीवादी गतिविधियों पर ध्यान में कमी और कायाकल्प

- 1950 और 1960 के दशक में भारत में नारीवादी सक्रियता पर कम ध्यान दिया गया।
- हालाँकि, 1970 के दशक तक महिला आंदोलन ने पुनः गति पकड़ ली।
- ऐसा इस बढ़ती जागरूकता के कारण हुआ कि संवैधानिक सुनिश्चितता के बावजूद, वास्तविक लैंगिक समानता हासिल नहीं की जा सकी है।
- इस जागृति को चिह्नित करने वाली प्रमुख घटनाओं में 'मथुरा बलात्कार मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के खिलाफ विरोध' और 'फोरम अगेंस्ट रेप (बाद में इसका नाम बदलकर फोरम अगेंस्ट ऑप्रेशन ऑफ वुमेन) द्वारा "बेटी बचाओ" अभियान की शुरुआत' शामिल हैं जिन्होंने व्यापक सामाजिक और कानूनी परिवर्तनों पर जोर दिया।

स्वतंत्रता का प्रारंभिक चरण: 1947-1970 ई.

1. **स्वतंत्रता के बाद भारत का आंतरिक ध्यान**
   - महिलाओं के लिए सामाजिक मुद्दों और व्यवस्थित विकास योजनाओं को संबोधित करने के प्रयास।
2. **कार्यबल में महिलाओं की भूमिका का पुनर्निर्धारण**
   - नारीवादी आंदोलनों द्वारा पारंपरिक श्रम विभाजन को चुनौती।
   - कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी की स्वीकार्यता में वृद्धि।
3. **महिलाओं को लाभ पहुँचाने वाले विधायी परिवर्तन**
   - विशेष विवाह अधिनियम (1954), हिंदू विवाह अधिनियम (1956), दहेज निषेध अधिनियम (1961) आदि सहित अन्य प्रगतिशील कानून पारित हुए।
4. **आर्थिक संकट और महिलाओं की लामबंदी: 1960 के दशक के अंत से 1970 के दशक के प्रारंभ तक**
   - आर्थिक स्थिरता और बढ़ती कीमतें आम असंतोष का कारण बन गई।
   - ग्रामीण गरीबों, आदिवासियों और औद्योगिक श्रमिक वर्ग के संघर्षों में भागीदारी के लिए महिलाएँ संगठित हुई।
   - 1973 ई. के कीमत-विरोधी आंदोलन में महिलाओं की लामबंदी देखी गई।

महिला आंदोलनों का पुनरुत्थान: 1970 – 1980 का दशक

1. **महिला आंदोलनों का पुनरुत्थान**
   - 1950 और 1960 के दशक के दौरान महिलाओं के मुद्दों पर ध्यान कम होने के बाद महिलाओं की समस्याओं में रुचि पुनः जागृत हुई।
   - नए महिला-केंद्रित समूहों और संगठनों का उदय।
2. **महिला मुद्दों पर समग्र दृष्टिकोण**
   - विधायी और शैक्षिक उद्देश्यों से हटकर व्यापक, समग्र दृष्टिकोण अपनाया गया।
   - उद्योगों में महिलाओं की छंटनी, मातृत्व लाभ का अभाव, वेतन भेदभाव, खराब प्रशिक्षण और कार्यस्थल पर भेदभाव जैसे मुद्दे सामने आए।
3. **स्वतंत्र महिला संगठनों का गठन**
   - लगभग 70 महिला संगठनों को मिलाकर **कीमत - वृद्धि विरोधी महिला संयुक्त मोर्चा का गठन हुआ।**
   - 1972 ई. में इला भट्ट द्वारा **स्वरोजगार महिला एसोसिएशन (SEWA)** की स्थापना।
   - 'विरोध की राजनीति' की नई रणनीति सामने आई, जो पहले के 'कल्याणकारी' दृष्टिकोण से अलग थी।

महिला आंदोलनों की अन्य विशेषताएँ

1. **महिला समूहों का उद्भव**

   I. **शहरी महिला समूह:** 1977 और 1979 ई. के बीच, प्रमुख भारतीय शहरों में नए महिला समूहों का उद्भव हुआ जिन्होंने दहेज हत्या, सौंदर्य प्रतियोगिता, महिलाओं का लिंगभेदी चित्रण, अश्लील सामग्री, कौमार्य परीक्षण, हिरासत में बलात्कार और जेलों में महिलाओं की दयनीय स्थिति जैसे विभिन्न मुद्दों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किए। महिला दक्षता समिति, राष्ट्रीय महिला महासंघ, अखिल भारतीय लोकतांत्रिक महिला एसोसिएशन, नारी रक्षा समिति जैसे संगठनों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

   II. **सक्रियता और कानून सुधार:** इन समूहों ने न केवल वैवाहिक और तलाक के मुद्दों, अभिरक्षा की लड़ाई और गुजारा भत्ता के अधिकारों का सामना करने वाली महिलाओं को सहायता प्रदान की, बल्कि मौजूदा व्यक्तिगत और प्रथागत कानूनों में निहित भेदभाव को भी पहचाना। उन्होंने बलात्कार कानून (1980) और दहेज निषेध अधिनियम जैसे कानूनी सुधारों के लिए सशक्त अभियान चलाए।

   III. **प्रतिरोध और चुनौतियाँ:** अपनी सक्रियता के बावजूद, इन समूहों को व्यक्तिगत कानूनों और धार्मिक पहचानों के बीच अंतर्संबंध के कारण सामुदायिक अभिजात वर्ग, जन संगठनों और पितृसत्तात्मक धर्मनिरपेक्ष लॉबी से काफी प्रतिरोध का सामना करना पड़ा।

2. **विधायी सुधार और समानता की दिशा में कदम**

   I. **महिला सशक्तीकरण पर ध्यान केंद्रित करना:** 1980 के दशक के दौरान भारत ने महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार पर जोर देना शुरू किया, जिसके परिणामस्वरूप **भारतीय नारीवाद की तीसरी लहर शुरू हुई।**

   इस अवधि में जाति, वर्ग और संस्कृति के बीच अन्तर्विभाजकता को मान्यता मिली तथा निजी क्षेत्रों में भी आंदोलन प्रवेश कर गया जिसके परिणामस्वरूप समान वैवाहिक अधिकार, तलाक, उत्तराधिकार, दहेज और यौन हिंसा के विरुद्ध न्याय तथा आर्थिक अवसरों की माँग की गई।

II. **महत्त्वपूर्ण सुधार और रिपोर्ट:** भारत पहला देश था जिसने पारिवारिक न्यायालय अधिनियम, 1984 लागू किया साथ ही महिला आंदोलन के दबाव में घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 लागू किया गया।

भारत सरकार द्वारा 1974 ई. में जारी की गई **'टुवार्ड्स इक्वालिटी' रिपोर्ट** में अर्थव्यवस्था में महिलाओं की उपेक्षा पर प्रकाश डाला गया था, जो 1970 और 1980 के दशक के दौरान सक्रियता का केंद्र बिंदु था।

3. महिलाओं के प्रजनन अधिकार

I. **परिवार नियोजन के दुरुपयोग के विरुद्ध सक्रियता:** महिला समूहों ने परिवार नियोजन कार्यक्रमों के नाम पर होने वाले दुर्व्यवहारों पर ध्यान केंद्रित किया, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में गरीब महिलाओं के विरुद्ध, जिन्हें नसबंदी ऑपरेशनों और असुरक्षित गर्भनिरोधकों का शिकार होना पड़ा।

II. **किशोर गर्भधारण और मानव तस्करी की समस्या पर ध्यान देना:** समूहों ने किशोर गर्भधारण, देह व्यापार के लिए युवा लड़कियों की तस्करी और आपराधिक न्याय प्रणाली की भागीदारी जैसे मुद्दों पर भी काम किया।

III. **लिंग निर्धारण पर प्रतिबंध**: लिंग निर्धारण के विरुद्ध अभियान के परिणामस्वरूप एक केंद्रीय कानून पारित हुआ, जिसके तहत गर्भवती महिला के गर्भाशय की जाँच (Amniocentesis), कोरियो-विलाय-बायोप्सी (Chorio-villai-biopsy) तथा कन्या भ्रूण-हत्या के लिए लिंग पूर्व-चयन तकनीकों पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

4. महिला आंदोलन और विकास एजेंडा

I. **आर्थिक सशक्तीकरण**: 1970 और 1980 के दशक के दौरान महिला आंदोलन ने अर्थव्यवस्था में महिलाओं के हाशिए पर होने पर जोर दिया और महिलाओं के अधिकारों की वकालत की तथा कार्यस्थलों पर महिलाओं के खिलाफ बढ़ती हिंसा और यौन उत्पीड़न का प्रतिकार किया।

II. **जेंडर बजटिंग**: 1990 के दशक में महिला आंदोलन ने मुख्यधारा में अपनी जगह बनाई, महिला सशक्तीकरण, जेंडर बजटिंग और पुरुषों के साथ भागीदारी की वकालत की। इस अवधि में दलित और वंचित महिलाओं के अधिकारों के लिए सक्रियता भी देखी गई।

अरक (शराब) विरोधी आंदोलन

I. **आंदोलन की उत्पत्ति और उद्देश्य:** 1990 के दशक की शुरुआत में, ग्रामीण **आंध्र प्रदेश** शराब की लत के खिलाफ महिलाओं के नेतृत्व वाले एक अनोखे आंदोलन का केंद्र बन गया। महिलाओं ने शराब की लत के खिलाफ अभियान चलाया, शराब पीने और बेचने पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने की माँग की। आंदोलन के अनूठे तरीके न तो गांधीवादी थे और न ही मार्क्सवादी, लेकिन उन्होंने अपना पथ स्वयं निर्मित किया

II. **परिणाम और प्रभाव**: इस संघर्ष के परिणामस्वरूप 1995 ई. में पूरे राज्य में शराब पर प्रतिबंध लगा दिया गया, जिससे यह आंदोलन भारत में महिलाओं के नेतृत्व की मिसाल बन गया। इससे महिला अधिकारों के लिए और अधिक सक्रियता उत्पन्न हुई।

5. डिजिटल युग में महिला आंदोलन

I. **डिजिटल नारीवाद का आगमन**

- 2000 के दशक तक, आर्थिक उदारीकरण और प्रौद्योगिकी में प्रगति के साथ, भारतीय महिलाओं ने स्वतंत्रता, चयन और स्वायत्तता जैसे अधिकारों पर जोर देते हुए एक सांस्कृतिक बदलाव का अनुभव किया।
- डिजिटल क्रांति ने नारीवाद की एक नई लहर का सूत्रपात किया, जिसने डिजिटल स्पेस के लाभ और चुनौतियों दोनों को उजागर किया है।

II. **प्रभावशाली ऑनलाइन आंदोलन और अभियान**

- **#MeToo और एवरीडे सेक्सिज्म प्रोजेक्ट जैसे वैश्विक आंदोलनों** के साथ-साथ भारत में भी शक्तिशाली सोशल मीडिया अभियान चलाए गए हैं।
- **उदाहरण के लिए, #The LahuKaLagaan अभियान ने** वर्ष 2018 में 'पीरियड्स टैक्स' को प्रभावी रूप से हटा दिया, जिससे देश भर में महिलाओं के लिए सैनेटरी उत्पाद अधिक किफायती हो गए।
- **वर्ष 2012 में हुए दुखद निर्भया मामले ने** न्याय और महिला सुरक्षा के लिए देशव्यापी आक्रोश पैदा कर दिया था, जिसे सोशल मीडिया के माध्यम से समर्थन दिया गया था।
- भारी जन दबाव के कारण कई कानूनी सुधार हुए, जिनमें **आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम, 2013; जिसे निर्भया अधिनियम** के नाम से भी जाना जाता है, शामिल है। इस अधिनियम में महिलाओं के विरुद्ध यौन अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान किया गया।
- इसके अलावा, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से निपटने के लिए, **कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, या SHE अधिनियम, 2013 में पारित किया गया था।**
- यह एक और महत्त्वपूर्ण कानूनी सुधार था जो भारत में महिलाओं के अधिकारों और सुरक्षा के बारे में चल रही चर्चाओं से सीधे प्रभावित था।

महिला आंदोलनों के लिए चुनौतियाँ

- **अंतरसंबंध:** भारत में महिलाओं के साथ होने वाले अनुभव एकसमान नहीं हैं और ये अनुभव उनकी जाति, धर्म, वर्ग और भौगोलिक स्थिति के अनुसार आकार लेते हैं। फिर भी, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों, धार्मिक अल्पसंख्यकों और ग्रामीण एवं संघर्ष प्रभावित क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं के सामने आने वाली समस्याओं का अक्सर समाधान नहीं हो पाता है। वर्ष **2019-2021 की राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) रिपोर्ट के अनुसार,** अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं में निरक्षरता दर सबसे अधिक 42.9% है, जबकि राष्ट्रीय औसत 28.5% है।
- **वंचित समूहों का प्रतिनिधित्व:** वंचित समुदायों की महिलाओं को अक्सर इन आंदोलनों में कम प्रतिनिधित्व दिया जाता है। **उदाहरण के लिए, वर्ष 2021 तक, जबकि भारत की कुल आबादी में महिलाओं की हिस्सेदारी 48.20% थी, राजनीतिक पदों पर उनका प्रतिनिधित्व कम बना हुआ था। अप्रैल, 2023 तक अंतर-संसदीय संघ के अनुसार, महिलाओं के पास लोकसभा में केवल 14.4% और राज्यसभा में 12.2% सीटें थीं।**

- **डिजिटल लैंगिक विभाजन:** जबकि डिजिटल प्रौद्योगिकियों में महिलाओं को सशक्त बनाने और उनकी आवाज को बुलंद करने की क्षमता है, डिजिटल प्लेटफॉर्म तक पहुँच और उनके उपयोग में एक महत्त्वपूर्ण लैंगिक अंतर मौजूद है। डिजिटल अर्थव्यवस्था और ऑनलाइन सक्रियता में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए इस अंतर को पाटना आवश्यक है।

कुछ प्रमुख सुधार

- **परिवहन सुधार:** स्वतंत्रता के बाद परिवहन मंत्री के रूप में लाल बहादुर शास्त्री ने सार्वजनिक परिवहन में महिला चालकों और परिचालकों का प्रावधान शुरू किया, जिससे कार्यबल की लैंगिक पूर्वधारणाएँ टूटीं।
- 1971 ई. का मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी (MTP) अधिनियम: यह कुछ परिस्थितियों में गर्भपात को वैध बनाता है। यह अधिनियम महिलाओं के प्रजनन अधिकारों को मान्यता देते हुए देश में सुरक्षित और कानूनी गर्भपात सेवाओं को विनियमित करने और सुविधाजनक बनाने हेतु निर्मित किया गया।
- समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976: यह एक महत्त्वपूर्ण कानून है जिसका उद्देश्य कार्यस्थल पर लैंगिक समानता को बढ़ावा देना है, यह सुनिश्चित करते हुए कि पुरुषों और महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले। यह लैंगिक भेदभाव के मुद्दों को संबोधित करने और रोजगार प्रथाओं में निष्पक्षता को बढ़ावा देने के लिए भारतीय कानूनी प्रणाली की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।
- बाल विवाह निरोधक अधिनियम, 1976: 1976 ई. के इस अधिनियम के तहत लड़कियों के विवाह की उम्र 15 से बढ़ाकर 18 वर्ष और लड़कों के विवाह की उम्र 18 से बढ़ाकर 21 वर्ष कर दी गई है। ऐसे बाल विवाह करने या करवाने वाले बच्चों के माता-पिता सजा के हकदार हैं।
- महिलाओं के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना (NPA): इसे भारत में 1976 ई. में महिलाओं के विकास के विभिन्न पहलुओं को संबोधित करने के लिए तैयार किया गया था। NPA के अंतर्गत प्रमुख क्षेत्रों की पहचान की गई, और महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए कार्यक्रम तैयार किए ।

साइबर फेमिनिज्म, जो भारत में अभी भी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है, में नारीवाद को लोकतांत्रिक बनाने, इसे और अधिक विविधतापूर्ण और विकेंद्रीकृत बनाने की क्षमता है। हालाँकि, इसे पिछली नारीवादी लहरों की सार्वभौमिकता को दोहराने से बचने और सभी महिलाओं के लिए प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए।

प्रमुख शब्दावलियाँ

राष्ट्रीय कार्य योजना, समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976, बाल विवाह, सती, विधवा पुनर्विवाह, राष्ट्रीय महिला आयोग, विशेष विवाह अधिनियम, अंतर्विभागीयता, हिंदू विवाह अधिनियम, दहेज निषेध अधिनियम, स्वरोजगार महिला संघ (सेवा), महिला दक्षता समिति, #MeToo, अरक विरोधी आंदोलन।

छात्र आंदोलन

1. स्वतंत्रता-पूर्व युग

- **स्वतंत्रता संग्राम की ऐतिहासिक जड़ें:** भारत में छात्र आंदोलनों का इतिहास देश के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ा है, जिसमें छात्रों ने ब्रिटिश शासन के खिलाफ स्वदेशी, असहयोग और सविनय अवज्ञा आंदोलनों जैसे आंदोलनों में सक्रिय रूप से योगदान दिया था।
- यंग बंगाल जैसे कुछ आंदोलन भी मुख्यतः छात्र-केंद्रित आंदोलन थे।

2. स्वतंत्रता पश्चात छात्र आंदोलनों के उत्प्रेरक

I. स्वतंत्रता की खोज

- भारत के स्वतंत्रता और न्याय के संघर्ष में छात्रों और युवाओं का प्रमुख योगदान रहा है।
- **आपातकाल (1975-77 ई.) के दौरान,** देशभर के विश्वविद्यालयों के छात्र संगठन सामने आकर प्रतिरोध कर रहे थे तथा अवज्ञा की भावना को मूर्त रूप दे रहे थे।

II. अभाव, अन्याय और शिक्षा प्रणाली

- सामाजिक-आर्थिक अभाव और अन्याय छात्र आंदोलनों को प्रेरित कर सकते हैं, जैसा कि बेहतर शैक्षिक अवसरों के लिए आदिवासी छात्रों की सक्रियता से स्पष्ट होता है।
- इसके अलावा, शिक्षा प्रणाली में व्याप्त कमियाँ जिन्हें प्रायः सत्तावादी और नौकरशाही से संबंधित माना जाता है, छात्र असंतोष को और अधिक बढ़ा सकती हैं।

III. राज्य नीति और बेरोजगारी

- छात्र आंदोलन प्रायः राज्य की उन नीतियों के विरोध में उत्पन्न होते हैं, जिन्हें उनके हितों के लिए हानिकारक माना जाता है।
- उदाहरण के लिए, भारत सरकार द्वारा लागू की गई **आरक्षण नीति ने वर्ष 1990, 2006 और 2015 में महत्त्वपूर्ण छात्र आंदोलनों को जन्म दिया।**
- **बेरोजगारी,** विशेषकर शिक्षित युवाओं में, इन आंदोलनों को और बढ़ावा देती है तथा एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक तनाव को उजागर करती है।

IV. पीढ़ीगत अंतर और अलगाव

- **पीढ़ीगत अंतर** (जनरेशन गैप), छात्र आंदोलनों का एक और कारण है, जिसके परिणामस्वरूप विचारधारा-आधारित आंदोलन और व्यापक युवा सक्रियता उत्पन्न होती है।
- शिक्षा के बावजूद रोजगार के अवसरों की कमी के कारण अक्सर अलगाव पैदा होता है, जिसके कारण छात्र असंतोष बढ़ता है और उसके परिणामस्वरूप आंदोलन होते हैं।

V. त्वरित सूचना प्रणाली का उपयोग

- डिजिटल प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया के आगमन ने छात्र सक्रियता को और अधिक बढ़ावा दिया है तथा समर्थन जुटाने और विरोध प्रदर्शन आयोजित करने के लिए मंच उपलब्ध कराया है।

3. प्रमुख छात्र आंदोलन

I. भाषाई आधार पर विरोध (1950-1970 के दशक)

- स्वतंत्रता के बाद के शुरुआती छात्र आंदोलन भाषाई राज्यों की माँग और हिंदी थोपे जाने के विरोध के इर्द-गिर्द संचालित रहे, विशेष रूप से ओडिशा और तमिलनाडु में।

- **1965 ई. का हिंदी विरोधी आंदोलन,** 1963 ई. के राजभाषा अधिनियम के विरुद्ध छात्रों द्वारा चलाया गया एक महत्त्वपूर्ण आंदोलन था।

II. आपातकाल और उसके बाद की स्थिति (1970-1990 का दशक)

- आपातकाल के विरुद्ध **जयप्रकाश नारायण (JP) आंदोलन ने राजनीतिक नेताओं की नई पीढ़ी तैयार की।**
- इस आंदोलन की जड़ें **गुजरात में 1974 ई. के 'नवनिर्माण आंदोलन' में निहित थीं, जो** छात्रावास भोजन शुल्क में वृद्धि के कारण शुरू हुआ था।
- पंजाब समस्या और असम आंदोलन ने भी इस अवधि के दौरान छात्र राजनीति में एक उग्र मोड़ ला दिया।

- **JP आंदोलन और आपातकाल (1974-1975 ई.):** 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध में, जयप्रकाश नारायण ने राज्यों की राजनीति में एक अलग स्थान बनाया । वर्ष 1974 में, उच्च मुद्रास्फीति और सामाजिक मुद्दों पर प्रतिक्रिया करते हुए, उन्होंने बिहार में आंदोलन का नेतृत्व किया, जो शुरू में राज्य के भ्रष्टाचार पर केंद्रित था और बाद में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार का विरोध करने के लिए विस्तारित हो गया। बिहार आंदोलन या **संपूर्ण क्रांति** के नाम से मशहूर यह एक महत्त्वपूर्ण भ्रष्टाचार विरोधी और लोकतंत्र समर्थक आंदोलन बन गया। भारत में JP आंदोलन के उदय से संबंधित कुछ प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैं:
- **गुजरात अशांति (जनवरी 1974):** गुजरात में एक छात्र आंदोलन ने खाद्यान्न, भोजन पकाने के तेल और बुनियादी वस्तुओं की बढ़ती कीमतों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया। सरकार ने बल का उपयोग किया, जिसके परिणामस्वरूप राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। इंदिरा गांधी ने मार्च 1975 ई. में चल रहे विरोध प्रदर्शनों के जवाब में विधानसभा को भंग कर दिया था।
- **बिहार अशांति (मार्च, 1974):** गुजरात विद्रोह के जवाब में बिहार में छात्रों ने इसी तरह का आंदोलन शुरू किया। इस आंदोलन की खासियत जयप्रकाश नारायण (JP) का उदय था, जिन्होंने 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वान किया था। इस आंदोलन में बिहार में कांग्रेस सरकार के इस्तीफे और विधानसभा को भंग करने की माँग की गई थी।
- **JP की संसद तक रैली:** घटनाओं के एक महत्त्वपूर्ण मोड़ में, जयप्रकाश नारायण ने 1975 ई. में संसद तक एक विशाल जन मार्च का नेतृत्व किया, जिसमें भारी जनभागीदारी हुई। यह राजधानी में सबसे बड़ी राजनीतिक रैलियों में से एक थी और इसने उनके नेतृत्व वाले आंदोलनों के बढ़ते प्रभाव का संकेत दिया।
- **राष्ट्रव्यापी आंदोलन और संपूर्ण क्रांति का आह्वान:** 12 जून, 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गांधी को चुनावी कदाचार का दोषी पाया। न्यायालय ने रायबरेली निर्वाचन क्षेत्र में चुनाव के फैसले को 'अमान्य' घोषित कर दिया और उन्हें छह साल तक निर्वाचित पद पर बने रहने से रोक दिया। इसने जयप्रकाश नारायण को सेना और पुलिस से सरकार के उन आदेशों को अस्वीकार करने का आग्रह करने के लिए प्रेरित किया जो अवैध या अनैतिक थे और इंदिरा और मुख्यमंत्रियों दोनों के इस्तीफे की माँग की। उन्होंने सामाजिक परिवर्तन पर ध्यान केंद्रित करते हुए 'संपूर्ण क्रांति' नामक एक व्यापक क्रांतिकारी एजेंडे की वकालत की।

- **JP का संपूर्ण क्रांति का विचार:** जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति की अवधारणा में सात क्रांतियाँ शामिल थीं - सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, वैचारिक, शैक्षिक और आध्यात्मिक। मार्क्सवादी और गांधीवादी दोनों ही प्रभावों में निहित, इसका उद्देश्य भारतीय समाज का निरंतर और व्यापक परिवर्तन करना था। हालाँकि, एक विशिष्ट संरचना की कमी, एक स्पष्ट विचारधारा की अनुपस्थिति और प्रस्तावित सामाजिक परिवर्तनों को लागू करने में चुनौतियों के कारण आलोचनाएँ उठीं। आलोचकों ने जेपी के विशेषज्ञ भागीदारी के आह्वान और आंदोलन की कथित विफलता की ओर इशारा किया, इसे "अव्यवहारिक स्वप्नलोक" माना। एक व्यापक आंदोलन को प्रेरित करने के बावजूद, संपूर्ण क्रांति की व्यावहारिकता को संदेह का सामना करना पड़ा।

III. मंडल युग

- 1990 के दशक में मंडल आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन से उच्च जाति के छात्रों के नेतृत्व में कई विरोध प्रदर्शन हुए, जिसने हिंदी भाषी क्षेत्र के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य को महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया।

4. उदारीकरण के बाद के छात्र आंदोलन

I. उद्भव और प्रभाव

- उदारीकरण के बाद के दौर में छात्र आंदोलनों का एक नया दौर शुरू हुआ, जिसमें **नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) और राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) के खिलाफ महत्त्वपूर्ण विरोध प्रदर्शन शामिल थे।**

II. प्रसिद्ध आंदोलन

- हैदराबाद विश्वविद्यालय में **रोहित वेमुला की आत्महत्या के** बाद हुए आंदोलन तथा उस्मानिया विश्वविद्यालय और हैदराबाद विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा संचालित तेलंगाना आंदोलन, समकालीन भारत में छात्र सक्रियता की निरंतर प्रासंगिकता और प्रभाव को उजागर करते हैं।
- **फीस मस्ट फॉल अभियान (2020 के बाद):** वैश्विक 'फीस मस्ट फॉल' आंदोलनों से प्रेरित होकर, कई भारतीय संस्थानों में छात्रों ने उच्च ट्यूशन फीस के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया, विशेष रूप से COVID-19 महामारी के दौरान जब छात्रों से ऑनलाइन कक्षाओं के बावजूद पूरी फीस का भुगतान करने की उम्मीद की जा रही थी।
- **पिंजरा तोड़ आंदोलन (2015 के बाद):** पिंजरा तोड़ विभिन्न भारतीय विश्वविद्यालयों में महिलाओं के लिए भेदभावपूर्ण छात्रावास नियमों के खिलाफ लड़ने वाली महिला छात्राओं का एक समूह है। यह आंदोलन दिल्ली में शुरू हुआ लेकिन जल्दी ही देश के अन्य हिस्सों में फैल गया।

जबकि औपनिवेशिक संदर्भ में छात्र आंदोलन मुख्य रूप से राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम से प्रेरित थे, उत्तर-औपनिवेशिक छात्र आंदोलन मुख्य रूप से स्थानीय शिकायतों और परिसर की राजनीति के इर्द-गिर्द संगठित हुए हैं। इस बदलाव के बावजूद, सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन पर उनका प्रभाव महत्त्वपूर्ण रहा है, जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया में युवाओं की भागीदारी के महत्त्व को रेखांकित करता है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

पिंजरा तोड़ आंदोलन, फीस मस्ट फॉल अभियान, नागरिकता संशोधन अधिनियम, राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर, मंडल युग, राजभाषा अधिनियम, सविनय अवज्ञा आंदोलन, संपूर्ण क्रांति, आपातकाल, नवनिर्माण आंदोलन, वंचित छात्र समुदाय।

भारत में कृषि आंदोलन: एक ऐतिहासिक अवलोकन

स्वतंत्रता-पूर्व कृषि आंदोलन

- स्वतंत्रता के बाद के कृषि आंदोलनों के प्रारंभिक चरण का पता स्वतंत्रता-पूर्व युग से लगाया जा सकता है।
- स्वतंत्रता संग्राम के दौरान शुरू की गई भूमि अधिकार और कृषि सुधारों की माँगें स्वतंत्रता के बाद भी होती रहीं।

कृषि में परिवर्तन के लिए नीतिगत उपाय

- 1950 के दशक में कृषि में परिवर्तन लाने के लिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर कई नीतिगत पहलें की गईं।
- भूमि सुधार, सामुदायिक विकास कार्यक्रम और कृषि विस्तार योजनाओं का उद्देश्य औपनिवेशिक काल से विरासत में मिले कृषि परिदृश्य को सुधारना था।

हरित क्रांति का प्रभाव

- 1960 के दशक में 'हरित क्रांति' की शुरुआत के परिणामस्वरूप नए कृषक वर्गों का उदय हुआ, नवीन संगठनात्मक स्वरूपों का उदय हुआ तथा राजनीतिक लामबंदी के नए तरीके सामने आए।
- इस अवधि में उच्च उपज वाली विभिन्न फसलों और प्रौद्योगिकी के कारण उत्पन्न सामाजिक-आर्थिक असमानताओं से संबंधित नए कृषि मुद्दे भी सामने आए।

पश्चिम बंगाल में नक्सलबाड़ी आंदोलन

- 1967 ई. में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) द्वारा शुरू किए गए इस आंदोलन का उद्देश्य सीमांत कृषि समुदायों के अधिकारों को सुरक्षित करना था।
- इस आंदोलन का प्रारंभिक लक्ष्य भूमि सुधार था, लेकिन अंततः इसका दायरा भ्रष्टाचार, शोषण और कुप्रशासन के बड़े मुद्दों तक विस्तृत हो गया।

चरण II: 1970-1990 का दशक

- 1970 और 1980 के दशक में मध्यम किसानों, कुलकों और ग्रामीण अमीरों जैसे विभिन्न वर्गों के नेतृत्व में विभिन्न किसान आंदोलनों का उदय हुआ।
- इस अवधि के दौरान भारतीय किसान यूनियन (BKU) का उदय हुआ, जिसने अधिक सरकारी न्यूनतम मूल्य, कृषि उपज की अंतरराज्यीय आवाजाही पर प्रतिबंध को समाप्त करने, उचित दरों पर विद्युत आपूर्ति, ऋण माफी और किसानों के लिए सरकारी पेंशन की माँग की।
- भारतीय किसान यूनियन (BKU) ने कई रैलियाँ, प्रदर्शन, धरने और **'जेल भरो' आंदोलन किए। उन्होंने** लामबंदी के लिए पारंपरिक जाति पंचायतों का इस्तेमाल किया, जो संख्या में काफी मजबूती के साथ एक दबाव समूह के रूप में काम कर रही थीं।

1990 से 2019 ई. तक

- वैश्वीकरण के युग के दौरान, किसानों के आंदोलनों ने देश की कृषि अर्थव्यवस्था में वैश्विक हस्तक्षेप से संबंधित मुद्दों पर प्रतिक्रिया करना शुरू कर दिया।
- उन्होंने पेटेंट कानूनों में बदलाव, विदेशी सरकारी सब्सिडी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भारतीय प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के प्रयासों का विरोध किया।
- **वंदना शिवा** जैसे आधुनिक विचारकों का तर्क है कि हरित क्रांति में लोकप्रिय प्रौद्योगिकियों ने भूमि की उर्वरता को लाभ पहुँचाने के बजाय नुकसान पहुँचाया है।

वर्तमान में किसानों का विरोध प्रदर्शन

- **भूमि अधिकार आंदोलन:** यह एक अखिल भारतीय आंदोलन है जो वर्ष 2015 के आसपास शुरू हुआ, जिसका ध्यान किसानों और स्थानीय लोगों के भूमि अधिकारों पर केंद्रित है। यह सरकार और निगमों द्वारा 'उचित मुआवजे और सहमति के बिना भूमि अधिग्रहण के विरोध' की वकालत करता है।
- **वर्ष 2020 के कृषि विधेयकों के खिलाफ किसानों का विरोध:** हाल के भारतीय इतिहास में सबसे बड़े और सबसे प्रभावशाली आंदोलनों में से एक किसान आंदोलन अगस्त, 2020 में शुरू हुआ था, जब भारत सरकार ने तीन कृषि विधेयक पारित किए, जिनका किसानों, विशेषकर पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों ने काफी विरोध किया। किसानों को डर था कि नए कानून न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) प्रणाली को समाप्त कर देंगे और उन्हें बड़े कॉरपोरेट्स की दया पर छोड़ देंगे। विरोध प्रदर्शन राष्ट्रीय राजधानी नई दिल्ली के चारों ओर एक साल तक चले धरने में परिणत हुआ, जिसके कारण नवंबर, 2021 में सरकार ने कानूनों को निरस्त करने का फैसला किया।
- **जल उपलब्धता के लिए स्थानीय आंदोलन:** भारत भर में विभिन्न स्थानीय आंदोलन, विशेष रूप से सूखाग्रस्त क्षेत्रों में, जल अधिकारों और सिंचाई सुविधाओं तक पहुँच पर ध्यान केंद्रित करते हैं। ये आंदोलन उपेक्षित किसानों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं जो अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं, लेकिन पानी की कमी का सामना करते हैं जो उनकी फसल की उपज और जीवन की गुणवत्ता को काफी प्रभावित करता है।

किसानों की ऋणग्रस्तता

किसानों के सामने सबसे बड़ी समस्याओं में से एक ऋणग्रस्तता थी, जिसे सरकार हल नहीं कर पाई। आँकड़े: 1954 ई. में RBI द्वारा गठित ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति ने पाया कि कृषकों की ऋण संबंधी 93 प्रतिशत जरूरतें निजी तौर पर, 3 प्रतिशत सरकार द्वारा, 3 प्रतिशत सहकारी समितियों द्वारा और 1 प्रतिशत वाणिज्यिक बैंकों द्वारा पूरी की जाती थीं। इस तिथि तक एस.जे. पटेल ने अनुमान लगाया कि वर्ष 1950-51 में किसानों ने 6,500 मिलियन रुपये ब्याज के रूप में और औपनिवेशिक शासन के अंत तक 14,200 मिलियन रुपये सालाना किराया और ऋण के रूप में चुकाए। सहकारी समितियों ने भूमि स्वामित्व के बजाय फसल उत्पादन के आधार पर ऋण देने की RBI की सलाह को नजरअंदाज कर दिया, जिससे भूमिहीन इस योजना से बाहर हो गए।

स्वतंत्र भारत में किसान आंदोलन

बंगाल में तेभागा और पंजाब में नहर कालोनियों के काश्तकारों जैसे कुछ आंदोलन विभाजन के दौरान सांप्रदायिक हिंसा के कारण रुक गए थे। लेकिन हैदराबाद के तेलंगाना और PEPSU के पटियाला क्षेत्र में, जो दोनों रियासतें भारत में शामिल हो गईं, आंदोलन लंबे समय तक चले।

तेलंगाना किसान संघर्ष (1946-51 ई.)

- निजाम शासन के तहत, तेलंगाना (हैदराबाद का तेलुगु भाषी क्षेत्र) के किसानों को जागीरदारों और देशमुखों द्वारा गंभीर सामंती उत्पीड़न का सामना करना पड़ा। कम्युनिस्टों ने उन्हें अंग्रेजों की कृषि नीतियों और जमींदारों की वेथ बेगार (जबरन मजदूरी) के खिलाफ संगठित किया। कम्युनिस्टों के साहसिक कार्यों से प्रेरित होकर 1945 ई. से किसान आंदोलन तेजी से बढ़ा।
- **निजाम विरोधी आंदोलन:** पाकिस्तान और कुछ अंग्रेजों द्वारा समर्थित हैदराबाद के निजाम ने स्वतंत्रता के बाद भारतीय संघ में शामिल होने का विरोध किया। राज्य के लोग एकीकरण चाहते थे और राज्य कांग्रेस का अनुसरण करते थे। कम्युनिस्ट निज़ाम विरोधी, एकीकरण समर्थक आंदोलन में शामिल हो गए। निजाम विरोधी आंदोलन के बाद लोगों की इच्छाशक्ति दिखने लगी, भारतीय सेना हैदराबाद में घुस गई और निजाम और उसके सैनिकों ने हार मान ली। सेना ने ग्रामीण इलाकों से रजाकारों को खदेड़ दिया और किसानों का समर्थन हासिल कर लिया।
- **हैदराबाद के एकीकरण के बाद**: कम्युनिस्टों ने अपने हथियार रखने और साम्राज्यवाद समर्थक, बुर्जुआ जमींदार नेहरू सरकार से लड़ने का फैसला किया। वे जंगलों में छिप गए और भारतीय सेना पर हमला किया, लेकिन उन्हें एहसास नहीं हुआ कि भारतीय सेना मजबूत और आधुनिक थी।
- **आंदोलन का अंत:** इसके बाद एक दुखद और अनावश्यक संघर्ष हुआ। सेना ने कार्यकर्ताओं को गाँवों से खदेड़ दिया, जिससे कई किसान आहत हुए। कम्युनिस्टों ने जंगलों में अपने ठिकानों को फिर से बनाने की कोशिश की, लेकिन वे असफल रहे। 1951 ई. में आंदोलन समाप्त हो गया, जब भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने मॉस्को का दौरा करने के बाद अपनी नीति बदल दी। तब तक, जंगलों में केवल कुछ ही लोग बचे थे। कई लोग मारे गए या जेल गए।
- **सरकारी कानून:** सरकार ने 1949 ई. में जागीरदारी को समाप्त करके तीव्रता से काम किया और 1950 ई. का हैदराबाद काश्तकारी और कृषि भूमि अधिनियम पारित किया। 6,00,000 से अधिक काश्तकारों को 'संरक्षित' काश्तकार घोषित किया गया, जिन्हें आसान शर्तों पर जमीन खरीदने का अधिकार था। 1950 के दशक के मध्य में भूमि की अधिकतम सीमा तय की गई। किसानों की राजनीतिक जागरूकता ने भूमि सुधारों को बेहतर ढंग से लागू करने में मदद की। आंदोलन विफल होने के बाद जो जमींदार वापस आए, वे पुराने तौर-तरीकों को फिर से शुरू नहीं कर सके। वे प्रायः सस्ते दामों पर जमीन बेचते थे और उन्हें मजदूरी बढ़ाने के लिए दबाव का सामना करना पड़ता था।
- इस आंदोलन ने तेलंगाना में जमींदारी प्रथा को समाप्त कर दिया, लेकिन यह निजाम विरोधी एकीकरण समर्थक संघर्ष में पहले ही हो चुका था, जहाँ कम्युनिस्टों ने जनता का नेतृत्व किया और कट्टरपंथी किसान माँगों को आवाज दी।

पटियाला मुजारा आंदोलन (1930-1952 ई.)

- पटियाला (पंजाब की सबसे बड़ी रियासत) में मुजारा या किरायेदारों का आंदोलन 1930 के दशक के अंत में शुरू हुआ था। बिस्वेदार (जमींदारों के लिए स्थानीय शब्द), राजस्व संग्रहकर्ता थे, जो बाद में मालिकाना हक का दावा करने में सफल रहे। उन्होंने 800 गाँवों के किसानों को अधिभोगी किरायेदारों और इच्छानुसार किरायेदारों की स्थिति में पहुँचा दिया। नए किरायेदार नए जमींदारों से नाराज थे, जिनका जमीन पर कोई वैध दावा नहीं था। वह जमीन जो पीढ़ियों से काश्तकारों की थी।
- **कम्युनिस्टों की भूमिका:** 1930 के दशक तक, पड़ोसी क्षेत्रों में किसान आंदोलनों में कम्युनिस्ट काफी सक्रिय थे। जल्द ही, वे मुजारा आंदोलन में अग्रणी शक्ति के रूप में उभरे। 1945 ई. तक आंदोलन मुजारों और बिस्वेदारों के बीच खुले टकराव में बदल गया था । प्रजामंडल ने आंदोलन को अपना समर्थन दिया।
- **पटियाला के एकीकरण के बाद:** स्वतंत्रता के पश्चात, पटियाला भारतीय संघ में शामिल हो गया। विपक्ष द्वारा अलग-थलग किए गए पटियाला के महाराजा ने मुजारों पर कठोर दमन शुरू कर दिया। जुलाई, 1948 में पेप्सू (PEPSU) के गठन के बाद दमन कम हो गया, जो पंजाब की तत्कालीन रियासतों को मिलाकर एक नया प्रांत था। राज्य कमजोर था और विभिन्न समूहों को अपने लिए लड़ना पड़ा। कुछ जमींदारों ने सशस्त्र गिरोहों का इस्तेमाल किया, इसलिए आंदोलन को अपनी सशस्त्र शाखा के साथ जवाबी कार्रवाई करनी पड़ी।
- **लाल कम्युनिस्ट पार्टी:** 1948 ई. में तेजा सिंह स्वतंत्र और पंजाब के कुछ कम्युनिस्टों ने, जो CPI के साथ सामंजस्य नहीं बैठा पाए थे, लाल कम्युनिस्ट पार्टी और एक सशस्त्र स्वयंसेवक दल का गठन किया। 1948 ई. के अंत में, इस सशस्त्र समूह ने मुजारों को बिस्वेदारों और उनके गिरोहों से बचाया।
- **कानून बनने के बाद परिदृश्य में सुधार:** जब पेप्सू काश्तकारी और कृषि भूमि अधिनियम, 1955 पेश किया गया तो हालात बदल गए, जिसने काश्तकारों को बेदखली से बचाया। 1954 ई. में पेप्सू अधिभोगी काश्तकारों (स्वामित्व अधिकारों का निहित होना) अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के तहत काश्तकारों को भूमि राजस्व से बारह गुना अधिक मुआवजा देकर अपनी जमीन खरीदने की अनुमति दी गई। कम्युनिस्ट चाहते थे कि बिना मुआवजा दिए जमीन हस्तांतरित कर दी जाए, लेकिन काश्तकारों ने इस सौदे पर सहमति जताई और विरोध करना बंद कर दिया।

आगे की राह:

मौजूदा कृषि नीतियों के क्रियान्वयन में कमियों की पहचान करना और उन्हें दूर करना आवश्यक है। भूमि सुधार, सिंचाई योजनाओं और फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य के प्रभावी क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। ऋणग्रस्तता, फसलों के लिए अपर्याप्त मूल्य और भूमि जोत से संबंधित मुद्दों के कारण किसानों के बीच व्याप्त संकट को दूर करने के लिए पहल की जानी चाहिए।

प्रमुख शब्दावलियाँ

तेलंगाना किसान संघर्ष, पटियाला मुजारा आंदोलन, किसान ऋणग्रस्तता, भूमि अधिकार आंदोलन, हरित क्रांति, भारतीय किसान यूनियन

भारत में जाति आंदोलन: ऐतिहासिक विश्लेषण और वर्तमान प्रवृत्ति

दलित आंदोलन

प्रथम चरण: 1947 से 1970 का दशक

स्वतंत्रता के बाद, दलित आंदोलनों का मुख्य उद्देश्य सतत जाति-आधारित असमानताओं के विरुद्ध लड़ना तथा आरक्षण और सामाजिक न्याय के प्रभावी कार्यान्वयन की माँग करना था।

दो प्रकार के आंदोलन का उदय

- ***सुधारात्मक*** **:** इन आंदोलनों ने जाति व्यवस्था में सुधार का प्रयास किया।
- ***वैकल्पिक:*** इनका उद्देश्य धर्म परिवर्तन, शिक्षा, आर्थिक स्थिति में सुधार या राजनीतिक वर्चस्व के माध्यम से वैकल्पिक सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनाएँ निर्मित करना था।
- 1970 के दशक की शुरुआत में, पहली पीढ़ी के दलित स्नातकों ने स्वयं को मुखर करना शुरू कर दिया, जिससे महाराष्ट्र में दलित पैंथर्स जैसे उग्रवादी संगठनों का गठन हुआ।
- दलित आंदोलन ने सामाजिक न्याय और सम्मान के लिए प्रयास किया तथा चुनावी बहुमत हासिल करने के लिए जातिगत लामबंदी का लाभ उठाया।

द्वितीय चरण: 1980 से वर्तमान तक

- 1980 के दशक में दलित राजनीतिक संगठनों की शक्ति में वृद्धि देखी गई। उदाहरण के लिए, 1978 ई. में स्थापित बामसेफ (BAMCEF) (पिछड़ा और अल्पसंख्यक समुदाय कर्मचारी महासंघ) ने राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए बहुजनों - SC, ST और OBC अल्पसंख्यकों - के हित की वकालत की। दलित चेतना दो वर्गों में विभाजित हो गई: पहला वर्ग आरक्षण और बाजार सुधारों से लाभान्वित हुआ, जो पूँजीवादी वर्ग में विकसित हुआ। दूसरे ने पारंपरिक व्यवसाय (जैसे, बंधुआ मजदूरी, सफाई कार्य) जारी रखा और बाजार सुधारों और आरक्षण से लाभ उठाने में विफल रहे।

दलित पैंथर्स आंदोलन

- **दलित पैंथर्स का उदय (1972):** डॉ. बी.आर. अंबेडकर के दर्शन से प्रेरित एक नव-सामाजिक आंदोलन दलित पैंथर्स की स्थापना 1972 ई. में हुई थी।
- **स्थापना और दृष्टिकोण:** 29 मई, 1972 को महाराष्ट्र में नामदेव ढसाल और जे. वी. पवार द्वारा स्थापित इस आंदोलन का उद्देश्य जातिगत भेदभाव का मुकाबला करना था, जो पारंपरिक दलित आंदोलनों से अलग था।
- **ब्लैक पैंथर पार्टी से प्रेरणा:** ब्लैक पैंथर पार्टी से प्रेरणा लेते हुए, जो एक समाजवादी आंदोलन था, जिसने 20वीं सदी के मध्य में अमेरिकी गृहयुद्ध के दौरान अफ्रीकी-अमेरिकियों के अधिकारों के लिए नस्लीय भेदभाव के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी, दलित पैंथर्स ने एक समान लोकाचार अपनाया।

पिछड़ा एवं अल्पसंख्यक समुदाय कर्मचारी महासंघ (बामसेफ)(BAMCEF)

- **बामसेफ की स्थापना (1978):** 1978 ई. में कांशीराम ने पिछड़ा एवं अल्पसंख्यक समुदाय कर्मचारी महासंघ (बामसेफ) की स्थापना की।
- **मिशन और आदर्श वाक्य:** बामसेफ का मिशन, जिसका आदर्श वाक्य "शिक्षित बनो-संगठित रहो और संघर्ष करो" है, का उद्देश्य प्रचलित जाति व्यवस्था के खिलाफ उपेक्षित समुदायों को जागरूक करना और संगठित करना है।
- **वकालत और विस्तार:** कांशीराम ने सक्रिय रूप से अपने समूह का विस्तार किया, डॉ. बी.आर. अंबेडकर के सिद्धांतों और शिक्षाओं की वकालत की, पिछड़े और अल्पसंख्यक समुदायों को सशक्त बनाने के साधन के रूप में शिक्षा, संगठन और आंदोलन पर जोर दिया।

प्रमुख शब्दावलियाँ

दलित पैंथर्स आंदोलन, सतत जाति-आधारित असमानताएँ, "शिक्षित बनो-संगठित रहो और संघर्ष करो'', सुधारवादी।

पिछड़ा वर्ग आंदोलन

- **प्रथम चरण: 1947-2000 ई.**: 1920 के दशक से, जातिगत मुद्दों पर केंद्रित संगठन का उदय हुआ, जैसे कि यूनाइटेड प्रोविंस हिंदू बैकवर्ड क्लासेस लीग, ऑल इंडिया बैकवर्ड क्लासेस फेडरेशन और ऑल इंडिया बैकवर्ड क्लासेस लीग। 1956 ई. में नियुक्त **काका कालेलकर आयोग ने** लगभग 3,000 जनजातियों या कुलों को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के रूप में पहचाना। **हरित क्रांति के उदय के साथ, ग्रामीण अर्थव्यवस्था के एक महत्त्वपूर्ण हिस्से को नियंत्रित करने वाली** जाट और यादव जैसी प्रमुख जातियों को लाभ मिलना शुरू हो गया। 1992 ई. में **मंडल आयोग की** रिपोर्ट के कार्यान्वयन ने और अधिक तीव्रता प्रदान की।
- **द्वितीय चरण: वर्ष 2001 से वर्तमान तक**: केंद्र सरकार के संस्थानों में अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) आरक्षण की सिफारिश 1992 ई. में लागू की गई थी, जिसमें वर्ष 2006 में शिक्षा संबंधी कोटा स्थापित किया गया था। इसके लागू होने के दो दशक बाद भी, विभिन्न अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) समुदायों के बीच आरक्षण लाभों में घोर असमानता बनी हुई है। हरित क्रांति के दौरान लाभान्वित होने वाली प्रमुख जातियाँ अब कृषि संकट का सामना कर रही हैं, जिससे उनका प्रभुत्व कम हो रहा है। पिछड़े वर्गों के छात्रों ने सक्रिय रूप से अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) कोटा आरक्षण की माँग की है, जिसके कारण पाटीदार आंदोलन, गुजरात, मराठा आंदोलन, महाराष्ट्र और हरियाणा में जाट आंदोलन जैसे महत्त्वपूर्ण आंदोलन हुए हैं।

स्वयं को संगठित करके, तथाकथित निम्न जातियाँ अपने सामूहिक हितों का प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व करने में सक्षम रही हैं, जिससे हिंदू समाज के पदानुक्रमिक पैटर्न के भीतर उनकी स्थिति बदल गई है। हालाँकि, यह आंदोलन अपनी जटिलताओं को बनाए रखते हुए और विकसित होता जा रहा है।

अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) मुद्दों में प्रगति

- **राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग की संवैधानिक मान्यता:** वर्ष 2018 में भारतीय संसद ने 123वाँ संविधान संशोधन विधेयक पारित किया, जिसने राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग (NCBC) को संवैधानिक दर्जा दिया। यह अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) समुदाय के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी, क्योंकि इससे अधिक प्रतिनिधित्व और शिकायतों के समाधान के लिए शक्ति सुनिश्चित हुई।
- **अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के उप- वर्गीकरण के लिए समिति: वर्ष 2017 में भारत सरकार ने** अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के उप- वर्गीकरण की जाँच के लिए **(सेवानिवृत्त) न्यायमूर्ति जी रोहिणी के** नेतृत्व में एक आयोग का गठन किया। इसका उद्देश्य अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के बीच आरक्षण का अधिक न्यायसंगत वितरण सुनिश्चित करना था, विशेष रूप से समूह के सबसे उपेक्षित लोगों के लिए।
- **स्थानीय निकायों में अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) आरक्षण:** भारतीय संविधान के 73वें और 74वें संशोधन द्वारा क्रमशः पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों में अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के लिए आरक्षण सुनिश्चित किया गया। यह जमीनी स्तर पर अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) का राजनीतिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण रहा है।
- **नई जातियों का समावेश:** पिछले कुछ वर्षों में कई जातियों को अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) सूची में शामिल किया गया है, जिससे उन्हें शिक्षा और सरकारी नौकरियों में आरक्षण प्राप्त हो सके।
- **शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण:** केंद्रीय शैक्षिक संस्थान (प्रवेश में आरक्षण) अधिनियम, 2006 ने केंद्रीय शैक्षिक संस्थानों में अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) छात्रों के लिए आरक्षण लागू किया, जिससे समाज के इस वर्ग के लिए शैक्षिक अवसरों में वृद्धि हुई।

प्रमुख शब्दावलियाँ

काका कालेलकर आयोग, हरित क्रांति, आरक्षण, राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग, न्यायमूर्ति जी रोहिणी समिति।

पर्यावरण आंदोलन

ब्रंटलैंड रिपोर्ट 1987 (विषय: हमारा साझा भविष्य, OUR COMMON FUTURE) के अनुसार "सतत विकास वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना, वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करता है।"

भारत ने पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा के लिए स्वतंत्रता के बाद से कई पर्यावरण आंदोलनों का सामना किया है।

कुछ प्रमुख आंदोलन

चिपको आंदोलन: चिपको आंदोलन, जो 1970 के दशक में शुरू हुआ, भारत में एक महत्त्वपूर्ण पर्यावरण आंदोलन था, विशेषकर उत्तराखंड राज्य में (जो पहले उत्तर प्रदेश का हिस्सा था)। इस आंदोलन का उद्देश्य वनों की सुरक्षा और संरक्षण करना था, विशेषकर वाणिज्यिक कटाई गतिविधियों के खिलाफ जो क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र को खतरे में डाल रही थीं।

- **उत्पत्ति और उत्प्रेरक:** आधुनिक चिपको आंदोलन की शुरुआत 1973 ई. में उत्तराखंड के चमोली जिले में हुई थी, जो बढ़ती विकास आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया में पेड़ों की बेतहाशा कटाई से शुरू हुआ था। 1970 ई. में व्यापक बाढ़ के बाद इस आंदोलन ने गति पकड़ी, जिसका कारण वाणिज्यिक कटाई के कारण वनों की कटाई थी।
- **पेड़ों का आलिंगन:** 'चिपको' नाम हिंदी शब्द 'आलिंगन' से आया है, जो ग्रामीणों, विशेषकर महिलाओं द्वारा पेड़ों को काटने से रोकने के लिए उन्हें गले लगाने और घेरने के कार्य का प्रतीक है। विरोध के इस अहिंसक रूप का उद्देश्य लकड़हारों को पेड़ों को काटने से रोकना था।
- **प्रमुख हस्तियाँ:** गांधीवादी पर्यावरणविद और दशोली ग्राम स्वराज्य संघ (DGSM) के संस्थापक चंडी प्रसाद भट्ट ने चिपको आंदोलन का नेतृत्व करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। एक अन्य प्रमुख पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा ने आंदोलन की सफलता में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इसके अलावा चिपको कवि घनश्याम रतूड़ी ने भी आंदोलन में उल्लेखनीय योगदान दिया।
- **महिलाओं की भूमिका:** चिपको आंदोलन में महिलाओं ने मुख्य भूमिका निभाई। चूँकि, वे मुख्य रूप से कृषि, पशुधन और बच्चों के लिए उत्तरदायी थीं, इसलिए वनों की कटाई से सबसे अधिक प्रभावित वे ही थीं। उल्लेखनीय कार्यकर्ताओं में गौरा देवी, सुदेशा देवी आदि थीं।
- **पर्यावरणीय प्रभाव:** पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में आंदोलन को गति मिली, जिन्होंने जंगलों और पहाड़ों के विनाश के खिलाफ अभियान चलाया। चिपको विरोध के परिणामस्वरूप, तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने उत्तराखंड हिमालय में वाणिज्यिक कटाई पर 15 साल की रोक लगा दी। 1980 ई. का वन संरक्षण अधिनियम और भारत में पर्यावरण और वन मंत्रालय की स्थापना में आंशिक रूप से, चिपको द्वारा बनाई गई चेतना का भी योगदान है।
- **वैश्विक मान्यता:** चिपको नेताओं को अंतरराष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हुई, जिसमें पुरस्कार भी शामिल हैं, जैसे कि चंडी प्रसाद भट्ट को 1982 ई. में रेमन मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आंदोलन का प्रभाव भारत से आगे तक गया और इसने वैश्विक पर्यावरण विमर्श में योगदान दिया।

अप्पिको आंदोलन (1983): अप्पिको आंदोलन (कन्नड़ में 'गले लगाने' के लिए स्थानीय शब्द अप्पिको है), 1983 ई. में कर्नाटक के उत्तर कन्नड़ जिले में उदय हुआ, जिसने हिमालय में प्रसिद्ध चिपको आंदोलन से प्रेरणा ली। उत्तराखंड में वृक्ष को गले लगाने की सफलता को देखते हुए, सलकानी के लोगों ने भी इसी तरह के आंदोलन को अपनाया।

अप्पिको आंदोलन के उद्देश्य

- **पश्चिमी घाट का संरक्षण:** इसका प्राथमिक लक्ष्य पश्चिमी घाट में उष्णकटिबंधीय वनों की सुरक्षा करना है तथा उनके पारिस्थितिक महत्त्व को पहचानना है।
- **हरियाली पुनर्स्थापित करना:** वन रहित क्षेत्रों में, पर्यावरण पुनरुद्धार में योगदान देना।
- **तर्कसंगत उपयोग को बढ़ावा देना:** वन संसाधनों पर दबाव को कम करने के उद्देश्य से, यह आंदोलन प्राकृतिक संसाधनों के तर्कसंगत उपयोग की वकालत करता है। इसका ध्यान सतत कार्यप्रणाली पर है।

अप्पिको आंदोलन का प्रभाव महत्त्वपूर्ण रहा है। पश्चिमी घाट के पारिस्थितिक महत्त्व के बारे में इसने जो जागरूकता फैलाई, उससे संरक्षण के प्रति जिम्मेदारी की भावना बढ़ी। अंततः, अप्पिको आंदोलन पर्यावरणीय चेतना को बढ़ावा देने और महत्त्वपूर्ण पारिस्थितिकी प्रणालियों के संरक्षण की वकालत करने में जमीनी स्तर के आंदोलनों की शक्ति का प्रमाण है।

नर्मदा बचाओ आंदोलन (NBA), 1985 ***आंदोलन नदी की तरह है, और नदी आंदोलन की तरह है।*** - 'वर्ड्स ऑन वॉटर', (संजय काक की NBA पर क्लासिक डॉक्यूमेंट्री)

- **NBA आंदोलन की उत्पत्ति (1985):** 1985 ई. में शुरू किया गया नर्मदा बचाओ आंदोलन (NBA) एक व्यापक आंदोलन के रूप में उभरा, जो नर्मदा नदी पर बड़े बाँधों के निर्माण के कारण विस्थापन का सामना कर रहे 2,50,000 से अधिक व्यक्तियों को प्रभावित करने वाली अपर्याप्त पुनर्वास और पुनर्स्थापन (R&R) नीतियों का विरोध करता है। शुरू में इसका नाम नर्मदा धरणग्रस्त समिति रखा गया, जिसे 1989 ई. में बदलकर NBA कर दिया गया।
- **नर्मदा घाटी परियोजना और पृष्ठभूमि (1946-1978 ई.):** नर्मदा घाटी परियोजना, जिसकी संकल्पना 1946 ई. में की गई थी, आधिकारिक तौर पर नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण के अंतिम आदेशों के बाद 1978 ई. में शुरू हुई। इन आदेशों में प्रभावित आबादी के लिए पुनर्वास और पुनर्स्थापन योजनाओं की रूपरेखा दी गई थी।
- **मेधा पाटकर द्वारा कानूनी हस्तक्षेप (1985-2000 ई.)** : 1985 ई. में मेधा पाटकर ने नर्मदा घाटी परियोजना से जुड़े अपर्याप्त पुनर्वास और पुनर्स्थापन उपायों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। कानूनी हस्तक्षेप वर्ष 2000 तक जारी रहा जब अदालत ने पर्यवेक्षित पुनर्वास और पुनर्स्थापन की शर्त के तहत निर्माण की अनुमति दी।
- **NBA की वकालत और प्रभाव:** नर्मदा बचाओ आंदोलन ने प्रमुख बाँध परियोजनाओं से जुड़ी पर्यावरण और पुनर्वास संबंधी चिंताओं पर महत्त्वपूर्ण ध्यान आकर्षित किया। इन पहलों से सबसे अधिक प्रभावित आदिवासी और वंचित समुदायों के सामने आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालकर, NBA ने बड़े बाँधों की मानवीय और पर्यावरणीय लागतों के बारे में जागरूकता बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस आंदोलन ने न्यायसंगत और व्यापक पुनर्वास

नीतियों के लिए एक प्रभावी वकालत की, जिसने ऐसी विकास परियोजनाओं से संबंधित चर्चाओं पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा।

नेशनल हेराल्ड समाचार पत्र की रिपोर्ट के अनुसार नर्मदा बचाओ आंदोलन मेधा पाटेकर के नेतृत्व में चलाए गए आंदोलन (NBA) को दुनिया भर में सबसे लंबे समय तक चलने वाले गांधीवादी 'सत्याग्रह' में से एक माना जाता है। यह पारंपरिक तरीकों का उपयोग करके आम लोगों द्वारा किए गए ऐतिहासिक संघर्ष का प्रतिनिधित्व करता है और नर्मदा नदी इस सतत प्रयास की साक्षी है।

पर्यावरणीय आपदाएँ

स्वतंत्रता के बाद पर्यावरणीय आपदाओं जैसे बाँध की विफलताओं का कुछ क्षेत्रों पर महत्त्वपूर्ण नकारात्मक प्रभाव पड़ा है, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:

- **भोपाल गैस त्रासदी, 1984:** वर्ष 1984 में भोपाल गैस त्रासदी ने बड़े पैमाने पर औद्योगिक दुर्घटना की संभावना को उजागर किया और नियामक निरीक्षण की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया। यह घटना, जिसने स्थानीय आबादी को प्रभावित किया, अमेरिका स्थित यूनियन कार्बाइड कंपनी से जुड़ी थी, जो वर्तमान में डॉव केमिकल्स के स्वामित्व में है।

  दुर्भाग्यपूर्ण रात: 3 दिसंबर, 1984 की रात को संयंत्र से लगभग 40 टन घातक मिथाइल आइसोसाइनेट गैस का भारी रिसाव हुआ। वर्ष 2006 में एक सरकारी हलफनामे के अनुसार, भोपाल गैस रिसाव के कारण 5,58,125 लोग घायल हुए, जिनमें 38,478 अस्थायी आंशिक चोटें और लगभग 3,900 गंभीर और स्थायी विकलांगताएँ शामिल थीं।
- **मच्छु बाँध आपदा, 1979:** 10 अगस्त, 1979 को गुजरात के मोरबी क्षेत्र में मच्छु नदी में भारी बारिश हुई, जिसमें सामान्य से लगभग सात गुना अधिक बारिश हुई और नीचे की ओर अत्यधिक पानी के प्रवाह **ने** मानव बस्तियों के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर दिया।

  बाँध की विफलताएँ: उग्र नदी ने सबसे पहले मच्छू बाँध-1 को प्रभावित किया और फिर मच्छू बाँध-2 को प्रभावित किया। अधिकांश गेट खोलने के बावजूद, 4 किलोमीटर लंबा मच्छू बाँध-2 11 अगस्त, 1979 को लगभग 24 घंटे के पूर्ण संचालन के बाद टूट गया।

उठाए गए कदम:

"वायु और जल, जंगल और वन्य जीवन की रक्षा करने की योजनाएँ वास्तव में मनुष्य की रक्षा करने की योजनाएँ हैं।" - स्टीवर्ट उडाल।

- **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986-** यह अधिनियम, जिसे आमतौर पर 1984 ई. के भोपाल गैस रिसाव की प्रतिक्रिया माना जाता है, मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के निर्णयों को लागू करने के लिए बनाया गया था।
- **पर्यावरणीय प्रभाव आकलन (EIA) -** संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP), पर्यावरणीय प्रभाव आकलन (EIA) को एक उपकरण के रूप में परिभाषित करता है जिसका उपयोग निर्णय लेने से पहले किसी परियोजना के पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक प्रभावों की पहचान करने के लिए किया जाता है।
- **एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (1985):** यह मामला दिल्ली में श्रीराम फूड एंड फर्टिलाइजर्स लिमिटेड से ओलियम गैस रिसाव से जुड़ा है, जो भोपाल गैस त्रासदी से मिलता-जुलता है। एम.सी.मेहता बनाम भारत संघ मामले ने पर्यावरण वकालत में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिसमें 'पूर्ण दायित्व सिद्धांत' की शुरुआत की गई।
- **पूर्ण दायित्व सिद्धांत:** श्रीराम जैसे उद्योगों हेतु जो स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधियों में लगे हुए हैं, सर्वोच्च न्यायालय ने पूर्ण उत्तरदायित्व का नियम स्थापित किया है। इसका अर्थ है कि कोई भी उद्योग जो खतरनाक गतिविधियों में शामिल है और नुकसान पहुँचाता है, उसके परिणामों के लिए पूरी तरह उत्तरदायी है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

नर्मदा बचाओ आंदोलन (NBA), भोपाल गैस त्रासदी, अप्पिको आंदोलन, भूमि अधिकार और कृषि सुधार, मच्छू बाँध आपदा, सामुदायिक विकास कार्यक्रम, कृषि विस्तार, भारतीय किसान यूनियन, जेल भरो आंदोलन, न्यूनतम समर्थन मूल्य, धर्मांतरण, पेड़ों को गले लगाओ, काका कालेलकर आयोग, मंडल आयोग, एमसी मेहता बनाम भारत संघ।

7 स्वतंत्रता के बाद भारतीय उपमहाद्वीप

भारतीय उपमहाद्वीप में स्वतंत्रता के बाद का युग राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में बड़े बदलावों से चिह्नित था। इस अवधि में दो नए राष्ट्रों, भारत और पाकिस्तान का जन्म हुआ, जिसके बाद 1971 ई. में बांग्लादेश का निर्माण हुआ।

स्वतंत्रता और विभाजन

- **स्वतंत्रता: 15 अगस्त, 1947:** ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का अंत; स्वतंत्र भारत और पाकिस्तान का जन्म हुआ।
- **विभाजन:** ब्रिटेन की संसद ने 18 जुलाई 1947 को भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम पारित किया। इसने आदेश दिया कि 14-15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि तक भारत और पाकिस्तान के प्रभुत्व का सीमांकन कर दिया जाए।
- **रेडक्लिफ रेखा:** भारत और पाकिस्तान के बीच सीमा का निर्धारण हुआ।
- **व्यापक जनसंख्या विनिमय और सांप्रदायिक हिंसा:** इसके परिणामस्वरूप जान-माल का भारी नुकसान हुआ।

भारत

- **संविधान को अपनाना (1950):** भारत एक गणराज्य बना; एक संविधान अपनाया गया जो राजनीतिक और सामाजिक रूपरेखा को निर्धारित करता है।
- **राज्यों का पुनर्गठन (1956):** राज्य पुनर्गठन अधिनियम के तहत भारतीय राज्यों का मुख्यतः भाषाई आधार पर पुनर्निर्धारण किया गया।
- **आर्थिक विकास:** नियोजित आर्थिक विकास के लिए **पंचवर्षीय योजनाएँ** अपनाई गईं।
- **1991 ई. के आर्थिक सुधार:** भुगतान संतुलन के संकट से अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) सुधार शुरू किए गए।
- **सामाजिक विकास:** सामाजिक न्याय के लिए ऐतिहासिक कानून और आंदोलन, जिनमें अस्पृश्यता उन्मूलन, महिला अधिकार और हाशिए पर पड़े समुदायों के अधिकार शामिल हैं।

पाकिस्तान

- **राजनीतिक घटनाक्रम: सैन्य शासन:** नागरिक शासन के बीच सैन्य तानाशाही की कई अवधियाँ।
- **पूर्वी पाकिस्तान का संकट: सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मतभेदों के कारण पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान के बीच तनाव बढ़ गया। इसके परिणामस्वरूप एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में बांग्लादेश** का निर्माण हुआ।

भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध

- 1947 ई. का भारत-पाकिस्तान युद्ध (कराची समझौता)
- 1965 ई. का भारत-पाकिस्तान युद्ध (ताशकंद घोषणा)
- 1971 ई. का भारत-पाकिस्तान युद्ध (शिमला समझौता)
- 1999 ई. का भारत-पाकिस्तान युद्ध (ऑपरेशन विजय)

- **कराची समझौता:** भारत और पाकिस्तान ने अपना पहला युद्ध अक्टूबर, 1947 में जम्मू और कश्मीर को लेकर लड़ा था। युद्ध 1 जनवरी, 1949 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा युद्ध विराम की घोषणा के साथ समाप्त हुआ, जिसे जुलाई, 1949 में कराची समझौते द्वारा अनुमोदित किया गया था।
- **शिमला समझौता:** यह समझौता 1971 ई. के युद्ध के बाद 2 जुलाई, 1972 को हुआ था। इस समझौते में नियम तय किए गए थे। इस समझौते के तहत युद्ध विराम रेखा को दोनों देशों के बीच नई "नियंत्रण रेखा" के रूप में नामित किया गया था।
- **लाहौर घोषणा:** लाहौर घोषणा पत्र भारत और पाकिस्तान के बीच एक द्विपक्षीय समझौता और शासन संधि थी। इस संधि पर 21 फरवरी, 1999 को लाहौर में एक ऐतिहासिक शिखर सम्मेलन के समापन पर हस्ताक्षर किए गए थे और उसी वर्ष दोनों देशों की संसदों द्वारा इसकी पुष्टि की गई थी।
- **ऑपरेशन जिब्राल्टर (1965):** जम्मू और कश्मीर में घुसपैठ करने के लिए डिजाइन किया गया था, प्रशिक्षित और अच्छी तरह से सशस्त्र मुजाहिदीन और रजाकारों की कई टुकड़ियाँ, जिनका नेतृत्व पाकिस्तानी सेना के मेजर कर रहे थे, टुकड़ियाँ घुसपैठ करने में सफल रहीं, लेकिन बड़े पैमाने पर अशांति पैदा करने में विफल रहीं और उन्हें लोगों का समर्थन नहीं मिला। इसका उद्देश्य स्थानीय लोगों को भारत सरकार के खिलाफ विद्रोह करने के लिए उकसाना था। घुसपैठ का पता चलने के कारण ऑपरेशन विफल हो गया और स्थानीय लोगों ने विद्रोह नहीं किया। इसके कारण 1965 ई. का भारत-पाक युद्ध शुरू हुआ।
- **ऑपरेशन विजय:** 1999 ई. में भारत और पाकिस्तान ने लाहौर समझौते पर हस्ताक्षर किए। हालाँकि, पाकिस्तानी सैनिकों ने नियंत्रण रेखा (LoC) के भारतीय हिस्से की ओर घुसपैठ करना शुरू कर दिया, ताकि सियाचिन में तैनात भारतीय सैनिकों को अलग थलग किया जा सके। भारतीय सेना ने भारतीय क्षेत्र पर कब्जा करने वाले घुसपैठियों को वापस खदेड़ने के लिए ऑपरेशन विजय शुरू किया।
- **1984 ई. का ऑपरेशन मेघदूत:** उत्तरी लद्दाख के निकट रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण क्षेत्र सियाचिन ग्लेशियर पर कब्जा करने के लिए भारतीय सशस्त्र बलों का अभियान था।

ताशकंद घोषणा: 1966 ई. में सोवियत संघ की मध्यस्थता में ताशकंद घोषणा पर हस्ताक्षर किए गए, जो 1965 ई. के भारत-पाकिस्तान युद्ध के बाद भारत के साथ शांति के लिए एक अल्पकालीन प्रयास था।

वे परिस्थितियाँ जिनके कारण ताशकंद समझौता हुआ:

- **1965 ई. का भारत-पाक युद्ध:** ताशकंद समझौता मुख्य रूप से 1965 ई. के भारत-पाक युद्ध से शुरू हुआ, जो कच्छ के रण में सीमा पर झड़पों से शुरू हुआ और जम्मू-कश्मीर मुद्दे पर संघर्ष में बदल गया।
- **अंतरराष्ट्रीय दबाव:** शीत युद्ध के दौरान, अमेरिका और सोवियत संघ भारत-पाकिस्तान संघर्ष के बढ़ने से चिंतित थे, क्योंकि उन्हें क्षेत्रीय निहितार्थ और संभावित भागीदारी का डर सता रहा था।
- **युद्ध विराम और शांति वार्ता:** संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद ने भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध विराम के लिए प्रस्ताव 211 पारित किया। प्रीमियर कोसिगिन के नेतृत्व में सोवियत संघ ने शांति वार्ता में मध्यस्थता की, जिसके परिणामस्वरूप ताशकंद सम्मेलन हुआ।

ताशकंद समझौते के मुख्य पहलू

- **सैनिकों की वापसी:** भारत और पाकिस्तान दोनों ने 25 फरवरी, 1966 तक अपने-अपने सैनिकों को युद्ध-पूर्व स्थिति में वापस बुलाने पर सहमति व्यक्त की। इससे सीमाओं पर सैन्य तनाव में कमी आई।
- **राजनयिक संबंधों की बहाली:** ताशकंद समझौते में दोनों देशों के बीच सामान्य राजनयिक और आर्थिक संबंधों की बहाली का प्रावधान किया गया, जो युद्ध के दौरान बिगड़ गए थे।
- **युद्धबंदियों का आदान-प्रदान:** दोनों देश युद्धबंदियों का आदान-प्रदान करने तथा युद्ध-पूर्व स्थिति के अनुसार कब्जा किए गए क्षेत्रों को वापस करने पर सहमत हुए।
- **कोई क्षेत्रीय लाभ नहीं:** बड़े पैमाने पर संघर्ष के बावजूद, न तो भारत और न ही पाकिस्तान को युद्ध से कोई महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय लाभ प्राप्त हुआ।
- **आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना:** दोनों देश एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता का सम्मान करने पर सहमत हुए तथा एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की प्रतिबद्धता जताई।
- **विवादों का शांतिपूर्ण समाधान:** ताशकंद समझौते में भारत और पाकिस्तान के बीच जम्मू और कश्मीर के मुद्दे सहित सभी लंबित विवादों का बातचीत और कूटनीतिक माध्यमों से शांतिपूर्ण समाधान करने का आह्वान किया गया।

बांग्लादेश

बांग्लादेश की स्वतंत्रता (1971): पाकिस्तानी सेना द्वारा क्रूर दमन और उसके बाद भारत-पाकिस्तान युद्ध के बाद, पूर्वी पाकिस्तान बांग्लादेश के रूप में स्वतंत्र हो गया।

- **एक राष्ट्र का जन्म: 1971 ई. के मुक्ति संग्राम के** परिणामस्वरूप बांग्लादेश का गठन हुआ।
- **आर्थिक और सामाजिक विकास:** गरीबी, राजनीतिक अस्थिरता और प्राकृतिक आपदाओं जैसी चुनौतियाँ। मानव विकास और सामाजिक सुधार जैसे क्षेत्रों में प्रगति।

प्रभाव और परिणाम

- **क्षेत्रीय संबंध:** भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के बीच संबंध संघर्ष, सीमा विवाद और कूटनीतिक तनाव से भरे रहे हैं। इन चुनौतियों के बावजूद, शांति और क्षेत्रीय सहयोग के प्रयास किए गए हैं, जिसमें दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC) का गठन भी शामिल है।
- **वैश्विक प्रभाव:** भारतीय उपमहाद्वीप वैश्विक राजनीति, अर्थव्यवस्था और सांस्कृतिक आदान-प्रदान में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पिछले कुछ दशकों में, भारत, विशेष रूप से, एक प्रमुख वैश्विक देश और एक उभरती हुई अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है।

वे कारक जिन्होंने भारत को बांग्लादेश के उदय में निर्णायक भूमिका निभाने के लिए प्रेरित किया:

- **मानवीय संकट:** 1971 ई. में पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में पाकिस्तानी सेना द्वारा की गई क्रूर कार्रवाई के कारण एक बड़ा मानवीय संकट उत्पन्न हो गया। **लाखों शरणार्थी,** मुख्य रूप से **बंगाली भाषी हिंदू,** उत्पीड़न से बचने के लिए भारत भाग आए, जिससे भारत के संसाधनों और बुनियादी ढाँचे पर अत्यधिक दबाव पड़ा। भारत का हस्तक्षेप आंशिक रूप से इस मानवीय आपदा को संबोधित करने की तत्काल आवश्यकता से प्रेरित था।
- **सामरिक हित:** पूर्वी पाकिस्तान के स्वतंत्रता संग्राम ने भारत को अपने प्रतिद्वंद्वी पाकिस्तान को कमजोर करने का अवसर प्रदान किया। एक कमजोर और विभाजित पाकिस्तान, विशेष रूप से भारत के पूर्वी मोर्चे पर, पाकिस्तानी सेना द्वारा उत्पन्न सुरक्षा खतरे को कम करने में मदद करता।
- **भू-राजनीतिक विचार:** बांग्लादेश मुक्ति संग्राम में भारत का हस्तक्षेप शीत युद्ध की गतिशीलता से भी प्रभावित था। पाकिस्तान को संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन का समर्थन प्राप्त था, जबकि भारत ने सोवियत संघ से समर्थन माँगा था। बांग्लादेश की सहायता करके, भारत ने क्षेत्र में अमेरिका और चीन के प्रभाव को संतुलित करने और सोवियत संघ के साथ अपनी रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करने का प्रयास किया।
- **क्षेत्रीय स्थिरता:** भारत पूर्वी पाकिस्तान में संकट के क्षेत्रीय स्थिरता पर पड़ने वाले प्रभाव को लेकर चिंतित था। **शरणार्थियों के अंतः प्रवाह और संघर्ष के भारत के क्षेत्र में फैलने की संभावना से** भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा और क्षेत्रीय शांति पर गंभीर परिणाम हो सकते थे।

प्रमुख घटनाओं का कालक्रम

- **1947 ई.: भारत का विभाजन और ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता; भारत और पाकिस्तान का गठन।**
- **1949 ई.: पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना और ताइवान में रिपब्लिक ऑफ चाइना की स्थापना।**
- **1950 ई.: संविधान को अपनाने के साथ ही भारत एक गणराज्य बन गया।**
- **1956 ई.: भाषाई आधार पर भारतीय राज्यों का पुनर्गठन।**
- **1962 ई.:** भारत और चीन के बीच **भारत-चीन युद्ध,** जिसके परिणामस्वरूप चीन की जीत हुई और अक्साई चिन पर उसका कब्जा हो गया।
- **1965 ई.: द्वितीय भारत-पाकिस्तान युद्ध;** ऑपरेशन जिब्राल्टर।
- **1971 ई.: तृतीय भारत-पाकिस्तान युद्ध और पाकिस्तान से बांग्लादेश की स्वतंत्रता।**
- **1991 ई.: भारतीय अर्थव्यवस्था का उदारीकरण।**
- **1999 ई.: कारगिल युद्ध,** भारतीय विजय के साथ समाप्त हुआ।

प्रमुख शब्दावली:मानवीय संकट, भू-राजनीतिक विचार, सामरिक हित, क्षेत्रीय स्थिरता, 1971 ई. का मुक्ति संग्राम, ऑपरेशन मेघदूत , ऑपरेशन विजय, लाहौर घोषणा, ऑपरेशन जिब्राल्टर।

भारत का आर्थिक उत्थान

- **भारत नाममात्र सकल घरेलू उत्पाद (नॉमिनल GDP) के आधार पर दुनिया की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है,** जिससे वैश्विक अर्थव्यवस्था में एक प्रमुख देश के रूप में इसकी प्रस्थिति स्पष्ट हो गई है।
- यह सूचना प्रौद्योगिकी और विनिर्माण जैसे क्षेत्रों में इसकी वृद्धि से प्रदर्शित होता है।
- **इसके अलावा, भारत दुनिया में तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप इकोसिस्टम है, जो** महत्त्वपूर्ण नवाचार और रोजगार सृजन में योगदान देता है।
- **इसका एक उदाहरण फ्लिपकार्ट और पेटीएम जैसी तकनीकी कंपनियों का उदय है,** जिन्होंने क्रमशः ई-कॉमर्स और डिजिटल भुगतान क्षेत्रों में वैश्विक प्रभाव डाला है।
- इन घटनाक्रमों ने भारत के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन और इसके बढ़ते वैश्विक प्रभाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

विकसित भारत विजन: "सबके प्रयास से ही विकसित भारत का निर्माण होगा"

प्रधानमंत्री द्वारा 'विकसित भारत @2047: युवाओं की आवाज' का शुभारंभ "यह भारत के इतिहास का वह कालखंड है जब देश एक बड़ी छलांग लगाने जा रहा है" "भारत के लिए, यही समय है, सही समय है" "'विचार' (IDEA) की शुरुआत 'स्वयं' (I) से होती है, जैसे 'भारत' (INDIA) की शुरुआत 'स्वयं' (I) से होती है, विकास के प्रयास स्वयं से शुरू होते हैं" "युवा शक्ति परिवर्तन का वाहक भी है और परिवर्तन का लाभार्थी भी है"

- इसमें एक अमृत पीढ़ी तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया गया, जो राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखे। शिक्षा और कौशल से आगे बढ़ने की आवश्यकता और नागरिकों में राष्ट्रहित और नागरिक भावना के प्रति सजगता का आह्वान किया गया।
- "जब नागरिक, चाहे किसी भी भूमिका में हों, अपना कर्तव्य निभाना शुरू करते हैं, तो देश आगे बढ़ता है।"
- इसमें जल संरक्षण, विद्युत की बचत, कृषि में कम रसायनों का उपयोग और सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करके प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर ध्यान केंद्रित किया गया है।
- शिक्षाविद बंधुत्व का ध्यान स्वच्छता अभियान को नई ऊर्जा देने, जीवनशैली से जुड़ी समस्याओं से निपटने और युवाओं द्वारा मोबाइल फोन से परे दुनिया की खोज करने के तरीके सुझाने पर है। वे छात्रों के लिए आदर्श हैं। यह सामाजिक सोच शासन में भी परिलक्षित होती है और उन्होंने उपस्थित लोगों से यह देखने को कहा कि डिग्री धारकों के पास कम से कम एक व्यावसायिक कौशल अवश्य होना चाहिए।

निष्कर्ष

विकसित भारत @2047, स्वतंत्रता के 100वें वर्ष यानी वर्ष 2047 तक भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने का दृष्टिकोण है। इस दृष्टिकोण में आर्थिक वृद्धि, सामाजिक प्रगति, पर्यावरणीय सततता और सुशासन सहित विकास के विभिन्न पहलू शामिल हैं। भारतीय उपमहाद्वीप में स्वतंत्रता के बाद के युग में बहुत बड़े राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन हुए। भारत के विभाजन और भारत, पाकिस्तान और बाद में बांग्लादेश के जन्म ने इस क्षेत्र की नियति को आकार दिया। सांप्रदायिक हिंसा, राजनीतिक अस्थिरता और आर्थिक असमानताओं जैसी चुनौतियों के बावजूद, उपमहाद्वीप ने उल्लेखनीय प्रगति की है।

प्रमुख शब्दावलियाँ

विकसित भारत, सबका प्रयास, अमृत पीढ़ी, मानवीय संकट, भू-राजनीतिक विचार, रणनीतिक हित, क्षेत्रीय स्थिरता।

विगत वर्षों के प्रश्न

1. उन परिस्थितियों का विश्लेषण कीजिए जिनके कारण 1966 ई. में ताशकंद समझौता हुआ। समझौते की विशेषताओं की विवेचना कीजिए। **(2013)**
2. उन परिस्थितियों का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए जिनके कारण भारत को बांग्लादेश के उदय में निर्णायक भूमिका का निर्वहन करना पड़ा। **(2013)**

Saarthi

THE COACH

1 : 1 MENTORSHIP BEYOND THE CLASSES

- **Diagnosis** of candidates based on background, level of preparation and task completed.
- **Customized solution** based on Diagnosis.
- One to One **Mentorship.**
- Personalized schedule **planning.**
- Regular **Progress tracking.**
- **One to One classes** for Needed subjects along with online access of all the subjects.
- Topic wise **Notes Making sessions**.
- One Pager **(1 Topic 1 page)** Notes session.
- **PYQ** (Previous year questions) Drafting session.
- **Thematic charts** Making session.
- **Answer-writing** Guidance Program.
- **MOCK Test** with comprehensive & swift assessment & feedback.

Ashutosh Srivastava
(B.E. , MBA, Gold Medalist)
Mentored 250+ Successful Aspirants over a period of 12+ years for Civil Services & Judicial Services Exams at both the Centre and state levels.

Manish Shukla
Mentored 100+ Successful Aspirants over a period of 9+ years for Civil Services Exams at both the Centre and state levels.

WALL OF FAME
UTKARSHA NISHAD
UPSC RANK - 18
SURABHI DWIVEDI
UPSC RANK - 55
SATEESH PATEL
UPSC RANK - 163
SATWIK SRIVASTAVA
SDM RANK-3
DEEPAK SINGH
SDM RANK-20
ALOK MISHRA
DEPUTY JAILOR RANK-11
SHIPRA SAXENA
GIC PRINCIPAL (PCS-2021)
SALTANAT PARWEEN
SDM (PCS-2022)
KM. NEHA
SUB REGISTRAR (PCS-2021)
SUNIL KUMAR
MAGISTRATE (PCS-2021)
ROSHANI SINGH
DIET (PCS-2020)
AVISHANK S. CHAUHAN
ASST. COMMISSIONER
SUGARCANE (PCS-2018)
SANDEEP K. SATYARTHI
CTD (PCS-2018)
MANISH KUMAR
DIET (PCS-2018)
AFTAB ALAM
PCS OFFICER
ASHUTOSH TIWARI
SDM (PCS-2022)
CHANDAN SHARMA
Magistrate
Roll no. 301349
YOU CAN BE THE NEXT....
8009803231 / 8354021661
D 22&23, PURNIYA CHAURAHA, NEAR MAHALAXMI SWEET HOUSE, SECTOR H, SECTOR E,
ALIGANJ, LUCKNOW, UTTAR PRADESH 226024

MRP:- ₹ 100